Here is Life story of

Greatest woman of the world who won the gretest war in the History

INDIRA GANDHI

(*with pictues*)

By

J. S. Bright

PUBLISHED BY

NEW LIGHT PUBLISHERS

Salwan School Marg,

Old Rajinder Nagar,

NEW DELHI

●—१००० साल तक भारत से लड़ने वालों का क्या हश्र हुआ-?

●●—केवल १४ ही दिनों में पाकिस्तान की कमर कैसे टूट गई-??

●●●—अपने आप को गाजी और मुजाहद कहलाने वालों का शर्मनाक आत्म समर्पण कैसे हुआ-???

●●●●—आखिर पाकिस्तान यह युद्ध क्यों हारा-????

●

यह सब जानने के लिए
आज ही पढ़िए

भारत-पाक युद्ध
(सचित्र)
हिन्दी संस्करण ३)
अंग्रेजी संस्करण ५)
(INDO-PAK WAR)
मराठी संस्करण ३)

●

हर रेलवे तथा बस स्टैण्ड
बुकस्टालों से प्राप्य :

पहली जनवरी से अब तक ३०,००० प्रतियां बिक चुकी हैं

कोमल पॉकेट बुक्स
नवीन स्कूल मार्ग, राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली-६०

विषय-सूची

पहला अध्याय
भारत रत्न इन्दिरा

दूसरा अध्याय
नेहरू परिवार

तीसरा अध्याय
गुड़िया की बलि

चौथा अध्याय
बीमार मां : यूरोप यात्रा

पाँचवाँ अध्याय
वानर सेना

छठा अध्याय
शिक्षा : विश्व की झलक

सातवाँ अध्याय
माता से विछोह

आठवाँ अध्याय
विवाह व दाम्पत्य जीवन

नौवाँ अध्याय
पिता की साथी

दसवां अध्याय
कांग्रेस की अध्यक्ष

ग्यारहवां अध्याय
नेहरू और उनके बाद

बारहवां अध्याय
प्रधानमंत्री इन्दिरा

तेरहवां अध्याय
इन्दिरा : दुबारा प्रधानमन्त्री बनीं

चौदहवां अध्याय

भारत रत्न इंदिरा

भारत रत्न इंदिरा गांधी इस देश के पचास करोड़ लोगों की निर्विवाद नेत्री हैं। वे भारत की तीसरी प्रधानमंत्री हैं और सबसे कम आयु में इस पद पर प्रतिष्ठित हुई हैं। विश्व इतिहास में शायद ही किसी महिला ने इतने ऊँचे पद को प्राप्त कर ऐसी सत्ता प्राप्त की हो। पश्चिम के देश अपने को काफी प्रगतिशील मानते हैं। उन देशों में काफी संघर्ष के बाद ही महिलाओं को पुरुषों के समान राजनैतिक और आर्थिक अधिकार मिले, और इनके बावजूद उन देशों में राजनैतिक क्षेत्र में इस प्रकार के व्यक्तित्व की कोई महिला नहीं दिखाई देती। इसके विपरीत भारत तथा अन्य पूर्वी देशों में अनेकों ऐसी महिलाएँ मिलेंगी जिन्होंने राजदूत, मंत्री और मुख्यमंत्री व राज्यपाल के रूप में प्रभावी कार्य किया है।

प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी मानती हैं कि महिलाएँ अबला नहीं वरन् समाज का महत्वपूर्ण अंग हैं। शायद यही कारण है कि पूर्वी प्रदेशों में महिलाओं को अपने अधिकारों के लिए किसी संघर्ष की जरूरत नहीं होती। वह अपने को मानवतावादी कहती हैं। उनके चारों ओर बचपन से जो वातावरण रहा है उससे उनमें संतुलित दृष्टि से अपनी स्थिति देखने की क्षमता मिली है।

इंदिरा का यह कहना है कि इस भारत देश में कुछ है जो कि यहाँ के लोग निरक्षरता तथा अन्य कई कमियों के बावजूद बड़ी-बड़ी चुनौतियों का सामना कर लेते हैं। भारतीय रहन-सहन और साधारण जनता के जीवन-यापन ढंग से वे अपने को पृथक अनुभव नहीं करतीं; शायद इस कारण ही वह जन-साधारण से काफी एक्य अनुभव करती हैं।

हाल के भारत-पाक संघर्ष में चीन-अमेरिका के विरोधी तथा राष्ट्रसंघ के वास्तविक स्थिति की उपेक्षा के बावजूद वह अपने मार्ग से हटी नहीं और किसी प्रकार की कमजोरी उन्होंने नहीं दिखाई। श्रीमती गांधी ने युद्ध से पहले कूटनीतिक मोर्चे को जिस तरह से संभाला वह अत्यन्त सराहनीय है। पहले उन्होंने राजदूतों को विदेशों में भेजा; फिर भारत के विदेशमंत्री ने इन देशों की यात्रा की और जब उचित वातावरण तैयार हो गया तो भारत का पक्ष समझाने को उन्होंने स्वयं प्रमुख देशों का दौरा शुरू किया। अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी आदि देशों की सरकारों को उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि किसी भू-भाग की सात करोड़ जनता को इस प्रकार दमन का शिकार बनाना अन्याय है। एक करोड़ के लगभग जो शरणार्थी भारत में आ गये हैं उनके कारण यह मामला अब केवल पाकिस्तान का घरेलू मामला नहीं रह गया। भारत के अर्थ और राजनीतिक तंत्र पर इसका गहरा असर पड़ने लगा है। यह अलग बात है कि अपने-अपने स्वार्थों को ध्यान में रखते हुए इन देशों व राष्ट्रसंघ ने इन सब बातों को सुना नहीं।

इतना प्रयास कर सब राष्ट्रों और उनकी प्रतिनिधि संस्था संयुक्त राष्ट्रसंघ को चेतावनी देने के बाद जब स्थिति न सुधरी और पाकिस्तान ने पश्चिमी सीमा पर अकारण आक्रमण बोल दिया तो इंदिरा के नेतृत्व में जैसे भारत ने सफलता प्राप्त की और इस समस्या के मूल को ही नष्ट कर दिया, वह अद्भुत है। इसके बाद भारत की जो प्रतिष्ठा बढ़ी है उसका कोई हिसाब नहीं।

श्रीमती गांधी ने अद्भुत सूझबूझ, दूरंदाजी, साहस का जो प्रदर्शन किया है यह उस वातावरण का परिणाम है जिसमें वे पलीं। जवाहरलाल राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दिनों में अत्यन्त व्यस्त रहते हुए अपनी एकमात्र सन्तान पर काफी प्रभाव डाल सके। पिता और पुत्री एक-दूसरे को और एक-दूसरे के विचारों को अच्छी तरह से समझते थे; आमतौर पर पिता और पुत्री में एक-दूसरे के प्रति इतनी समझ नहीं होती। राजनैतिक विचारधारा, उनकी नेहरू की विचारधारा से काफी मिलती है। उनका समाजवाद ऐसा है जिसमें किसी प्रकार के समझौते की सम्भावना कम है, परन्तु उसमें रूमानियत तो

वैसी ही है जैसेकि उनके पिता के समाजवाद में थी। वह भी अपने पिता की तरह उग्रपंथी समाजवादी नहीं परन्तु निहित स्वार्थों पर उन्होंने बड़ी ही भीषणता से आघात किया है। वे अपने पिता से अधिक प्रगतिवादी और अधिक सुनिश्चित समझी जाती हैं।

मूल रूप में तो इंदिरा नेहरू द्वारा सुझाए समाजवाद के पथ पर चलने-वाली ही हैं। हमारे सामाजिक ढांचे, राजनैतिक जीवन, आर्थिक विकास और हमारे अंतर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का आधार नेहरू की नीतियाँ हैं। श्रीमती गांधी समाजवाद मानती हैं तो इसलिए कि उसके माध्यम से उत्पादन बढ़ेगा और वितरण भी ठीक प्रकार से होगा। उनके लिए यह साधन-मात्र है। समाजवाद पर समाजवाद के लिए ही वह मोहित नहीं न, ही तानाशाही में उनका विश्वास है। उनका मुख्य उद्देश्य तो है 'समानता' को संवैधानिक परिभाषा से बदलकर वास्तविकता में बदलना, जिससे जन-साधारण को राजनैतिक परिवर्तनों से लाभ हो।

समाजवाद को भारत ने चुना इसलिए क्योंकि इसके माध्यम से ही ऐसा करना आसानी से सम्भव था। समाजवाद द्वारा पिछड़े लोगों की सहायता कर उनको ऊपर उठाया जा सकता है। वे यह भी मानती हैं कि भारत जैसे विशाल देश में, जहाँ इतने बड़े पैमाने पर आर्थिक क्रियाशीलता हो रही है; लोगों में गरीबी और अमीरी का इतना बड़ा भेदभाव नहीं रह सकता। राष्ट्रीय-करण को वह समाजवाद लाने का अच्छा माध्यम समझती हैं; इससे अधिक कुछ नहीं। परन्तु यह भी नहीं कि केवल राष्ट्रीयकरण से ही समाजवाद प्राप्त किया जा सकता है। निजी लोग जिन उद्योगों को ठीक प्रकार नहीं चला रहे, उनको तुरन्त सरकार द्वारा चलाने में, उनको किसी प्रकार की झिझक नहीं। वे निजी और सरकारी क्षेत्र के उद्योगों में आपसी मुकाबले को भी जोकि भारत में चल रहा है ठीक नहीं मानतीं। परन्तु इन सबके बावजूद अपने पिता के जमाने में उन्होंने सरकारी खाद्य निगम आदि बनवाए और राज्य सरकार तथा निजी उद्योगों के लिए उत्पादन के स्तर कायम किए। राष्ट्रीय वेतन नीति का निर्धारण भी किया।

अपने जीवन के प्रारम्भिक दिनों में इंदिरा पर कम्युनिस्टों का काफी प्रभाव था। कम्युनिस्ट देशों का दौरा करने के बाद वह कम्युनिज्म के बारे में काफी उत्साह से भरी हुई नजर आती थीं। उन लोगों की संगठन शक्ति की भी सराहना करती हैं। वह वामपंथी आंदोलन के प्रति जनता में जितना आकर्षण है समाजवाद अथवा लोकतंत्र के लिए उतना आकर्षण उनमें नहीं यह वे समझती हैं। अपने पिता की तुलना में वे कुछ अधिक वामपंथी हैं परन्तु पूरी तरह से कम्युनिस्ट कभी नहीं रहीं।

इंदिरा की राजनैतिक विचारधारा अपने पिता की विचारधारा से काफी मिलती-जुलती है। परन्तु उसका अपना अलग व्यक्तित्व है। अपने निर्णय स्वयं लेकर उनको अपनी प्रबल इच्छा शक्ति द्वारा कार्य रूप में परिणित करने का अद्भुत साहस उनमें है। प्रगतिवादी विचारधारा और दृढ़तापूर्वक कार्य करने के कारण ही वह अपने विरोधियों को हर तरह से मात दे देती हैं। उनकी एक विशेषता और भी है, वह यह कि वे अपनी कार्यशैली में काफी लचक रखती हैं। इस प्रकार का उनका दृष्टिकोण राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों ही समस्याओं के प्रति है। वे दूसरों के दृष्टिकोण को भी सुनती हैं और सहानुभूतिपूर्वक सुनती हैं एवं उचित समझने पर उसे कर भी दिखाती हैं।

राजनैतिक क्षेत्र के अलावा सामाजिक क्षेत्र में इंदिरा जी आरम्भ से भाग लेती रही हैं।

इंदिरा की बाल-कल्याण में रुचि रही है। वह भारतीय बाल-कल्याण परिषद की अध्यक्ष हैं। यह गैर-सरकारी संस्था है जो अंतर्राष्ट्रीय बाल-कल्याण संघ से सम्बद्ध है। दिल्ली में उन्होंने 'बाल सहयोग' नामक एक सहकारी संस्था बच्चों के लिए भी चलायी। इसमें बिगड़े बच्चों को सुधारने के लिए रखा जाता है। महिलाओं की अनेक कल्याण संस्थाओं से भी वे सम्बद्ध हैं। इसके अतिरिक्त जन-कल्याण के लिए उन्होंने निरन्तर अनेक कार्य किए। सन् में शरणार्थियों में हिन्दू-मुस्लिम दंगों में महात्मा गांधी की प्रेरणा से उन्होंने शान्ति स्थापना की दिशा में काम किया था। उन्होंने महिलाओं के कार्य

शिविर भी चलाए हैं। चीन के आक्रमण के दौरान उन्होंने जवानों की भलाई के लिए निरन्तर अनेक कार्य किए। इस प्रकार सन् '६५ के भारत-पाक युद्ध के दौरान भी इंदिरा ने मानवीयता के लिए अनेक कार्य किए। वह जन-हित के लिए बनायी अनेक संस्थाओं की ट्रस्टी हैं।

इंदिरा गांधी अपने पिता के प्रधानमंत्रित्वकाल में उनके साथ विदेशों में यात्राओं में जाती रहीं। पेरिस, वाशिंगटन, मास्को और लंदन में उच्च राजनेताओं से वे भली प्रकार परिचित हैं। दक्षिण अफ्रीकी देशों में भी, प्रधानमंत्री पद पर आने से पहले सद्भावना दौरे कर आयी थीं। पिता जवाहरलाल की मृत्यु से पहले वे वाशिंगटन गयीं थीं। वहाँ उन्होंने दौत्याचार की अपनी क्षमता से सबको प्रभावित कर दिया था। इटली सरकार ने उनकी उल्लेखनीय दौत्य-सामर्थ्य को देखते हुए 'इजाबेला डेस्टे' नाम का पुरस्कार भी दिया था।

श्रीमती गांधी ने बड़ी कठिन परिस्थितियों में प्रधानमंत्री पद ग्रहण किया था। जब वे पहले-पहल प्रधानमंत्री बनीं तो उनकी शक्ल से इस देश की जनता अच्छी तरह से परिचित थी परन्तु उनकी कार्यक्षमता से नहीं। ऐसा माना जाता था कि विभिन्न प्रबल गुटों में जो आपसी खींचतान है उनमें समझौते के रूप में श्रीमती गांधी को यह पद दिया गया है। राजनीतिज्ञ समझते थे कि वे तो नाममात्र को ही इस पद पर रहेंगी, वास्तव में दूसरे लोग ही सत्ता अपने हाथ में रखेंगे। परन्तु उन्होंने इस पद पर वह काम कर दिखाया जो शायद उनके पिता भी न कर सके थे; उनसे भी अधिक कुशल प्रशासक वह सिद्ध हुईं। व्यावहारिक राजनीति में भी वे अधिक समर्थ सिद्ध हुईं। देश को जिस मार्ग की ओर ले जाने की आवश्यकता थी उस ओर बिना किन्हीं बाधाओं की परवाह कर, वे ले चलीं।

श्रीमती गांधी की सफलता का कारण यह है कि वे समय को बहुत अच्छी तरह से समझती हैं। जनता से उनका सम्पर्क है। उनकी भावनाओं को वह आसानी से समझ पाती हैं। पुरानी परम्पराओं के प्रति उनमें मोह इतना नहीं कि प्रगतिवादी कदम उठाने में वे किसी प्रकार झिझकें। समस्या समझकर

उसे सीधे हल करने की ताकत उनमें है। वह अधिक वादों के चक्कर में नहीं पड़तीं। सीधी बात समझती हैं। सहयोगियों का विश्वास प्राप्त कर उनको वह अपने मत का बना लेती हैं।

श्रीमती इंदिरा गांधी पर आरोप लगाया जाता है कि वे अवसरवादी हैं। कांग्रेस विभाजन से पहले इस प्रकार का जोरों से प्रचार किया जा रहा था। परन्तु पिछले कुछ वर्ष में बंगला देश के बारे में जो काम उन्होंने किया है उससे यह उनके आरोप गलत सिद्ध होते हैं। दो बातें अब बहुत स्पष्ट हुई हैं। एक तो यह कि उनमें राजनैतिक दूरदर्शिता पूरी है और जनता की नब्ज वे और किसी भी राजनेता की तुलना में अधिक अच्छे ढंग से जानती हैं। दूसरी, अवसरवादी वह नहीं हैं, यह इस बात से स्पष्ट है कि उन्होंने गद्दी की परवाह न करते हुए दुबारा चुनाव करवाए और जनता का विश्वास पुनः प्राप्त किया।

बंगला देश में जो सैनिक कार्रवाई की गयी, वह उल्टी भी पड़ सकती थी। परन्तु उन्होंने अपनी संघर्ष भावना से जो उनमें है, नयी चुनौतियों का बड़ी हिम्मत से सामना किया। युद्ध के बाद उन्होंने देश को इसी संदर्भ में कहा था कि वह और संघर्ष के लिए तैयार रहें।

'गरीबी हटाओ और समाजवाद लाओ' इंदिरा का नारा है अभी उस तरफ उनको संघर्ष करना है और अपने देश को आत्मनिर्भर बनाकर नयी ऊँचाइयों पर ले जाना है।

दूसरा अध्याय

नेहरू परिवार

राजकौल अठारहवीं शताब्दी में कश्मीर के एक प्रतिभाशाली पंडित थे। उनका संस्कृत और फारसी पर समानरूप से अधिकार था। इन्हीं पंडित राजकौल की विद्वता से प्रभावित होकर मुगल सम्राट फरखुरसियर ने उनको दिल्ली आमंत्रित किया। मुगल सम्राट का परिचय उनसे कश्मीर यात्रा के दौरान हुआ था और उनसे प्रभावित होकर उसने उनको दिल्ली बुलाने का निर्णय किया था।

दिल्ली में राजकौल का शाही दरबार की ओर से भारी स्वागत किया गया और उनको निवास के लिए भूमि दी गयी। यह स्थान नहर के निकट होने के कारण वहाँ पर रहनेवाला परिवार कौल-नहर कहलाने लगा और समय बीतने के साथ नेहरू में बदल गया।

सन् सत्तावन के स्वातंत्र्य युद्ध के बाद मुगल साम्राज्य समाप्त होने पर भारत में ब्रिटिश साम्राज्य स्थापित हो गया। राजकौल के वंशज इस सारी अवधि में दिल्ली में रहे और यहाँ पर ही फलते-फूलते रहे। उनके एक वंशज पंडित लक्ष्मीनेहरू ने ईस्ट इंडिया कम्पनी में वकील के रूप में काम किया। ईस्ट इण्डिया कम्पनी वही व्यापारिक संस्थान था जिसने भारत में व्यापार के माध्यम से ब्रिटिश प्रभुत्व पैदा किया और कालांतर में ब्रिटिश साम्राज्य स्थापित कर दिया। उनके पुत्र पंडित गंगाधर नेहरू दिल्ली के पुलिस आयुक्त बनाये गये।

सन् सत्तावन के स्वातंत्र्य युद्ध के दौरान नेहरू परिवार दिल्ली की अपनी सारी सम्पत्ति बेचकर आगरा बसने चला गया। सन् १८६१ में जब पंडित

गंगाधर नेहरू की मृत्यु हुई उस समय नेहरू परिवार आगरा में ही बसा हुआ था। मृत्यु के सात महीने बाद एक पुत्र का जन्म उनके यहाँ हुआ। ये पुत्र थे मोतीलाल नेहरू जो जवाहरलाल नेहरू के पिता और श्रीमती इन्दिरा गांधी के पितामह थे। गंगाधर नेहरू के एक अन्य पुत्र को इलाहाबाद हाईकोर्ट में नियुक्ति मिली जिसके कारण इस परिवार को वहाँ पर बसने के लिए जाना पड़ा।

मोतीलाल नेहरू बाल्यावस्था में ही अंग्रेजी भाषा के प्रति आकर्षित हो गये थे। उनकी कालेज की शिक्षा इलाहाबाद के म्योर कालेज में हुई। वहाँ उन्होंने अरबी, फारसी के अलावा भारतीय कानून की शिक्षा भी ग्रहण की। बाद में उन्होंने अपनी वकालत शुरू की और इस क्षेत्र में प्रसिद्धि प्राप्त करके खूब धन कमाया। मोतीलाल बड़े रईसी ठाठ से रहते थे। उनकी शानो-शौकत की कहानियाँ खूब प्रचलित थीं। मोतीलाल नेहरू में पाश्चात्य और पूर्वी संस्कृति का अनोखा मेल था। वह बड़े ढंग से रहने के शौकीन थे और अच्छा खाना और अच्छा पीना उन्हें पसंद था। बातचीत में भी बड़े कुशल-बातचीत थे। उनके और उनके परिवार के बारे में यह मनगढ़ंत कहानी फैल गयी थी कि उनके कपड़े पेरिस से धुलकर आते हैं। मोतीलाल बड़े रोब-दाब वाले व्यक्ति थे। जीवन का भरपूर आनन्द उठाते थे। वह एक राजा की तरह शानो-शौकत से रहते थे। उनका घर एक महल के समान दिखाई देता था। इस प्रकार ऐश्वर्यमय जीवन व्यतीत करनेवाले मोतीलाल अपनी वकालत में ही व्यस्त रहते। राजनीति में उनकी रुचि कतई न थी और न ही इसके लिए उनके पास समय था।

भारत में उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में सामाजिक सुधार की लहर व्याप्त थी। राजनीतिक क्षेत्र में थोड़ी हलचल शुरू हो चुकी थी। सन् सत्तावन के स्वातन्त्र्य युद्ध के बाद अंग्रेजों ने भारतीय जनता पर भयंकर अत्याचार किए थे जिससे जनता चकित रह गयी थी परन्तु अब फिर जन-साधारण के मन से भय दूर होना शुरू हो गया था। लोग अपनी मनोभावनाएँ व्यक्त करने

लगे थे। इसीके परिणामस्वरूप सन् १८८५ में अखिल भारतीय कांग्रेस की स्थापना हुई। बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में इस मंच के माध्यम से भारत के अनेक सपूतों ने अपने विचारों और उनके द्वारा जनता की भावनाओं और आकांक्षाओं को व्यक्त करना आरम्भ कर दिया था। इन लोगों में प्रमुख थे दादा भाई नारोजी, बालगंगाधर तिलक और गोपालकृष्ण गोखले। महात्मा गांधी ने सन् १९१५ के लगभग भारत के राजनीतिक जगत में प्रवेश किया।

महात्मा गांधी भारतीय राजनीति के क्षितिज पर एक देदीप्यमान नक्षत्र की भाँति उदित हुए थे, उनके आने के साथ ही नए युग का सूत्रपात हुआ। भारत को स्वतन्त्रता दिलवाने के लिए उन्होंने एक नए शब्द 'सत्याग्रह' का प्रतिपादन किया। इसका शाब्दिक अर्थ तो है 'सत्य के प्रति आग्रह' परन्तु व्यवहार में इसने और ही रूप लिया। गांधीजी ने अहिंसात्मक ढंग से निहित [illegible] में असहयोग और अवज्ञा को ही सत्याग्रह की संज्ञा दी। उन्होंने निर्धन और धनी सभी वर्गों के और हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख, बुद्ध और जैन सभी धर्मों के लोगों को अपने साथ लिया और राष्ट्रीय चेतना जनता में [illegible]।

सन् १९२० के लगभग मोतीलाल नेहरू भी [illegible] के प्रभाव में आए। इसके बाद वे भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में [illegible] हो गए। अन्त में स्थिति यह हुई कि उन्होंने अपनी वकालत छोड़ दी और अपनी अधिकांश सम्पत्ति को स्वतन्त्रता आन्दोलन की भेंट चढ़ा दिया। [illegible] के चरणचिन्हों पर चलते हुए उन्होंने अपनी आराम की जिन्दगी को तिलांजलि दे दी और अत्यन्त अनुशासित और संयमित जीवन व्यतीत करने लगे।

इस स्वतन्त्रता संग्राम में पंडित मोतीलाल नेहरू [illegible] में गिरफ्तार हुए। उसके बाद जीवन के [illegible] अवधि के लिए उन्होंने कैद काटी। जेल के भीतर हो [illegible] ही देश की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने में वे [illegible]। [illegible] जान से स्वतन्त्रता-संघर्ष में कूद गये थे पर विचारों की दृष्टि से वे [illegible] न थे जितने उनके पुत्र जवाहरलाल।

जवाहरलाल नेहरू का जन्म अत्यन्त समृद्ध परिवार में हुआ था। मोतीलाल उस समय महल के समान भव्य व विशाल भवन में निवास कर रहे थे। बाल्यावस्था में नेहरू इस बड़े भवन में एकाकी थे और उनकी आयु के बच्चे वहां नहीं थे। उनकी बाल्यावस्था की कोई उल्लेखनीय घटना नहीं। घर में पिता के मित्रों का आना-जाना लगा रहता था। बालक नेहरू का काफी समय इन बड़े लोगों के वार्तालाप सुनने में ही जाता था। बालक जवाहर उन लोगों की बातों को पूरी तरह से तो समझ नहीं पाते थे; परन्तु उनको यह पता अवश्य चल जाता था कि ये बुजुर्ग अंग्रेजों तथा यूरोपियन लोगों के भारतीयों के साथ किए दुर्व्यवहार की चर्चा कर रहे होते हैं। संवेदनशील बालक जवाहरलाल इन बातों को सुनकर व्याकुल हो जाता और उसके मन में अंग्रेजों के प्रति तीव्र घृणा का भाव भर जाता।

हर सायंकाल मोतीलाल की विशाल मित्र-मंडली उनके घर में एकत्र हुआ करती थी। जवाहरलाल उसमें बैठ नहीं सकता था। वह पर्दे के पीछे से अपने पिता और नवागंतुकों को निहारा करता। एक बार उसने अपने पिता और उनके मित्रों को लाल अंगूरी शराब पीते देखा। उसने ह्विस्की तो देखी हुई थी। परन्तु यह लाल शराब उसके लिए नयी थी। वह तुरन्त भागा हुआ अपनी माँ के पास पहुँचा और भयभीत स्वर में बोला : "माँ, माँ पिताजी तो खून पी रहे हैं।"

बालक जवाहरलाल के मन में अपने पिता के लिए गहरे सम्मान और प्रशंसा का भाव था। वह अपने पिता के रोबदाबवाले व्यक्तित्व से भी बड़ा प्रभावित था। मन में वह कल्पना किया करता था कि किसी दिन वह भी उनके ही समान बड़ा होकर के वैसा ही बन सकेगा। वैसे पिता से बालक जवाहर डरता भी बहुत था। मोतीलाल नेहरू बड़ी गुस्सैल तबीयत के आदमी थे। जब जवाहरलाल पाँच या छह बरस की आयु के ही थे कि एक दिन उसने अपने पिता की काम करने की मेज पर दो सुन्दर पैन रखे देखे। बालक नेहरू उनको लेने का लोभ संवरण न कर सका। उसने यह सोचकर, उनमें से एक

उठा लिया कि पिताजी एक साथ दोनों कलमों से तो काम करेंगे नहीं। मोतीलाल नेहरू ने जब एक कलम गायब पाया तो उन्होंने उसकी बहुत खोज करवाई। जवाहर ने जब उस कलम के बारे में इतनी खोज होते देखी और इतना शोर-शराबा सुना तो वह डर के मारे यह भी न बता सका की कलम उसने ही उठाई है। अन्त में कलम ढूंढ ली गयी और साथ ही अपराधी का भी पता चल गया। बालक जवाहर की बुरी तरह से पिटाई हुई। उसे इतनी बुरी तरह से पीटा गया था कि अनेक दिनों तक माता उसके शरीर पर लगी चोटों पर मरहम लगाती रही। बाद में समय बीतने के साथ धीरे-धीरे शरीर के घाव तो ठीक हो गये परन्तु मन पर इसका जो प्रभाव हुआ वह देर तक बना रहा।

पिता के स्वभाव की इस कठोरता के बावजूद बेटे जवाहर के मन में उनके प्रति दुर्भावना नहीं थी। बचपन से ही जवाहरलाल का कुछ ऐसा स्वभाव था कि वह अपने प्रति किए किसी भी व्यवहार को भूलकर उदार भावना बनाए रख सकता था। बाप और बेटे में स्वभाव की विपरीतता के बावजूद एक-दूसरे के प्रति बड़ा प्रेम था। स्वतन्त्रता संग्राम के दिनों में तो दोनों में और भी निकटता आ गयी थी। एकसाथ काम करने में उनको तृप्ति और आनन्द की प्राप्ति होती थी। बाद में जवाहरलाल के बड़े होने पर आपसी संबंधों में एक विशेष प्रकार की मृदुता पैदा हो गयी थी।

जवाहरलाल का अपनी माता से भी बड़ा लगाव था। इसके अलावा परिवार के जिस अन्य व्यक्ति ने जवाहरलाल को आकर्षित किया था वह थे मुंशी मुबारकअली। वे मोतीलाल के मुंशी थे; परन्तु घर के सदस्य के रूप में ही उनसे व्यवहार किया जाता था। मोतीलाल उनको अपना बड़ा भाई मानते थे। मुंशी मुबारकअली बालक जवाहर को 'अरेबियन नाइट्स' तथा अन्य ईरानी ग्रंथों की रोमांस-भरी कहानियां सुनाया करते थे और जवाहरलाल बड़े मुग्ध-भाव से उनको सुना करते थे। रामायण, महाभारत तथा हिंदू धर्म की अन्य पौराणिक गाथाएं जवाहर को मां से सुनने को मिला करती थीं।

घर में अनेक त्यौहार मनाए जाते थे। परन्तु जिस उत्सव का सबसे अधिक

महत्त्व था वह तो था बालक जवाहर का जन्म दिवस। उस दिन नए सुन्दर कपड़े पहनाकर उसे खूब सजाया जाता था। अनेक प्रकार के उपहार उसे मिलते थे। दान-पुण्य भी खूब किया जाता था। जवाहर के वजन के बराबर अनाज तथा अन्य वस्तुएँ तोल-तोलकर निर्धनों में बांटी जाती थीं। इसके बाद बड़ी शानदार पार्टी का आयोजन होता था और तरह-तरह के लोग जवाहर को आशीर्वाद देते थे। यह सब उस भोले बालक को सुखद और उत्तम लगता था।

विवाहों के अवसर भी बालक जवाहर के बाल्यकाल में विशेष उल्लेखनीय थे। दूर-दूर स्थानों पर परिवार के अन्य लोगों के साथ जवाहर को शादियों में भाग लेने के लिए जाना होता था। इन अवसरों पर खर्चा भी खूब खुलकर किया जाता था। पैसा पानी की तरह बहाया जाता था। काफी-काफी देर बाद सम्बन्धियों का आपस में मेल-मिलाप होता था, इस कारण वे बड़े प्रेम और सद्भाव से मिलते थे। सब बड़ी मौज में बातचीत करते और मजे ले-लेकर समय काटते थे।

बालक जवाहर दस वर्ष के थे तो नेहरू परिवार ने अपना निवास स्थान बदल लिया। नए घर का नाम था आनन्द भवन। वहां पर सुख-सुविधाओं की पूरी व्यवस्था थी; यहां तक कि उसमें एक तैरने का तालाब भी था। शायद भारत में पहला वह भवन था जहां पर इस तरह की सुविधा उपलब्ध थी। बालक नेहरू को इस तालाब में तैरने का बड़ा आनन्द आता था। उसके पिता के अनेक साथी भी वहां पर प्रति सायं मनोविनोद के लिए आया करते थे। उनमें से कुछ वृद्ध और बुजुर्ग ऐसे भी थे जिनको तैरना बिल्कुल नहीं आता था। वे पानी में उतरने से बहुत कतराते थे। ऐसे ही एक व्यक्ति थे सर तेज-बहादुर सप्रु। बालक नेहरू को श्री सप्रु तथा अन्य लोगों को तंग करने में बड़ा मजा आता था। वह अचानक ही आकर पानी के छींटे उनपर डालते और उनको तालाब में उतर आने और खींचकर परेशान करते थे।

आनन्द भवन में आने के कुछ समय बाद जवाहर को पढ़ाने के लिए एक अध्यापक की नियुक्ति की गयी। इस शिक्षक महोदय का नाम था फर्डीनांड

टी० ब्रुक्स। वह लगभग तीन वर्ष तक जवाहरलाल को पढ़ाते रहे। उन संपर्क से जवाहरलाल को पढ़ने का शौक पैदा हुआ और निरन्तर जीवन-भर ब रहा। बाद के उनके जीवन पर इसका प्रभाव भी बहुत पड़ा। इस अवधि विज्ञान के प्रति भी उनकी रुचि पैदा हुई। ब्रुक्स ने किशोर जवाहरलाल लिए छोटी-सी प्रयोगशाला भी बनायी।

ब्रुक्स थियोसिफिस्ट थे और इस मत को माननेवाले उनके यहाँ सप्त में एकबार एकत्र हुआ करते थे। वे आपस में विचार-विमर्श किया करते थे जवाहरलाल को उनकी बातों की पूरी समझ न आती थी। परन्तु फिर तेरह वर्ष की आयु में उन्होंने थियोसिफिस्ट सोसाइटी में प्रवेश लिया। ऐ उन्होंने श्री ब्रुक्स के प्रभाव में ही किया। और जब उनसे संपर्क टूट गया सोसाइटी में से और अधिक सम्बन्ध उनका न रहा। बाद के सारे जीवन कभी उनका इससे फिर वास्ता नहीं रहा।

पन्द्रह वर्ष की आयु में जवाहरलाल लन्दन के 'हैरो' स्कूल में दाखिल कर दिए गये। वहाँ पर पढ़ाई में वह ठीक थे और उनका समय अच्छा ही कटा परन्तु स्कूल में वह कुछ अपनापन महसूस नहीं कर सके। न ही पूरी तरह वहां उनका मन रम सका। वह अनिवार्य खेलों में भी भाग लेते थे। यद्य वे खेलों में बहुत अच्छे नहीं थे परन्तु फिर भी अपनी पूरी कोशिश तो करते थे। कुछेक छोटे-मोटे इनाम भी खेलों में उन्होंने जीते। पुरस्कारस्वरूप उन गैरीबाल्डी का जीवन-चरित्र भी मिला। उनको यह पुस्तक बहुत अच्छी लग और इसका खूब अध्ययन उन्होंने किया।

स्कूल में शिक्षा समाप्त कर उन्होंने कैम्ब्रिज के ट्रिनिटी कालेज में प्रवे किया। वहाँ तीन वर्ष तक उन्होंने अध्ययन किया। यहाँ पर काफी मौज दिन उन्होंने काटे। पिता काफी धन खर्चे के लिए भेजते थे। कालेज जवाहरलाल ने रसायन भूगर्भ विज्ञान और वनस्पति विज्ञान का अध्ययन किया एक वाद-विवाद सभा की भी उन्होंने सदस्यता ग्रहण की; परन्तु तबीय शर्मीली होने के कारण वे शायद ही कभी इसमें बोले हों। इस सभा का नियम था कि जो सदस्य कुछ निश्चित अवधि में इसमें भाषण नहीं करेगा उसको कुछ

राशि दण्ड में देनी होगी। जवाहरलाल प्रायः दण्ड ही दिया करते थे। सन् १९१० में जवाहरलाल ने स्नातक की उपाधि ली और कैम्ब्रिज से चले आए। बाद में वह यूरोप में भ्रमण के लिए चले गये। इस अवधि में एक बार तो वह मृत्यु के मुख में जाने से बाल-बाल बचे। नार्वे की एक घटना है। वह जिस होटल में ठहरे हुए थे वहाँ पर स्नानागार नहीं था। अपने एक साथी को ले निकट बहते नाले में नहाने के लिए वह चले गये। जवाहरलाल ने उस नाले के फिसलन-भरे तल पर पांव रखा। पांव रखते ही वह फिसल गये और पानी में जा गिरे। पानी बहुत ठण्डा था। उनके सारे अंग सुन्न पड़ गये और हिलना डुलना भी सम्भव न रहा। वह नदी की तेज धारा में बह गये। परन्तु सौभाग्य की बात कि उनके मित्र ने उनको उस स्थान पर पकड़ लिया जहाँ से दो-तीन सौ गज आगे एक विशाल गड्ढा था। यदि जवाहरलाल को जल वहाँ तक बहकर ले जाता तो उनकी मृत्यु निश्चित थी। इस प्रकार भारत के इस महापुरुष की रक्षा उसके एक अंग्रेज दोस्त ने की।

इसके बाद आगामी दो वर्ष तक जवाहरलाल ने लंदन में वकालत का अध्ययन किया। वह इनर-टैम्पल के सदस्य थे। वहाँ से परीक्षा पास करने के बाद जवाहरलाल १९१२ में भारत लौट आए और इलाहाबाद हाई कोर्ट में वकालत शुरू की।

उनको एक पत्र में मोतीलाल ने लिखा था : "मेरा इतना कुछ तुम्हारी पढ़ाई के बारे में प्रयास करने का उद्देश्य एक ही है कि मैं तुम्हें एक सच्चा आदमी बना दूं। और मुझे विश्वास है कि तुम सच्चे अर्थों में एक आदमी बनोगे भी।" आगे उन्होंने यह भी लिखा : "मेरी यह गर्वोक्ति नहीं होगी यदि मैं कहूँ कि नेहरू परिवार के भाग्य की नींव मैंने रख दी है और प्यारे बेटे मैं तुमसे यह आशा लगाए हुए हूं कि इस नींव पर तुम बहुत ही भव्य भवन बनाओगे। मुझे इस बात का संतोष है कि इस नींव पर एक ऐसा उत्तम भवन बनेगा जो आकाश की ऊंचाइयों को छूएगा।" जवाहरलाल ने अपने पिता की इस महत्त्वाकांक्षा को उस सीमा तक पूरा किया

जिसकी आशा उसके पिता को भी नहीं थी। इस शताब्दि के उत्तरार्द्ध में सारे विश्व में इस पुत्र की ख्याति फैली हुई थी।

मोतीलाल नेहरू को आशा थी कि इंगलैंड से उत्तम शिक्षा पाने के बाद स्वदेश लौटकर जवाहरलाल वकालत में खूब सफलता प्राप्त करेगा और ऐश्वर्य में जीवन व्यतीत करेगा। परन्तु देश में कुछ ऐसी राजनैतिक परिस्थितियाँ पैदा हुईं जिनके कारण मोतीलाल नेहरू की ये आकांक्षाएँ पूरी नहीं हुईं। जनता में स्वतन्त्रता पाने की ललक धीरे-धीरे ज़ोरदार रूप धारण कर रही थी। ऐनी बेसेंट आदि पुरोगामी नेताओं ने 'होम रूल' की माँग कर राष्ट्र चेतना को जगा दिया था। इससे ब्रिटिश सरकार चिंतित हो उठी थी। उन्होंने इस स्वतन्त्रता आन्दोलन को दबाने के लिए 'रोलैट एक्ट' आदि दमनकारी कानून पारित किए। इसी दमन नीति के परिणामस्वरूप जलियांवाला बाग का हत्याकांड हुआ। लगभग पांच सौ व्यक्तियों को पुलिस और सेना ने गोलियों से भूनकर मौत के घाट उतार दिया। इस हत्याकांड से देश में आतंक की लहर दौड़ गयी। दरअसल कुछ हद तक इस दुर्घटना ने स्वतंत्रता-संघर्ष को नया बल प्रदान किया। जवाहरलाल ने अपना जीवन देश की जनता को गुलामी के जुए से मुक्त करवाने के लिए समर्पित करने का फैसला किया। समय बीतने पर पिता भी पुत्र के पीछे-पीछे इसी मार्ग पर चल पड़े।

जवाहरलाल के इंगलैंड से लौटने के तुरन्त बाद पिता ने पुत्र के विवाह की बात सोचनी शुरू की। परम्परानिष्ठ कश्मीरी ब्राह्मण कौल परिवार की सुन्दरी कन्या कमला को मोती ने अपनी पुत्रवधू बनाना पसन्द किया। कमला की आयु उस समय केवल सत्रह वर्ष की थी। वह अत्यन्त श्रद्धालु और धार्मिक प्रकृति की युवती थी।

कमला संयुक्त नेहरू परिवार की सदस्या बन गयी और आनन्द भवन में रहने लगी। जवाहरलाल की छोटी बहन स्वरूपकुमारी (बाद में विजय लक्ष्मी पंडित के नाम से जिन्होंने बड़ी ख्याति अर्जित की) भी परिवार में थीं। सोलह वर्षीया स्वरूप को कमला का आना अधिक न रुचा। [illegible] के आने से पहले स्वरूप ही घर के सब सदस्यों की आँखों का तारा [illegible]

थी; परन्तु अब सबके आकर्षण का केंद्र कमला बन गयी थी। मोतीलाल नेहरू भी उसे खूब पसन्द करते थे। इससे स्वरूप के मन में कमला के प्रति कुछ ईर्ष्या पैदा हो गयी। स्वरूप और उससे छोटी बहिन कृष्णा पश्चिमी ढंग के कपड़े पहनती थीं और उनका रहन-सहन बिल्कुल पश्चिमी ढंग पर था। कमला इस प्रकार के रहन-सहन के तरीकों से अनभ्यस्त थी। शुरू-शुरू में कुछ असुविधा भी उसे वहाँ पर हुई, परन्तु अन्त में उसने अपने को नयी परिस्थितियों में ढाल लिया।

तीसरा अध्याय

गुड़िया की बलि

जवाहरलाल और कमला की प्रथम संतान इंदिरा का जन्म १९ नवम्बर १९१७ को आनन्द भवन में हुआ। यह वर्ष अत्यन्त घटनापूर्ण था। प्रथम महायुद्ध अपनी पूरी भीषणता पर था; रूस में क्रान्ति शुरू हो चुकी थी। यह ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना थी जिसने इस शताब्दि के राजनीतिक क्षेत्र पर भारी प्रभाव डाला था। भारत में महात्मा गांधी के नेतृत्व में स्वतन्त्रता आन्दोलन बल पकड़ रहा था।

जवाहरलाल अपनी प्रथम संतान को देखकर इतने आनन्दित हुए कि उन्होंने उसे 'प्रियदर्शनी' कहना शुरू कर दिया। प्रियदर्शनी का अर्थ होता है जो देखने में प्रिय लगे। कवियित्री सरोजनी नायडू ने इस सुन्दर शिशु को देखकर उसे 'भारत की आत्मा' कहा। कवियित्री के शब्दों में, मैंने तो ऐसा आत्माभिमानी बच्चा नहीं देखा।

प्रियदर्शिनी

इंदिरा के जन्म पर घर के वृद्ध सदस्य मुंशी मुबारिकअली की प्रसन्नता का ठिकाना न था। वह काफी समय से कैंसर से पीड़ित थे। मोतीलाल से वह कहा करते थे कि जवाहर के पुत्र को देखे बिना और हाथ में ले आशीर्वाद दिए बिना मैं मरने का नहीं। इंदिरा के जन्म पर उनके दिल की इच्छा पूरी हुई थी। जब रोग-शैया पर पड़े मुबारिकअली के पास नवजात शिशु को ले जाया गया तो बाहों में लेकर हर्ष-अश्रुपूरित आँखों से वह मोतीलाल से बोले: "अल्लाह करे यह छोटा बच्चा जवाहर का सच्चा उत्तराधिकारी बने, जैसे

जवाहर तुम्हारा उपयुक्त उत्तराधिकारी सिद्ध हुआ है। अल्ला इसको अपनी मेहर दे।" और नवजात शिशु को वापस मां के पास ले जाया जा रहा था तो बारिकअली कह रहे थे : "अल्लाह करे मोतीलाल का पोता नेहरू खानदान का नाम रोशन करे।" इससे पहले कि मुंशी मुबारिकअली की यह गलत-फहमी दूर की जा सके कि वह लड़का नहीं बल्कि लड़की है उनपर बेहोशी आने लगी, बाद में इतना होश उनको कभी नहीं आया कि वह यह जान लेवें कि नया बच्चा लड़की है न कि लड़का। खैर, बाद में इस शिशु ने जो कर दिखाया है वह तो ऐसा काम है कि लड़के से भी किया जाना कठिन होता। शायद इससे कोई फरक नहीं पड़ा, वृद्ध का आशीर्वाद खूब सफल हुआ।

इंदिरा को आनन्द भवन में जो बचपन मिला यह खुशियों और पीड़ाओं से भरा हुआ था। इंदिरा अत्यन्त संवेदनशील बच्ची थी। बूआ स्वरूपरानी की ईर्ष्या के कारण जो कष्ट उसकी माता कमला को होता था उसको वह भली प्रकार समझ पाती थी। कमला जब परिवार में आयी उस समय स्वरूप की आयु केवल सोलह वर्ष की थी; उसमें जो ईर्ष्या की भावना पैदा हुई उसे वह काबू में न रख पाती थी। जवाहरलाल उन दिनों राजनीतिक कार्यों में डूबे रहते थे। उनके पास इतना समय नहीं रहता कि अपनी पत्नी की पीड़ाओं को और मानसिक घुटन को समझें अथवा उसे कुछ कम करने में सहायक बनें। परन्तु इंदिरा अपनी छोटी आयु के बावजूद भांप लेती कि उसकी मां कितनी मानसिक पीड़ा में से गुजर रही है, हर रोज सांयकाल घंटों अपनी मां के साथ उसके कमरे में बैठकर उसकी पीड़ाओं की सहभागी बनती। मां और बेटी में आपस में बहुत बनती थी; वे एक-दूसरे के मन को बहुत अच्छी तरह से समझती थीं। मां की मानसिक व्यथा को कुछ सीमा तक कम करने में सहायक भी वह होती थी। शायद उसी समय के अनुभवों का परिणाम है कि इंदिरा का मन और लोगों की पीड़ाओं के प्रति बड़ा संवेदनशील है। तभी उसका यह स्वभाव बना है कि वह किसीसे कड़वा नहीं बोल सकती। इंदिरा का स्वभाव बड़ा संतुलित है: करुणा-भरे दिलवाले पिता जवाहरलाल नेहरू की भांति सार्वजनिक रूप से क्रुद्ध वह कम ही होती है।

ऐसा नहीं कि इंदिरा का बचपन विषादमय वातावरण में ही गुजरा हो। दीवाली, दशहरा और होली आदि त्यौहारों पर सारा घर खुशी के वातावरण से भर जाता था; ये उत्सव बड़े उत्साह से मनाये जाते थे। इन हिन्दू उत्सवों के अतिरिक्त मुहर्रम और ईद आदि मुस्लिम त्यौहारों के अवसर पर भी घर में खूब चहल-पहल हो जाती थी। कश्मीरी ब्राह्मणों में कुछ ऐसे भी त्यौहार मनाए जाते हैं जो अन्य आम हिन्दुओं में नहीं मनाए जाते। ऐसा ही एक त्यौहार था 'नौरोज'। यह संवत वर्ष का पहला दिन होता है। इस दिन सारे घर में बच्चों और बड़ों में मिठाइयां बांटी जाती थीं; घर के सब लोग नए-नए कपड़े पहनते थे। बच्चों को पैसे भी दिए जाते। उनको खिलौने तथा अन्य उपहार भी मिलते। छोटे बच्चों के लिए यह दिन अपना खास महत्त्व रखता।

राजनीति से इंदिरा का बचपन से ही लगाव रहा है। दादा मोतीलाल नेहरू जब अपने साथियों से राजनीतिक विचार-विमर्श कर रहे होते तो आम-तौर पर बच्ची इंदिरा उनकी गोद में खेल रही होती। जब वह चार वर्ष की थी तो उसके दादा मोतीलाल और पिता जवाहरलाल पर इलाहाबाद के न्यायालय में मुकदमा चलाया गया। उनपर आरोप यह था कि उन्होंने स्वतन्त्रता के बारे में कांग्रेस के पर्चे लोगों मे बांटे हैं। आमतौर पर इंदिरा के पिता और दादा या तो राजनैतिक कार्यों में व्यस्त होते और या जेल में होते थे; तब बच्ची इंदिरा अकेली ही घर में होती थी। आस-पास के वातावरण का उसके बाल-मन पर ऐसा प्रभाव पड़ रहा था कि अपनी गुड़ियों से खेलते समय वह उनमें कुछ को तो पुलिस बना देती और शेष को जनता। स्वयं जनता के सामने भाषण करके यह प्रेरणा देती कि वे राष्ट्र को गुलामी से छुड़ाने के लिए अपने को गिरफ्तार करवाएँ और जेल में जाएँ। बालिका इंदिरा बार-बार देखती कि उसके पिता और दादा को जेल ले जाया जाता है। इससे उसको बड़ी परेशानी भी होती थी। अपने घर की अधिकांश वस्तुओं को पुलिस द्वारा ज़ब्त होते देखकर भी उसके मन पर गहरी चोट लगती।

वह उससे बहुत चिढ़ जाती थी। उसे यह तो अच्छी तरह से कोई समझाने-वाला रहता नहीं था कि ऐसा क्यों हो रहा है! इस बारे में जवाहरलाल नेहरू ने अपनी आत्मकथा में लिखा है: "कांग्रेस की नीति यह थी कि सरकार को जुर्माने न दिए जायें। इसलिए पुलिस कई बार हमारे यहां आती और घर का फर्नीचर आदि उठाकर ले जाती। उस समय मेरी चार बरस की बच्ची इन्दिरा बड़ी क्रुद्ध होती कि सामान क्यों ले जाया जा रहा है। उसने पुलिस से विरोध भी किया और इस बात पर अपनी अप्रसन्नता भी जाहिर की। मुझे खेद है कि बच्ची के मन में बहुत छोटी आयु में जो असर पड़ गये हैं उनके कारण भावी-जीवन में पुलिस के बारे में उसकी धारणा ठीक नहीं रह पायेगी।"

आनन्द भवन में इन्दिरा को खेल के लिए बालसाथी नहीं मिलते थे। तब उसका सबसे मनपसंद काम यही था कि एक ऊँची मेज पर खड़ी हो जाती और उसके चारों ओर घर के नौकर इकट्ठे कर लेती थी और वहां पर जोरदार राजनैतिक भाषण करती। खेलने के साथी होते नहीं थे इसलिए वह अपनी गुड़ियों को एकत्र कर लेती और उन्हें प्रेरणा देती कि वे सत्याग्रह किसलिए और कैसे करें। कुछ दूसरी गुड़ियाएं इन प्रदर्शनकारियों को पकड़-कर जेल ले जातीं।

नेहरू परिवार का विशाल और राजसी निवास स्थान आनन्द भवन भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का मुख्य केन्द्र बन गया था। महात्मा गांधी, मदनमोहन मालवीय, आजाद, सरोजनी नायडू और अन्य नेता प्रायः वहां पर आते रहते थे। बचपन में ही इंदिरा इन महान् व्यक्तियों के सम्पर्क में आ गई थी। इसमें शक नहीं कि जीवन के उस भाग में जबकि मन पर असर जल्दी हो जाया करता है इन महान् व्यक्तियों के सम्पर्क में आने पर उसके मन पर गहरा प्रभाव पड़ा होगा। घंटों उसे राजनैतिक वार्ताओं को सुनने का मौका मिलता था। जब वह इस प्रकार की बातें सुनती थक जाती तो नौकरों को इकट्ठा करके आप एक ऊँची मेज पर बैठ जाती और इन बैठकों में जो बातें सुनती उनको ही अपनी टूटी-फूटी जबान में नौकरों को सुनाकर उसके मुताबिक कार्य करने को

कहती। वह ये सब बातें बड़ी गम्भीरता से करती और नौकर लोग कुछ हसते-मुस्कराते उसकी बातें सुनते।

आश्रम

बालिका इंदिरा ने घर में होते भारी परिवर्तनों को भी देखा। वैभवशाली आनन्द भवन अब आश्रम का रूप धारण कर चुका था। वहां के वासी वैसा ही कठिन जीवन बिताने लगे थे। उन्होंने स्वतन्त्रता आन्दोलन के प्रति अपने जीवन समर्पित कर दिए थे। देश के लिए निस्वार्थ सेवा ही अब आनन्द भवन के वासियों का लक्ष्य बन चुकी थी।

छोटे-बड़े सब लोगों को निस्वार्थ सेवा के लिए प्रेरणा दी जाती थी। उनको अच्छे कामों के लिए खतरा उठाने, अनुशासित रहने और मातृभूमि को दासता से मुक्त करवाने के लिए हर तरह के कष्ट उठाने के लिए कहा जाता था। बालक इंदिरा हररोज़ राष्ट्रीय गानों को सुनती, मार्च करते स्वयंसेवकों को देखती और मातृभूमि के लिए बलिदान देने की दिल हिला देनेवाली अपीलें, सुनती। उस छोटी आयु में इंदिरा उन सब बातों को पूरी तरह से समझ तो नहीं पाती थी परन्तु अपने आस-पास के वातावरण के प्रभाव से वह इन सबके अनुरूप अपने को ढालने लग गयी थी।

स्वतन्त्रता प्राप्ति की दिशा में प्रगति करने के लिए महात्मा गांधी ने स्वदेशी का नारा दिया था। उन्होंने जनता से अनुरोध किया था कि वह ब्रिटेन में निर्मित वस्तुओं का इस्तेमाल बंद करें जिससे कि देश का धन बाहर जाना बंद हो जाये। उनके इस आह्वान का परिणाम यह हुआ था कि देश में स्थान-स्थान पर विदेशी वस्तुओं की होली जलायी जाने लगी थी। इस आन्दोलन में भाग लेनेवाले अपनी विदेशी वस्तुओं को स्वयं जला देते थे। स्थान-स्थान पर विदेशी वस्तुओं के ढेर इकट्ठे कर उनको आग लगा दी जाती। इंदिरा ने भी इस प्रकार की होलियां जलते देखीं। अनेक स्थानों पर कीमती रेशमी और ऊनी वस्त्रों तथा अन्य विदेशी सामान जमाकर दिया जाता और उनके बड़े-

चढ़े ढेरों को आग की भेंट चढ़ा दिया जाता। बालिका इंदिरा इन बातों का महत्त्व तो पूरी तरह से न समझ पाती परन्तु इस प्रकार के दृश्यों को देखकर उसके मन में अकथनीय उत्साह भर जाता। स्वभाव से बालिका इन्दिरा मित-व्ययी थी। घर का अधिकांश सामान पुलिस द्वारा ले जाने के बाद वहां पहले जैसी समृद्धि तो रही नहीं थी, इसलिए इन्दिरा पहले से भी अधिक मितव्ययी हो गयी थी। इन वस्त्रों और अन्य कीमती सामान को जलते हुए देखकर उसके मन में तरह-तरह की भावनाएं पैदा होती थीं।

गुड़िया को आग

नन्ही-सी इंदिरा में उस छोटी आयु में भी बलिदान की भावना कितनी बलवती थी। यह एक मार्मिक घटना है। इन्दिरा इकलौती बेटी थी। अपने मन में मस्त रहकर वह अकेली खेला करती थी परन्तु खेलते समय अपनी मां को आंखों से ओझल नहीं होने देती थी। घर में और आस-पास के वातावरण में जो बड़ा तूफान आ रहा था उसमें कमला ही उसकी रक्षक थी। एक दिन सायंकाल इन्दिरा का एक संबंधी पेरिस से लौटा और उसके लिए उपहार के रूप में बहुत ही बढ़िया कढ़ाई किए वस्त्र लाया। इनको कोई भी सामान्य बच्चा पसन्द करता। इन्दिरा की मां ने इस भेंट पर आपत्ति तो की परन्तु अपने रिश्तेदार की भावनाओं का आदर करते हुए यह उसने इन्दिरा पर ही छोड़ दिया कि वह इसे स्वीकार करे अथवा नहीं। सचमुच बालिका इन्दिरा के लिए फैसला करना बड़ा कठिन काम था। विशेषकर उस छोटी-सी आयु में बच्चों को अपनी चीजों के प्रति बड़ा मोह होता है। परन्तु माता-पिता की भावनाओं को समझते हुए इन्दिरा ने वह भेंट और उपहार लेना अस्वीकार कर दिया। मां कमला ने भी मुस्कराते हुए कहा : "हम तो केवल हाथ से कते और बुने वस्त्र ही अब पहनते हैं।" इसपर कुछ स्तब्ध-सा वह संबंधी हैरान होकर बालिका इन्दिरा की ओर एकटक देखता रहा। तब उसकी नजर उस गुड़िया पर गयी जिससे इन्दिरा खेल रही थी, गुड़िया विदेशी थी; इसपर उस संबंधी ने कुछ चिढ़ाते हुए इंदिरा को कहा : "यदि वह विदेशी 'फ्राक' नहीं

स्वीकार करती तो वह इस विदेशी गुड़िया से कैसे खेल रही है ?" ऐसा उस संबंधी को कहना तो नहीं चाहिए था। इन्दिरा को यह गुड़िया बड़ी प्यारी थी और इसे अपनी सहेली मानती थी। उस एकाकी बच्ची की असली साथी यही गुड़िया थी जो दिन-रात उसके पास रहती थी। परन्तु संबंधी ने बिना सोचे-समझे यह जो टिप्पणी कर दी थी उससे वह सोच में पड़ गयी थी। उसे यह गुड़िया थी तो बहुत प्यारी परन्तु संबंधी ने जो व्यंग्य किया था उससे इंदिरा का मन अनेक दिनों तक परेशान रहा। छोटी-सी बालिका के मन में निरन्तर संघर्ष चलता रहा। एक ओर तो उस सुन्दर और दिन-रात के एकाकी-पन को भरने वाली गुड़िया के प्रति उसके मन में खूब मोह दूसरी ओर देश के प्रति कर्त्तव्य की भावना भी बड़ी जबरदस्त थी। कई दिन तक इन्दिरा उस गुड़िया को छाती से लगाये हुए इधर-उधर गहरी सोच में पड़ी घूमती रही। वह ठीक निर्णय लेने का प्रयास कर रही थी। अन्त में उसने फैसला कर ही लिया। तनाव में कांपती हुई बालिका इन्दिरा आंगन में गयी और वहाँ पर गुड़िया को रखकर उसे आग लगा दी। शायद उसके बाल-संसार का यह कठिनतम निर्णय था। परन्तु इससे यह तो आभास मिलता था कि आगामी जीवन में यह व्यक्तित्व कितना बड़ा बलिदान कर सकेगा।

आनन्द भवन में उन दिनों जो घटनाएं घट रही थीं वह बालिका इंदिरा को बड़ा उद्विग्न कर जातीं। देश के भिन्न-भिन्न स्थानों से लोग निरन्तर वहां पर अपने प्रिय नेता जवाहर का दर्शन करने आते। अनेक बार लोग जलूस बनाकर वहां पर एकत्र होकर नारे लगाते : "जवाहरलाल नेहरू की जय", "महात्मा गांधी की जय","भारत माता की जय।" पुलिस का भी घर में आना-जाना निरन्तर बना रहता। महात्मा गांधी ने जनता से यह आह्वान किया था कि वह ब्रिटिश शासन से सहयोग न देवे और न दंड के रूप में जुर्माने दे और न ही और किसी प्रकार का कर। इस प्रकार सरकार से असहयोग आनंद भवन वासी नेहरू परिवार करता था। परन्तु पुलिस आती और घर का कीमती सामान उठाकर ले जाती और उसको नीलाम कर अपना धन
बालिका इंदिरा इस प्रकार की घटनाओं को प्रायः देखती। वा

की अनेक बार रात को घर में होते शोर से नींद खुल जाती तो वह देखती कि पुलिस घर का सामान उठाने अथवा घर के किसी प्रियजन को गिरफ्तार करने के लिए वहां पर आयी है। स्वाभाविक ही है कि बालिका इन्दिरा इस प्रकार की घटनाओं से बहुत परेशान हो उठती और उसके मन में कड़वाहट पैदा हो जाती। उन दिनों इंदिरा ने 'जॉन आफ आर्क' की कहानी पढ़ी और इससे बड़ी प्रभावित हुई। वह मन में कल्पना किया करती थी कि एक दिन मैं भी तलवार हाथ में लेकर घोड़े पर सवार होकर ब्रिटिश शासकों को देश से बाहर निकालूंगी। कल्पना में अत्याचारियों से बदला लेने पर उसके — — कुछ राहत अनुभव होती थी।

चौथा अध्याय

बीमार मां : यूरोप यात्रा

कमला बहुत पैनी दृष्टिवाली महिला थी। इंदिरा के आरंभिक जीवन पर उसका गहरा प्रभाव पड़ा। इंदिरा ने स्वयं एक बार कहा था कि उसपर पिता की बजाय माता का असर ज्यादा है। माता ने ही पुत्री के मन में अच्छे साहित्य की रुचि और भारतीय संस्कृति के प्रति प्रेम पैदा किया था। इंदिरा में जो साहस जो दृढ़ संकल्प नजर आता है इसका विकास करने में भी मां कमला का बड़ा हाथ है। दुर्भाग्यवश कमला की गतिविधियों में स्वास्थ्य ठीक न रहने से बड़ी बाधा पैदा हो जाती थी। उनको बाद में तपेदिक रोग हो गया था।

सन् १९२० में जवाहरलाल ने अपनी बीमार पत्नी और माता को मसूरी ले जाने का निश्चय किया। मोतीलाल ने अभी वकालत छोड़ी नहीं थी और वे अपने किसी मुकदमे में उलझे हुए थे। इसलिए वे वहाँ नहीं गये।

जिस होटल में जवाहरलाल ठहरे वहाँ पर अफगान प्रतिनिधिमंडल भी ठहरा हुआ था। वह प्रतिनिधिमंडल १९१९ के अफगान युद्ध के बाद ब्रिटेन से शान्ति संधि करने के लिए वहां आया था। जवाहरलाल को उनमें कोई रुचि तो थी नहीं इसलिए वह उनसे मिले नहीं। परन्तु ब्रिटिश अधिकारियों को यह आशंका थी कि शायद जवाहरलाल उन लोगों से भेंट करें और इसलिए उन्होंने आश्वासन मांगा कि वे इस प्रतिनिधिमंडल के सदस्यों से किसी प्रकार का वास्ता नहीं रखेंगे। जवाहरलाल ने इस मांग को निरर्थक और अनावश्यक समझा और ऐसा कोई आश्वासन देने से इंकार कर

को ब्रिटिश सरकार ने आदेश दिया कि वह चौबीस घंटों के भीतर ही उस जिले से निकल जाएं। ऐसा जवाहरलाल ने किया भी। बाद में यह आदेश रद्द कर दिया गया और जवाहरलाल अपने पिता के साथ मसूरी लौट आए। सबसे पहली चीज़ वहां उन्होंने देखी, वह यह थी कि होटल में उनकी बेटी इंदिरा को एक अफगान प्रतिनिधिमंडल ने अपनी गोद में उठाया हुआ है। अफगान दल ने इस घटना को अखबारों में पढ़ा था और जवाहरलाल की मां को फल और फूल प्रतिदिन भेजने आरंभ कर दिए थे।

स्वतंत्रता-संग्राम महात्मा गांधी के नेतृत्व में १९२१ में जारी था। कांग्रेस के स्वयंसेवक व्यक्तिगत सत्याग्रह कर रहे थे। सारे देश में उनकी गिरफ्तारियां हो रही थीं। ब्रिटिश सरकार के अधिकारी चिंतित हो रहे थे। इस अहिंसक सत्याग्रह का मुकाबला किस प्रकार किया जाय यह उनकी समझ में नहीं आ रहा था। उन्होंने वातावरण को सुधारने की दृष्टि से इंगलैंड के राजकुमार 'प्रिंस ऑफ वेल्स' को भारत के दौरे पर आमंत्रित करने का निश्चय किया। प्रिंस लोकप्रिय समझे जाते थे। परन्तु कांग्रेस ने ब्रिटिश सरकार द्वारा आयोजित इस दौरे का बहिष्कार करने का फैसला किया और कहा कि राजकुमार की लोकप्रियता का इस प्रकार अनुचित ढंग से लाभ नहीं उठाया जाना चाहिए। मोतीलाल और जवाहरलाल को गिरफ्तार कर लिया गया। दोनों को ही पांच-पांच सौ रुपये का जुरमाना और छह-छह मास की कैद सुनाई गयी।

जवाहरलाल को तीन जनवरी १९२३ तक लखनऊ जेल में रखा गया; आरम्भ में कुछ सप्ताह के लिए वह वहां की बजाय और किसी स्थान पर थे तीन मास की अवधि में केवल एक बार ही बालिका इंदिरा को अपने पिता को देखने का अवसर मिलता। पुत्री के स्वास्थ्य से जवाहरलाल आमतौर पर चिंतित हो जाते। स्पष्ट था कि बच्ची के मन पर प्रभाव पड़ा था। पिता तथा दादा से संबंध कट जाने के कारण वह अपने को कुछ असुरक्षित अनुभव करने लगी थी।

इंदिरा को अनुपस्थिति न खटके इसलिए जवाहरलाल उस छोटी-सी बच्ची को भी पत्र लिखा करते थे। वे पत्र प्रायः इस प्रकार शुरू हुआ करते थे: प्यारी

बेटी इंदु को पापू का प्यार। बेटी इंदु तुमको जल्दी ही ठीक हो जाना चाहिए तथा अक्षर लिखने सीख लेने चाहिए। मुझे देखने के लिए अवश्य जेल में आया करो। मेरे मन में तुम्हें देखने की बड़ी इच्छा है।" दादू ने पोती इंदिरा को जेल से एक चरखा भेजा था जिससे वह खेलती रह सके। जवाहरलाल ने भी इंदु को चरखा कातने के लिए प्रोत्साहित करते हुए कहा कि अपना कता हुआ सूत वह उनको जेल में भेजे। वह नन्ही बालिका इंदिरा को पत्रों में यह भी पूछते कि क्या वह अपनी माता के साथ प्रार्थना में बैठती है या नहीं। परन्तु इंदिरा के स्वास्थ्य में कोई सुधार होता नजर नहीं आता था। शायद उसके दिल पर पापू और दादू के अलग हो जाने का बहुत असर पड़ा था उसे डाक्टरी जांच और इलाज के लिए कलकत्ता ले जाया गया।

मोतीलाल नेहरू १९२२ में अभी जेल में ही थे कि उन्होंने राष्ट्रीय कांग्रेस के अंतर्गत स्वराज्य पार्टी की स्थापना कर ली। उनका मत था कि विधान सभाओं में प्रवेश करके वहां से ब्रिटिश साम्राज्य से संघर्ष किया जाना चाहिए और अधिकारों की मांग की जानी चाहिए। परन्तु महात्मा गांधी इस नीति के विरोधी थे। वे विधान सभाओं में प्रवेश के पक्ष में नहीं थे और मानते थे कि बाहर से ही स्वराज्य के लिए संघर्ष जारी रखा जाना चाहिए। इन दोनों में १९२४ में इसपर बातचीत हुई परन्तु किसी प्रकार का समझौता नहीं हो सका। अहिंसा द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त कर ली जा सकेगी। गांधीजी की इस मान्यता में उस समय तक मोतीलाल नेहरू का विश्वास नहीं था।

संयोग की बात है कि जवाहरलाल इस विवाद में समय नहीं देते थे। वह तो अपना समय अपने परिवार के साथ ही व्यतीत करते थे। उन्हें तथा परिवार के अन्य सदस्यों को यह बहुत अच्छा लगता। इंदिरा तो बहुत ही प्रसन्न रहती क्योंकि अब उसे पिता का साथ बहुत मिलता। पिता मिले भी तो उसे बहुत देर बाद थे। अब पापू बेटी इंदिरा के साथ टहलते और उनसे खूब बातें करते। वे दोनों इकट्ठे खेलते और मौज मनाते।

दिरा और माता-पिता की यह प्रसन्नता क्षणिक ही रही। एक सप्ताह के तर ही नवजात शिशु की मृत्यु हो गयी। इसके साथ खेलने के लिए साथी ने के इंदिरा के सपने भी समाप्त हो गए। शायद मुसीबतें भी एक साथ ही ती हैं। इस दुर्घटना के बाद कमला की सेहत भी खराब रहनी शुरू हो यी।

सन् १९२५ की शरद् ऋतु में इंदिरा की हालत खराब हो गयी। महीनों क वह लखनऊ के एक अस्पताल में बीमार पड़ी रहीं। जवाहरलाल तब कांग्रेस के महासचिव थे।

उनको कानपुर कांग्रेस अधिवेशन की सारी तैयारी करनी थी। जवाहर-लाल को कांग्रेस का काम करना होता था और साथ ही अपनी बीमार पत्नी की देखभाल भी। इस कारण जवाहर बड़े चिंतित और परेशान रहते थे। उन्हें इलाहाबाद, लखनऊ और कानपुर के चक्कर निरन्तर लगाने पड़ते थे।

डाक्टरों की सलाह पर कमला को तुरन्त ही स्विटजरलैंड इलाज के लिए ले जाने के वास्ते प्रबन्ध करना पड़ा। मार्च के आरम्भ में जवाहरलाल कमला तथा इंदिरा के साथ बम्बई से जहाज के द्वारा रवाना हुए। वे जेनेवा जाने के लिए वेनिस जा रहे थे। उसी जहाज पर जवाहर के साथ उनकी बहन विजयलक्ष्मी पंडित और उनके पति आर० एस० पंडित भी थे। परिवार ने और विशेषरूप से इंदिरा ने इस यात्रा का बहुत आनन्द लिया। वह अपने पिता के साथ जहाज के डैक पर अनेक खेलें खेलती। शाम को जहाज के डैक पर वे लोग आराम करते। पिता जवाहर इंदिरा को जीवन के उद्गम की कहानियों के अतिरिक्त भारत के महान् राजाओं—अशोक और अकबर—की कहानियाँ भी सुनाया करते। देश पर जीवन बलिदान कर देनेवाले महान् क्रान्तिकारियों की गाथाएँ भी वे सुनाया करते थे।

स्विटजरलैंड पहुँचने के बाद आल्प्स पर्वत के सुखदायी जलवायु में और विशेषज्ञ डाक्टरों की देखभाल में कमला का स्वास्थ्य सुधरने लगा। उन लोगों ने अपना अधिकांश समय स्विटजरलैंड में और वहाँ भी जेनेवा में और मोनताना

नामक पर्वतीय स्थल पर बिताया। जवाहरलाल की छोटी बहन कृष्णा भी उनके पास आ गयी। उन्होंने कुछ समय एक साथ मजे में बिताया। स्विटजरलैंड की झीलों और पहाड़ियों का उन्होंने खूब आनन्द लिया। वे लोग पर्वतारोहण तथा बर्फ पर स्केटिंग और स्कीइंग करके आमतौर पर अपना मनोरंजन किया करते थे। इंदिरा को पिता जवाहर ये खेल करवाते। स्कीइंग में जवाहरलाल नए थे परन्तु वह इससे मंत्रमुग्ध हो गये थे। काफी समय तक उन्हें इस खेल में काफी चोटें लगती रहीं; परन्तु वह इसे सीखने से हटे नहीं, बहादुरी से जुटे रहे। असंख्य बार गिरने के बाद जवाहर को इसका आनन्द लेना आ गया।

बीच-बीच में कमला का स्वास्थ्य अच्छा लगने लगता तो पिता और पुत्री घूमने के लिए लंदन चले आते। पेरिस, बर्लिन और अन्य नगरों में भी वह घूमने जाते। इन स्थानों के सौंदर्य और भव्यता से इस बर्षीया इंदिरा बड़ी प्रभावित होती। उसके मन में कई बार यह प्रश्न उठता कि क्यों यहां के लोग इतने समृद्ध और खुशहाल हैं जबकि उसके अपने देश के लोग इतनी गरीबी और कष्ट में दिन काट रहे हैं। कई बार ऐसे विचार उसके मन को कष्ट देने लगते। परन्तु उसके पिता आशंकाओं को यह बताकर दूर कर देते कि इस प्रकार के कष्ट कुछ दिन ही रहेंगे और शीघ्र ही भारत स्वतंत्र होगा तब वहां के लोगों का जीवन पुनः सुखमय हो जायगा। वहां पर इन विशाल नगरियों की समृद्धि तो निस्संदेह उसको प्रभावित किया ही करती थी परन्तु इन नगरों में जो गन्दी बस्तियां थीं और उनमें रहनेवाले जिस तरह का नारकीय जीवन बिता रहे थे उससे भी वह बड़ी व्याकुल हो जाती थी। उसको यह समझ में नहीं आता था कि इस प्रकार के समृद्ध देशों में भी क्यों इतनी गरीबी और क्यों लोगों को नारकीय जीवन व्यतीत करने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

पिता जवाहर जब यूरोप के महान् पुरुषों—रोम्यां रोलां, अलबर्ट आइंस्टाइन, एर्नेस्ट टॉलर, बर्नार्ड शॉ और चार्ली चैपलिन से मिलने जाते तो साथ में बालिका इंदिरा को अवश्य ले जाते। इन मुलाकातों का असर भी बालिका इंदिरा पर खूब पड़ा। पिता जवाहर के प्रति उसके मन में सम्मान

का भाव और भी बढ़ा जब उसने देखा कि उसके पिता की मैत्री इतने विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों, कलाकारों, वैज्ञानिकों और राजनीतिज्ञों से है।

जवाहरलाल नेहरू के इंगलैंड पहुँचने के कुछ दिन बाद वहाँ पर हड़ताल शुरू हो गयी। उनकी सहानुभूति हड़तालियों से थी। जब हड़तालियों की पराजय हुई तो नेहरू को बहुत आघात पहुँचा। कुछ मास बाद वह इंगलैंड गये। वहां पर खनन करनेवालों का संघर्ष अभी तक जारी था। वह डर्बेशायर में हड़तालियों को देखने गये। वहाँ पर न केवल हड़ताली मजदूरों पर ही वरन् उनकी पत्नियों पर भी मुकदमे चलाए गये थे। श्रमिकों के साथ जैसा व्यवहार किया जा रहा था उसे देखकर नेहरू को बड़ा आघात पहुँचा।

१९२६ का वर्ष समाप्त होने को आया था। जवाहरलाल तब बर्लिन में थे। वहाँ पर उनको यह पता चला कि दलित राष्ट्रों का सम्मेलन ब्रुसल्स में होगा। नेहरू इस सम्मेलन से आकर्षित हुए और उन्होंने भारत पत्र भेजकर सुझाव दिया कि इंडियन नेशनल कांग्रेस भी अधिकृत रूप से इस सम्मेलन में भाग लेवे। तुरन्त ही जवाहरलाल को कांग्रेस का प्रतिनिधि बना दिया गया।

ब्रुसल्स में सम्मेलन फरवरी १९२७ में हुआ। नेहरू को यह पता नहीं था कि इस सम्मेलन के आयोजन का मूल विचार किसका था। परन्तु कुओमिंतांग के यूरोप के प्रतिनिधियों ने भी इस सम्मेलन का समर्थन किया था। यद्यपि इस सम्मेलन को करवाने में कुछ कम्युनिस्टों का हाथ था परन्तु वे लोग पीछे ही रहे।

ब्रुसल्स में इंडोचीन, फिलस्तीन, जावा, मिश्र, सीरिया, उत्तरी अमेरिका और अफ्रीकी नीग्रो लोगों के प्रतिनिधि भी थे। यूरोप के श्रमिकों के आंदोलनों में मुख्य भूमिका अदा करनेवाले वहाँ के अनेक प्रमुख श्रमिक नेता भी उपस्थित थे। अन्य वामपंथी दलों ने भी अपने प्रतिनिधि वहाँ पर भेजे। श्रमिक संघों तथा वैसे ही अन्य दलों के प्रतिनिधियों के रूप में कम्युनिस्ट भी वहाँ पर विद्यमान थे। इस सम्मेलन की अध्यक्षता के लिए जार्ज लासंबरी को चुना गया।

इस सम्मेलन में एक स्थायी संस्थान—साम्राज्यवाद विरोधी लीग—की भी स्थापना हुई। लांसबरी इस संगठन के अध्यक्ष थे। कुछ समय बाद ही लांसबरी ने इस संगठन की अध्यक्षता से त्यागपत्र दे दिया। इस लीग के संरक्षक थे मैडम सुनयातसैन, एल्बर्ट आइंस्टीन और रोम्यां रोलां।

ब्रुसल्स सम्मेलन और लीग की कमेटी बैठकों में नेहरू को दुनिया और साम्राज्यवादी उपनिवेशों की कुछ समस्याओं को समझने में मदद मिली। पश्चिम के श्रमिक-संसार के आंतरिक संघर्षों की कुछ झलक भी उन्हें मिली।

रूस में श्रमिकों के जीवन में सुधार से नेहरू बहुत प्रभावित हुए परन्तु उन्हें कम्युनिस्टों के तानाशाही तरीके पसन्द न थे। अपने से सहमत न होने-वाले को जिस प्रकार वे बुरा कहने लगते थे यह भी जवाहरलाल को पसन्द न था। जब इस समिति में बहस होती उस समय नेहरू लीग के अंग्रेज-अमरीकी सदस्यों के साथ होते और साम्राज्यवाद के विरोध में विचार व्यक्त करते।

बाद में उन्होंने कोलोन में हुई लीग की साम्राज्यवाद विरोधी समिति की बैठक में भाग लिया। इसके बाद वह जर्मनी गये। दुर्भाग्यवश वे अपना पास-पोर्ट होटल में ही भूल गये। वह एक अंग्रेज के साथ थे और उसकी पत्नी भी अपना पासपोर्ट भूल आई थी। उन्हें रोक लिया गया परन्तु लगभग एक घंटे के बाद पुलिस अधिकारी ने उन्हें जाने की अनुमति दे दी और इस बात पर खेद व्यक्त किया कि रोककर उनका समय नष्ट किया गया। वहाँ से लौटने पर जवाहरलाल ने इंदिरा और कमला को विस्तार से सम्मेलन की रिपोर्ट दी और अपने अनुभव बताये।

बाद में यह साम्राज्यवाद विरोधी लीग कम्युनिज्म की तरफ ज्यादा झुकती गई; यद्यपि अपना अलग व्यक्तित्व बनाये रखने में वह सफल रही। सन् '३१ में नेहरू को इस लीग से निष्कासित कर दिया गया; क्योंकि दिल्ली में भारत सरकार और कांग्रेस के बीच उन्होंने समझौता करवाने में मुख्य भूमिका अदा की थी।

मोतीलाल सितम्बर १९२७ में उनके पास आये। इंदिरा को स्कूल में छोड़ इस परिवार ने रूस की यात्रा की। अक्तूबर क्रान्ति (१९१७) की सालगिरह पर उन्हें विशेषरूप से रूस आमंत्रित किया गया था। रूस से लौटने पर वे लोग बर्लिन रुके, कुछ समय वहाँ ठहरने के बाद वह मार्शेल से पेरिस होते हुए चले गये और वहाँ से स्टीमर द्वारा मद्रास रवाना हुए।

पांचवां अध्याय

वानर सेना

नेहरू परिवार दिसम्बर १९२७ के लगभग भारत लौटा। उस समय तक कमला का स्वास्थ्य काफी सुधर चुका था। कांग्रेस का अधिवेशन भी होनेवाला था। जवाहर बिना किसी बाधा के राजनीति में कूद पड़े और उत्साह से कार्य करने लगे।

इलाहाबाद में इन्दिरा ने भी बड़े उत्साह से सामाजिक कार्यक्रमों में भाग लेना शुरू किया। वहां से ६ मील दूर नैनी नामक स्थान पर कोढ़ियों की बस्ती में १० वर्ष की वह छोटी-सी बालिका इन्दिरा साईकिल पर जाया करती और उनके सेवा कार्य में भाग लेती। उसके इस कदम से माता-पिता भी बड़े चकित हो गये। इलाहाबाद के अमेरिकी मिशनरी लोगों के साथ मिलकर वह निर्धनों की सेवा का कार्य किया करती थी।

जवाहरलाल की विदेश यात्राओं ने उनके मन में यह भाव पैदा कर दिया था कि भारत का भविष्य अवश्य सुधरेगा। इसलिए राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन देश में लाने के लिए पहले से भी अधिक उत्साह उनके मन में था। उन्होंने उन्हीं दिनों कहा था, दो बातें मेरे सामने बहुत साफ हैं पहली तो यह कि इस देश को स्वतन्त्र करवाना है और दूसरे हर आदमी के साथ एकसमान व्यवहार की व्यवस्था होनी है।

१९२८ में बम्बई में सर्वदलीय सम्मेलन में भाग लेने के तुरन्त बाद जवाहरलाल कमला और इन्दिरा को मसूरी के पर्वतीय नगर में ले गये। कुछ समय वहां काटने के बाद राजनैतिक संघर्ष में भाग लेने के लिए फिर अपने

धियों से आ मिले। ब्रिटेन में उस समय अनुदार दल (कन्ज़रवेटिव-पार्टी) ; सरकार थी और बाल्डविन प्रधानमंत्री थे। उन्होंने सर जोहन साईमन के त्व में सात सदस्यों का एक शिष्टमण्डल भारत भेजा। उसके जिम्मे यह ाम सौंपा गया कि वह यहां पर संवैधानिक परिवर्तनों को लाने के बारे में भाव दे।

पहले दिन से ही कांग्रेस ने इस कमीशन के विरोध में प्रदर्शन ,आयोजित र दिए। कांग्रेस इससे संतुष्ट नहीं थी; क्योंकि इसके सभी सदस्य विदेशी । भारत के स्वतन्त्रता संघर्ष से उन्हें किसी प्रकार की सहानुभूति न थी। ह कमीशन जहां भी गया वहां पर लोगों ने उसे काले झंडे दिखाये और ाईमन गो बैक' के नारे लगाये। इसके जवाब में सरकार ने उन प्रदर्शन-ारियों की पिटाई की।

पहले दिन सोलह आदमियों का छोटा-सा दल सभा स्थल पर गया। घुड़-सवार पुलिस का एक दस्ता उनपर चढ़ आया और उसने डंडों से उन लोगों को पीटा। प्रदर्शनकारी भागकर जब पटरियों पर पहुंचे तो वहां पर भी उनका पीछा किया गया और उन्हें मारा गया। अनेक लोगों को चोटें इतनी लगीं कि खून बहने लगा। कइयों की खोपड़ियां फट गईं। तभी एक घुड़सवार पुलिस सिपाही जवाहरलाल तक भी पहुंचा। जवाहरलाल ने उसके वार से बचने के लिए अपने सिर को घुमा लिया; परन्तु तभी उनकी पीठ पर दो वार हुए, वह सन्नाटे में आ गये। उनका सारा शरीर कांपने लगा। फिर भी अपने स्थान पर जमे रहे। अंत में पुलिस पीछे हट गई और उसने रास्ता रोक दिया।

अगले दिन जलूस की शक्ल में लोग स्टेशन की ओर चले। सारा लखनऊ पहले दिन की घटना से हिल गया था। स्टेशन की ओर अनेक लोग चले जा रहे थे। मुख्य जलूस कांग्रेस दफ्तर से रवाना हुआ। चार-चार की पंक्तियां बांधे हजारों लोग इसमें शामिल होकर मार्च कर रहे थे। जब यह जलूस स्टेशन के निकट पहुंचा तो पुलिस ने उसे रोक लिया। वहां पर पुलिस के

अलावा सेना भी थी और खुले मैदान में जलूस से सहानुभूति रखनेवाली असंख्य जनता भी। तभी एकाएक घुड़सवार पुलिस के दस्ते अपने घोड़ों को चौकड़ी भरवाते उन निर्दोष, निरीह लोगों पर आ चढ़े। जलूस में शामिल लोगों को बड़ी निर्दयता से पीटा गया। लखनऊ में जवाहरलाल जलूस का नेतृत्व कर रहे थे। घुड़सवार पुलिस ने लाठियों और डंडों से उन्हें बुरी तरह से पीटा, उनपर खूब डंडे बरसाये गये। उनके जख्मों से भी खून निकल रहा था, भयानक पीड़ा भी हो रही थी परन्तु वह अपने स्थान पर जमे रहे। उनपर और डंडे बरसाये गये। इतने में ही उनके दूसरे साथियों ने आकर वहाँ से उन्हें हटाया। जवाहरलाल ने इसका विरोध भी किया परन्तु वे साथी उन्हें उठाकर सुरक्षित स्थान पर ले गये। इन लोगों को यह डर था कि कहीं जवाहरलाल को जान से ही न मार दिया जाय। उस दिन घुड़सवार पुलिस ने बड़ी क्रूरता का व्यवहार किया। उन्होंने अनेकों व्यक्तियों को रौंदा, अनेक लोगों के बाजू, टाँगें और सिर टूटे, परन्तु वे लोगों के उत्साह को नहीं तोड़ पाये।

जवाहरलाल १९२९ में कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। कांग्रेस का ऐतिहासिक अधिवेशन दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में लाहौर में रावी नदी के किनारे एक विशाल पंडाल में हुआ। इसमें लगभग तीन लाख लोगों ने भाग लिया—पहले दिन सभा स्थल तक एक विशाल जलूस निकाला गया। इस जलूस में सबसे आगे-आगे एक सफेद घोड़े पर जवाहरलाल थे उनके साथ पोशाकें पहने स्वयंसेवक थे और पीछे-पीछे हाथियों का एक झुंड और असंख्य लोग। इसी स्थान पर कांग्रेस ने जवाहरलाल का वह प्रस्ताव स्वीकार किया, जिसमें कहा गया था कि हमारा लक्ष्य पूर्ण स्वतंत्रता है। २६ जनवरी १९३० को पूर्ण स्वतंत्रता दिवस मनाने का निश्चय भी किया गया। लोगों से कहा गया कि वे उस दिन पूर्ण स्वतन्त्रता की शपथ लेवें। शपथ जवाहरलाल द्वारा तैयार की गयी थी।

"हमारा विश्वास है, दुनिया के लोगों की भांति भारतीय जनता का भी यह मूलभूत अधिकार है कि वह स्वतंत्रता प्राप्त करे और अपने श्रम से पैदा की सम्पदा को प्राप्त करे जिससे जीवन निर्वाह के लिए आवश्यकताओं की

पूरा करे; ताकि भारतवासियों को विकास के पूरे अवसर मिल सकें। हमारा यह विश्वास भी है कि यदि कोई सरकार लोगों से उनके अधिकार छीन लेती है और उनका दमन करती है तो लोगों का भी हक है कि वे इस सरकार को बदलकर समाप्त कर दें। ब्रिटिश सरकार ने भारतवासियों को न केवल दास ही बनाया है वरन आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से उसका शोषण कर अपनी सत्ता को बनाये रखा। हमारा विश्वास है कि भारत को ब्रिटेन से अपने सम्बन्ध पूरी तरह से तोड़ लेने चाहिए और पूर्ण राज्य प्राप्त कर लेना चाहिये।"

कुछ बात ऐसी बनी कि इस शपथ को सबसे पहले लेनेवाले लोगों में इंदिरा थी। वह पिता को इस शपथ का मसौदा तैयार करते हुए देख रही थी। जब जवाहरलाल इस मसौदे को तैयार कर चुके तो उन्होंने अपनी पुत्री से इसे पढ़ने को कहा। इन्दिरा ने बड़ी स्पष्टता और ईमानदारी से पढ़ा। पढ़ते समय उसका चेहरा चमक उठा। जब वह इस शपथ को पढ़ चुकी तो स्नेह से मुस्कराते हुए पिता जवाहर ने कहा: "इंदु तुमने बहुत अच्छा पढ़ा। परन्तु क्या तुम जानती हो कि इसे ऊंचे स्वर से पढ़ने के बाद अब तुम भी यह शपथ ले चुकी हो?" "हां," उत्साह में भरी बालिका इन्दिरा इस शपथ को अच्छी तरह समझती थी परन्तु उस समय किशोरी इन्दिरा को यह मालूम नहीं था कि इस लक्ष्य की प्राप्ति से पहले उसको किन संकटों में से गुजरना होगा।

एक दिन में ही जवाहरलाल युवा भारत के हृदय-सम्राट बन गये थे। जहां कहीं भी वे जाते, लोग उनके स्वागत के लिए उमड़ पड़ते। उनपर गीत लिखे जाने लगे, उनके नाम को लेकर तरह-तरह की कहानियां चल पड़ीं। अभिनन्दन भाषणों में उनके नाम के आगे भारत-भूषण, त्यागमूर्ति तथा अन्य अनेकों विशेषण लगाये जाने लगे। इस प्रकार जो प्रशंसा उन्हें मिली उससे इस युवक के मन में गर्व भी पैदा हुआ। अपनी आत्मकथा में जवाहरलाल ने स्वीकार किया है कि पत्नी और बहनें मुझे खूब चिढ़ाया करती थीं और इससे मैं कुछ सामान्य हुआ। नाश्ते के लिए परिवार के सदस्य जब मेज पर बैठे होते तो उनमें से कोई कह उठता: 'ओ भारत के जवाहर जरा मक्खन तो इधर

सरकाओ ।' इन्दिरा भी इस प्रकार के मज़ाक में शामिल हो जाती और बोलती 'ओ त्यागमूर्तिजी आप तो जेम मेज पर गिरा रहे हैं।' इन छोटे-छोटे मज़ाकों से आकाश को छूता जवाहर का दिमाग कुछ ठीक रहता।

जवाहरलाल की लोकप्रियता जब इस प्रकार बढ़ गयी तब आनन्द भवन साधारण जनता के लिए एक तीर्थ बन गया। देश के विभिन्न स्थानों से लोग वहाँ पर आने लगे। इन्दिरा और उसके पिता लोगों के इस प्रेम से अभिभूत हो उठे। इतनी लोकप्रियता और इतने प्रचार की कीमत तो बहुत बड़ी देनी होती है। अपनी आत्मकथा में जवाहरलाल ने अपने मन की हालत की कुछ झलक दी है। हर दिन सवेरे बीस, पचास अथवा सौ-सौ लोगों के दल एक के बाद एक करके वहाँ आया करते थे और उनसे कुछ शब्द बोलने के बाद ही मैं अपना दिन का काम शुरू किया करता था परन्तु कुछ समय बाद ही यह असम्भव हो गया। तब मैं चुपचाप दूर से ही उनको नमस्कार कर लिया करता। इसकी भी कोई एक सीमा होती है और तब मैंने अपने को छुपाने की कोशिश भी शुरू की परन्तु यह बेकार रहा।

नारों की आवाज़ निरन्तर ऊँची होने लगी। हमारे घर के बरामदे इस प्रकार आनेवाले लोगों से भरे रहते। हर दरवाजे और हर खिड़की के साथ खोजती हुई आंखें लगी रहतीं। काम करना, बात करना, खाना और कुछ भी करना असम्भव हो गया। ऐसा न केवल परेशान करनेवाला ही था, इससे तो क्रोध और चिढ़ भी पैदा होने लगी। परन्तु फिर भी लोग वहां पर जमे रहते, चमकती हुई प्रेम से भरी आंखों से देखते हुए ये लोग न जाने कितनी पीढ़ियों से गरीबी के दिन काटते हुए असंख्य कष्ट सह रहे थे, परन्तु इसके बावजूद वे अपना प्रेम बिना कुछ मांगे मुझपर उंडेल रहे थे। मात्र सहानुभूति ही ये लोग मांगते थे। प्रेम और समर्पण की इस भावना से मिश्रित आश्चर्य के साथ-साथ विनम्रता की भावना भी मेरे मन में आये बिना न रही।

१२ मार्च १९३० को महात्मा गांधी ने असहयोग आन्दोलन के रूप में नमक सत्याग्रह शुरू किया। जब महात्माजी दांडी की ओर पैदल चले तो हर रोज हज़ारों लोग उनके साथ आ मिलते। गांधी और उनके साथियों ने

लगभग २४१ मील पैदल यात्रा की और जब वे लोग डांडी तट पर पहुँचे तो वह इतना बड़ा जलूस बन चुका था कि सारी दुनिया का ध्यान उनकी ओर उभर आया था। गांधीजी ने समुद्र के खारे जल को उबाला और नमक तैयार किया। यह नमक कानून के विरुद्ध सांकेतिक विरोध था।

गांधीजी ने डांडी में ६ अप्रैल को इस नमक कानून का विरोध किया था। उस दिन मोतीलाल ने अपने पुराने निवास भवन का स्वराज्य भवन नामकरण किया और उसे अखिल भारतीय कांग्रेस को सौंप दिया। जवाहरलाल ने कांग्रेस के अध्यक्ष की हैसियत से अपने पिता से यह उपहार लिया। इसके बाद से उसे कांग्रेस दल का मुख्य कार्यालय बना दिया गया।

नमक कानून तोड़कर असहयोग आंदोलन जारी रहा। यह आंदोलन कई देशाओं में फैल गया। विदेशी कपड़े की दुकान और शराब की दुकानों के सामने सत्याग्रह किया जाने लगा और एक क्रांति-सी पैदा हो गयी। कमला और आनन्द भवन की अन्य महिलाएँ भी इस विरोध में शामिल हो गईं। कुछ दिन बाद ही मोतीलाल, जवाहरलाल और गांधी को गिरफ्तार कर लिया। नेहरू जब जेल में थे तो कमला ने इलाहाबाद में कांग्रेस का काम सम्भाल लिया था। सभाओं में वक्ता के रूप में और संगठनकर्ता के रूप में कमला ने शीघ्र ही प्रसिद्धि प्राप्त कर ली। हर कोई कमला की संगठन क्षमता और कर्त्तव्य भावना से प्रभावित हुआ। उस चारों ओर के अंधकार में कमला जवाहर के लिए प्रकाश-स्तम्भ का काम देने लगी थी और स्वतंत्रता संघर्ष में जो वह काम कर रही थी उससे नेहरू को बड़ा हौसला मिला : "कमला ने मुझे हैरान कर दिया", जेल से जवाहरलाल ने लिखा : "अपने उत्साह और शक्ति से उसने शारीरिक रोगों पर कम से कम कुछ समय तक तो विजय प्राप्त कर ही ली तथा कड़े श्रम के बावजूद वह कुछ समय तक तो स्वस्थ ही रही।"

१२ वर्षीया इन्दिरा मौन दर्शक नहीं बनी रहना चाहती थी। अपने साहसी पिता और माता से संगठन क्षमता उसे विरासत में मिली थी। वह भी मैदान में कूद पड़ी और उसने वानर सेना का संगठन किया इसमें छह हजार से अधिक

सदस्य थे। ऐसा कहा जाता है कि इसकी पहली बैठक जब हुई और इन्दिरा ने वहाँ पर उपस्थित लोगों में भाषण शुरू किया तो उसकी आवाज़ ज्यादा दूर तक सुनाई नहीं देती थी इसलिए उसने अपने एक साथी से कहा कि वह उसके शब्दों को दोहराए और फिर उस साथी के शब्दों को एक-दूसरा साथी दोहराता और इस प्रकार उस विशाल सभा में लोगों को इन्दिरा का संदेश सुनने को मिल जाता।

इन्दिरा की इस वानर सेना ने कांग्रेस संगठन के लिए बहुमूल्य सेवाएँ कीं। वानर सेना के सदस्य अनेक प्रकार के संदेश ले जाते, दफ्तर का काम करते, खाना बनाते, प्राथमिक चिकित्सा करते, इश्तहार बांटते और झंडे बनाते, और कई बार तो कुछ गुप्त संदेश भी ये बच्चे अपने बड़ों तक पहुँचा देते। ये अनजाने में ही पुलिस थानों के आस-पास मंडराते रहते और पुलिस की गतिविधि की सूचना देते रहते और यहाँ तक बतला देते कि अब किसकी गिरफ्तारी का नम्बर है। जो कोई समाचार उन्हें मिलता बड़ी तेजी से वह कांग्रेस अधिकारियों तक उसे पहुँचा देते। बिना किसीकी नजरों में आए वे पुलिस की लाइन में से गुज़र जाते और जेल तक पहुँच वहाँ बंद नेताओं को संदेश पहुँचा देते और उनके संदेश ले आते। वे हाथ से कते कपड़े और भारत में बनी वस्तुओं के प्रचार में भी सहायक होते और इसके लिए दुकानें खोलने में मदद देते।

इंदिरा के दादू हर समय पूछते रहते कि वह क्या कर रही है। कांग्रेस की सेवा के लिए बारह वर्षीया इंदिरा ने वानर सेना का आयोजन किया है यह जानकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता और संतोष हुआ। वह अभी जेल में ही थे और मज़ाक में ही उन्होंने लिखा था: "वानर सेना का क्या हालचाल है? मेरा सुझाव है कि इसके हर सदस्य को पीछे दुम भी लगानी चाहिए और उसकी लम्बाई सदस्य के शौर्य के अनुरूप होनी चाहिए।"

जवाहरलाल जब जेल में होते तो उनका ध्यान अपनी इकलौती बेटी और उसकी शिक्षा के बारे में चला जाता। बड़े विश्वास से सोचते कि यदि वह जेल में न होते तो स्वयं ही उसकी शिक्षा की देखभाल करते थे। परन्तु वह तो

बैरक नं० ४ में थे और इसलिए वे अपना पत्राचार पाठ्यक्रम ही पत्रों द्वारा जारी रखते। बीच-बीच में वे कभी रिहा कर दिये जाते। परन्तु सन् '३३ तक वह जेल में ही रहे। पत्रों की दूसरी शृंखला ६ अगस्त १९३३ को समाप्त हुई। बाद में इन्हीं को विश्व इतिहास की झलक के रूप में प्रकाशित किया गया। इन पत्रों से न केवल विश्व इतिहास की झलक ही मिलती थी वरन् लेखक के व्यक्तित्व की झलक भी मिलती है। इन पत्रों में जिस व्यापक ढंग से विश्व इतिहास पर प्रकाश डाला गया उससे किशोरी इन्दिरा को विश्व इतिहास के संदर्भ में भारत की स्वतंत्रता संग्राम के महत्त्व का आभास हुआ।

जेल जीवन की नित्यचर्या का प्रभाव मोतीलाल के स्वास्थ्य पर ठीक नहीं पड़ रहा था। उन्हें दमे की बीमारी थी और उनका स्वास्थ्य गिर रहा था बेटा जवाहर बड़ी मेहनत से उनकी सेवा किया करता था। बेटे की इस सेवा से मोतीलाल बड़े अभिभूत हो गये थे और आनन्द भवन में अपने पत्रों में उसका जिक्र किया करते थे : 'जवाहर मेरी जरूरतों का अन्दाजा पहले ही लगा लेता है और मेरे करने के लिए कुछ नहीं रहने देता। क्या ही अच्छा हो कि सभी पिताओं को ऐसे आज्ञाकारी पुत्र मिलें। "परन्तु मोतीलाल का स्वास्थ्य गिरता ही गया और ११ सितम्बर १९३० को उन्हें रिहा कर दिया। पत्नी पुत्रियों और इन्दिरा के साथ मोतीलाल को मसूरी ले जाया गया। कमला आनन्द भवन में ही रुकी रहीं और कांग्रेसी गतिविधियों में नये संकल्प और नये उत्साह से भाग लेने लगी।

अपने पति को इन्हीं दिनों लिखे एक पत्र से यह पता चलता है कि राजनैतिक स्थिति को समझने की कैसी शक्ति उनमें थी और वह किस प्रकार जेल जाने के लिए भी तैयार थीं : "आदरणीय (जवाहर) मुझे तुम्हारा पत्र मिला है। तुम्हारी रिहाई का दिन नजदीक आ रहा है, परन्तु मुझे शक है कि तुम रिहा किये जाओगे ? और यदि तुम कर भी दिये गये तो फिर तुम जेल में डाल दिये जाओगे। परन्तु मैं तो हर चीज के लिये तैयार हूं—तुम नहीं जानते कि मैं कितना चाहती हूं कि मैं तुम्हारे रिहा होने से पहले ही गिरफ्तार कर ली जाऊं।"

एक महीने बाद जवाहरलाल रिहा कर दिये गये। कमला के साथ वह

पने पिता के पास मन्सूरी चले गये। नेहरू बड़े प्रसन्न थे, वह अपनी पुत्री र विजयलक्ष्मी की तीन छोटी लड़कियों से खेलकर अपना मनोरंजन किया रते थे। ये इकट्ठे होकर जलूस बनाकर कांग्रेस के झण्डे उठाये घर में धर-उधर मार्च किया करते। नेहरू इन्हें देखकर हँसते और आनन्द लिया रते।

कुछ दिन बाद नेहरू फिर इलाहाबाद लौट आये और अपने राजनैतिक ार्य में कूद पड़े। वे लोगों से असहयोग जारी रखने की कहते और प्रेरणा ते की सरकार को किसी प्रकार के टैक्स न दिये जाएँ। कार से यात्रा करते ुए वे एक दिन में अनेक स्थानों पर भाषण करते। इस समय तक परिवार के अन्य सदस्य भी मन्सूरी से इलाहाबाद लौट आये थे। जवाहरलाल और कमला उनके स्वागत के लिए रेलवे स्टेशन तक गये। बाद में कमला और जवाहर ने किसानों की एक सभा में भाषण दिया। इस सभा के बाद कमला और जवाहर को गिरफ्तार कर लिया गया और उन्हें जेल ले जाया गया। उन्हें ढाई वर्ष की जेल की सजा दी गई। बेटे की गिरफ्तारी पर मोतीलाल ने कांग्रेस अध्यक्ष पद सम्भाला। यह बेटे की इच्छा के अनुरूप ही था। यह घटना अक्तूबर के अन्तिम सप्ताह की है। पिता ने कांग्रेस को आदेश दिया की वह १४ नवम्बर को जवाहरलाल के जन्म दिवस पर जवाहर दिवस मनाये और ढाई वर्ष के इस क्रूरतापूर्ण दण्ड के प्रति विरोध प्रकट करे।

पिता मोतीलाल को अपने पुत्र से गहरा प्रेम था यद्यपि उन्होंने इसे कभी सार्वजनिक रूप से जाहिर नहीं किया था। परन्तु अब वे अपने को रोक नहीं सके थे और उन्होंने सारे राष्ट्र को यह जता दिया कि जवाहर के प्रति उसे क्या रुख अपनाना है। महात्मा गांधी भी हर आदमी को खूब समझते थे बाद में जब उनसे यह पूछा गया कि मोतीलाल का सबसे बड़ा गुण क्या है तो उन्होंने कहा था कि यह है उनका अपने पुत्र जवाहर से प्रेम। जब उनसे और सवाल किये गये कि क्या मोतीलाल को भारत से प्रेम नहीं तो महात्माजी ने उत्तर दिया : नहीं, देश के प्रति मोतीलाल को जो प्रेम है वह जवाहरलाल के प्रेम से ही पैदा हुआ है।

जवाहर दिवस मनाने के प्रसंग में सारे देश में सभायें और जलूस निकाले गये। इलाहाबाद में एक विशाल जलूस निकाला गया और इनके आगे-आगे थीं इन्दिरा उसकी माता तथा अन्य परिवार के सदस्य। इस जलूस के बाद एक सभा हुई और उसमें कमला ने वह भाषण पढ़ा जिसके कारण जवाहरलाल को गिरफ्तार कर दण्ड दिया गया था।

पुलिस ने एक बार घेरा डाल लिया था और कमला सहित जलूस के आगे-आगे चल रहे लोगों को बढ़ने से रोक दिया। इसके विरोध में जलूस की महिला सदस्याएँ पटरी पर बैठ गईं, उन्होंने सत्याग्रह आरम्भ कर दिया था।

सायं का समय था और ठण्ड खूब पड़ रही थी। उसने केवल सूती साड़ी पहनी हुई थी। कमला के रोगी होने की जानकारी एक परिचित महिला को थी और उसने एक कम्बल लाकर कमला को ओढ़ा दिया। घंटों बाद जब वह महिला दुबारा आई तो उसने देखा कि कमला तो वहाँ पर ठण्ड में काँप रही है जबकि पानवाली एक महिला वह कम्बल ओढ़े मजे से वहाँ बैठी है।

१ जनवरी १९३१ को कमला तथा कांग्रेस महिला दल की अन्य सदस्याएँ गिरफ्तार कर ली गईं और उनको लखनऊ जेल ले जाया गया। कमला बड़ी साहसी महिला थी और इस अवसर पर उसने एक रिपोर्टर के पूछे जाने पर जो जवाब दिया उससे इसका पता चलता है। मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है और इस बात पर गर्व है कि मैं अपने पति के चरण-चिन्हों पर चल रही हूँ। मुझे आशा है कि लोग इन झण्डों को उठाये रखेंगे। जेल में बन्द पति जवाहर भी कमला के इस कदम से बड़े प्रसन्न हुए और इसपर उन्होंने गर्व अनुभव किया। परंतु अपनी आत्मकथा में उन्होंने लिखा है यदि कमला ने इस विषय पर कुछ विचार किया होता तो शायद वह ऐसा न कहतीं क्योंकि वह तो यह मानती थीं कि उनका मुख्य काम महिलाओं को पुरुषों के अत्याचार से मुक्त करवाकर उनके अधिकार दिलवाना है। २६ दिन तक गिरफ्तार रहने के बाद २६ जनवरी को कमला को जेल से रिहा कर दिया गया। मोतीलाल की सेहत बड़ी तेजी से खराब हो रही थी इसलिए जवाहरलाल को भी रिहा कर दिया गया ताकि वे अपने पिता के पास रह सकें। मोतीलाल की चिकित्सा के लिए

नगर के प्रसिद्ध चिकित्सक थे। पुत्र जवाहर और कमला भी बड़े प्रेम से उनकी सेवा करते थे।

मोतीलाल ने अन्तिम दम तक अपना हौसला बनाये रखा और अपने मनो-विनोदी स्वभाव को नहीं छोड़ा। अपनी पत्नी से वह मज़ाक में कहते, भई मैं तुमसे पहले स्वर्ग जा रहा हूँ और वहाँ पर तुम्हारा स्वागत करूँगा। साथ ही वह उनसे कहते कि मेरे लिए किसी प्रकार की प्रार्थना मत करना। मैंने इस जीवन में तो अपना रास्ता स्वयं बनाया है और मुझे आशा है कि अगले जीवन में भी मैं ऐसे ही आ सकूंगा और अपने सिर की सूजन की ओर इशारा करते हुए वे बोले, कि अब मैं सौन्दर्य प्रतियोगिता में भाग लेने के लायक नहीं हूँ और गांधीजी को उन्होंने कहा, महात्माजी आपको अपनी नींद पर पूरा काबू है और मुझे अपने हाजमे पर; यह मुझे कभी दगा नहीं देता।

मोतीलाल के मित्र और साथी महात्मा गांधी उनके निकट ही बैठे थे। स्वतन्त्रता संग्राम के इस सेनानी को उन्होंने कहा, मोतीलाल ने महात्माजी मैं तो जल्दी ही इस संसार से जा रहा हूँ और स्वराज्य नहीं देख पाऊंगा परन्तु मुझे मालूम है कि आप इसे प्राप्त कर लेंगे। गांधीजी कुछ आगे झुके और बड़े प्रेम से उन्होंने अपने मित्र के हाथ को थपथपाया; मोतीलाल स्वतंत्रता तो हमें मिलेगी ही, उन्होंने कहा, हम लोगों ने इसके लिए इकट्ठे काम किया है और इसे प्राप्त करने में तुम्हारा भी बड़ा योग है और इसीलिए आज तुम यहाँ बीमार पड़े हो। इस कीमती वस्तु के लिए बड़ी भारी कीमत हम चुका रहे हैं।

मोतीलाल का देहान्त ६ फरवरी को हुआ और उनकी शवयात्रा का दिन राष्ट्रीय शोक-दिवस बन गया। गंगा के तट पर उनकी अन्त्येष्टि के समय लाखों लोग उमड़ पड़े।

पिता से आनन्द व स्नेह रखनेवाले पुत्र जवाहरलाल ने बड़े भावना-मय शब्दों में इस दृश्य का वर्णन किया है, सर्दियों के दिन थे संध्या का समय आ रहा था। ऊँची ज्वालाएँ आकाश की ओर उठीं और उस शरीर को भस्म कर दिया। हम निकट सम्बन्धियों के लिए तो वह इतना महत्त्वपूर्ण था ही,

इसके साथ ही भारत के लाखों लोगों के साथ भी गहरा सम्बन्ध रखता था। उस विशाल जन-समुदाय को गांधीजी ने भावुकता में भरे कुछ शब्द कहे तब सब लोग मौन गहरा दुख लिये वहाँ से अपने घरों को रवाना हुए। आकाश में तारे निकल आये थे और जब हम लौटे एकाकी और असहाय वे खूब चमक रहे थे। इन्दिरा बहुत ही एकाकी और बहुत ही दुखी थी। अपने दादू से तो उसे असीम प्यार था, वह दादू की आँखों का तारा थी। स्वतन्त्रता संग्राम के उन दिनों, देश के प्रति कर्तव्य ही सर्वोच्च महत्त्व का था। भारत की स्वतन्त्रता ही सबसे बड़ा लक्ष्य था और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए नेहरू परिवार ने अपने सब पारिवारिक, व्यक्तिगत और सामाजिक हितों की बलि चढ़ा दी थी; अपने सब सुख, सुविधाएँ उन्होंने छोड़ दिये थे। उनका बलिदान कर दिया ताकि उनका स्वतन्त्रता संघर्ष अधिक प्रभावित हो।

उसके माता-पिता ने इसका रास्ता भी दिखाया। माँ कमला बहुत बीमार थी और जवाहरलाल जेल में थे। नेहरूजी ने बड़े दुख में लिखा जब हममें से प्रत्येक को एक-दूसरे की बहुत ज्यादा जरूरत थी तो हमारे बीच दो बार जेल की सजा बाधा बनी। यदि मैं जेल से बाहर होता तो हो सकता कि कुछ उपयोगी उसके लिए हो पाता। कमला के पास जवाहर की उपस्थिति उस समय बहुत ही जरूरी और उपयोगी थी परन्तु ब्रिटिश सरकार तब तक उन्हें रिहा करने को तैयार न थी जब तक वह यह आश्वासन न दे देवें कि राजनीतिक संघर्ष में वह भाग नहीं लेंगे। नेहरू बड़ी दुविधा में थे। प्यारी पत्नी का जीवन जब खतरे में था तो जवाहरलाल उनके निकट होना चाहते थे परन्तु अपने आदर्शों और संकल्पों से हटकर सरकार को इस प्रकार का कोई आश्वासन भी नहीं दे सकते थे परन्तु कमला ने उनकी दुविधा समाप्त कर दी। जब कमला को ज्वर बहुत अधिक था तो जवाहरलाल को उनसे मिलने की अनुमति दे दी गई और उनके निकट आकर बैठे तो बड़ी बहादुरी से अपनी कमजोर-सी आवाज में मुस्कराती वह बोली, सरकार को यह आश्वासन देने की, यह क्या बात सुनने में आ रही है? इस प्रकार का कोई आश्वासन मत देना। और इससे इस विषय का फैसला हो गया। शीघ्र ही दुखी परन्तु गर्व

अनुभव कर रहा पति फिर जेल की नित्यचर्या में फंस गया।

जवाहरलाल जब जेल से बाहर होते तो उन्हें परिवार के मुखिया के रूप में जिम्मेदारी निभानी पड़ती। आर्थिक दृष्टि से घर की हालत बहुत बिगड़ चुकी थी और कैद की दो अवधियों के बीच एक बार जब अपनी मेज पर वे बैठे थे तो दिये जानेवाले बिलों की संख्या को देखकर वह स्तब्ध रह गये थे। अनेक पत्र आये थे जिनमें लोगों ने वित्तीय सहायता माँगी थी। परन्तु कोई साधन तो इसका था नहीं कि बिलों का भुगतान किया जाय। तभी उन्होंने अपने कंधों पर किसीका स्पर्श पाया। गर्दन घुमाकर उन्होंने देखा तो पाया कि मुस्कराती कमला उनके पीछे खड़ी है और इसमें उसके सबसे कीमती आभूषण और हीरे-जवाहरात रखे हुए थे। परम्परा के अनुसार ये सब चीजें एक दिन उसकी इकलौती बेटी को ही दिये जाने थे परन्तु कमला की इच्छा थी। उसके पति इन्हें लेकर बेच देवें और बिलों का भुगतान कर देवें। जवाहर को बड़ी हैरानी हुई। वह इन जवाहरातों को बेचना नहीं चाहते थे। वह विरासत में मिली परिवार की सम्पत्ति थी; "आप इन्हें ले लें, मैंने युगों से इन्हें नहीं पहना।" कमला बोली: "खादी के साथ ये हीरे-जवाहरात पहनने कुछ जंचते नहीं।" पति ने उसकी सलाह मान ली। इस बारे में फिर कभी दोनों में बातचीत नहीं हुई। परन्तु इस घटना से उन दोनों में पहले से भी अधिक समीपता एक-दूसरे में आ गई और ऐसी समीपता त्याग के बल पर ही आती है। इस प्रकार के और ऐसे ही अन्य अनुभवों को याद करते हुए जवाहरलाल ने अपनी आत्मकथा में बड़े भावनामय शब्दों में लिखा है: "हम कितने भाग्यशाली थे। मैं उससे कुछ कहता और वह सहमत हो जाती, यह अवश्य है कि हम कई बार आपस में झगड़े थे और एक-दूसरे से क्रुद्ध भी हुए थे परन्तु फिर भी हमने उस जीवनदायी स्नेह को कभी समाप्त नहीं होने दिया और जीवन के हर नये चरण में हम एक-दूसरे को पहले से बेहतर समझने लगे थे।

लगातार इस प्रकार के तनाव में रहने और परेशानियों में से गुजरने एवं बार-बार जेल जाने के कारण जवाहरलाल का स्वास्थ्य कुछ गिरने लगा था। उनके डाक्टरों ने सलाह दी की वह कुछ समय के लिए विश्राम करें।

जवाहरलाल ने परिवार के साथ एक मास के लिए श्रीलंका जाने का
ला किया। यूरोप से १९२५ में लौटने के बाद यह पहला अवसर था कि
ता, पुत्री और माँ एक साथ छुट्टी पर जाएँ। इन्दिरा ने इन छुट्टियों का बड़ा
द लिया। पिता जवाहरलाल अनेक स्थानों के आँखों-देखा हाल सुनाते और
स्थानों का ऐतिहासिक महत्त्व दर्शाते। साथ ही उन सौन्दर्यमय दृश्यों को
वह बनाते और उनके सौन्दर्य का भी बखान करते जाते।

नुवारा इलिया में लगभग दो सप्ताह उन्होंने आराम किया और शेष
मय तो वे सब लोग काफी व्यस्त रहे। वहाँ के लोग जवाहर से बड़ा प्रेम
रने लगे थे और उनके लिए फल, मक्खन, और सब्जियाँ आदि लाया करते
। उन लोगों ने श्रीलंका के अनेक स्थानों की यात्रा की। जवाहरलाल को
प्रनुरुद्धपुरा में बैठे हुए बुद्ध की मूर्ति बहुत पसन्द आयी। बाद में अगले वर्ष
ब वह देहरादून की जेल में थे तो उन्होंने इस प्रतिमा का चित्र अपने कमरे
लगाया हुआ था। इस प्रतिमा के चेहरे की रेखाएँ शांत भाव और दृढ़ता
ी परिचायक थीं और इनसे जवाहरलाल को कुछ मानसिक शांति मिलती
ी। उन्होंने कहा है : "कोई धार्मिक भावना से मैं बुद्ध की उस प्रतिमा की
ओर आकर्षित नहीं हुआ था। यह तो बुद्ध का व्यक्तित्व था जिसने मुझे आकर्षित
किया था। इसी प्रकार ईसा के व्यक्तित्व ने भी मुझे बहुत प्रभावित किया
था।"

श्रीलंका में जवाहर ने अनेक बौद्ध भिक्षुओं से भेंट की। उनकी जाहिरा
शांत जीवन से जिसमें संघर्षों का अभाव ही था वह बड़े आकर्षित हुए परन्तु
वह जानते थे कि उनके जीवन को तो अनेक तूफानों में से गुजरना है। वह यह
भी समझते थे कि यदि वह किसी सुरक्षित स्थान पर आश्रय पा भी लेंगे तो
उनको सन्तोष नहीं होगा। यह तो उनके स्वभाव में ही था कि जिन कामों
से उन्हें प्रेम था उनके लिए खतरा उठाना तो उनके स्वभाव में ही था। जितना
बड़ा खतरा होता उतनी ही बड़ी चुनौती वह अपने लिए समझते।

जवाहरलाल ने श्रीलंका के सौंदर्य का आनन्द भरपूर लिया। वहाँ पर
एकबार कुछ अध्यापकों और छात्रों ने उनकी कार को रोक लिया और उनका

भिनन्दन किया। एक लड़का जवाहरलाल के पास आया और बिना किसी वाल और बहस के बोला : "मैं तो बिल्कुल नहीं लड़खड़ाऊँगा···" औ वाहरलाल ने उस छात्र की बात को मान लिया। उन्होंने जीवन के तूफान किसी भी कारण लड़खड़ाने का निर्णय नहीं किया।

श्रीलंका से रवाना होने के बाद वे दक्षिणी भारत में केप कुमार तक गए हाँ पर काफी शांति उन्होंने अनुभव की। वह वहाँ से ट्रावनकोर, कोचीन सूर, मालाबार और हैदराबाद यात्रा पर गए। ट्रावनकोर को तो भारत क द्यान कहा जाता है। इस प्रदेश में हमेशा हरियाली बनी रहती है। अनेक दियाँ इस प्रदेश में से बहती हैं। सागर तट पर मीलों तक नारियल के वृ ।

मालाबार के तटवर्ती प्रदेश में अनेक नगर हैं जहाँ पर सीरियाई ईसाइय ा वास है। ईसाइयत का भारत में प्रवेश पहली शताब्दी में ही हो गया था क्षिण भारत में उनका सुदृढ़ गढ़ बन गया था। जवाहरलाल ने दक्षिण स्टोरियन उपनिवेश भी देखा। उनके बिशप ने जवाहरलाल को बताया कि स मत के अनुयाइयों की संख्या लगभग दस हज़ार है। उनको यह जानक रानी हुई क्योंकि उनकी धारणा थी कि इस जाति के लोग अब वह ही थे।

वे तब हैदराबाद गए और श्रीमती सरोजिनी नायडू और उनकी पुत्री ा ाथ रहे। वहाँ पर निवास के दौरान कमला ने महिलाओं में अपने प्रि वषय—'पुरुष निर्मित नियमों से महिलाओं की मुक्ति।' का प्रचार किया न्दिरा को इस यात्रा से न केवल बहुत आनन्द ही मिला वरन् उसकी जान ारी में भी बड़ी वृद्धि हुई।

उनकी यह छुट्टियाँ सात सप्ताह चलीं। वहाँ से लौटने पर जवाहरला फेर कांग्रेस की राजनीति के भंवर में कूद पड़े। जून में इन्दिरा को 'प्यूपि ग्रॉन स्कूल' पूना में प्रविष्ट करवा दिया गया।

छठां अध्याय

शिक्षा : विश्व की झलक

बालिका इंदिरा बड़ी हो रही थी और माता-पिता को उसकी शिक्षा की चिन्ता होने लगी थी। उस समय देश में सभी विदेशी वस्तुओं के प्रति जो विद्रोह था उसे देखते हुए जवाहर अंग्रेजी स्कूल में इंदिरा को नहीं भेजना चाहते थे। शिक्षा जैसी वह चाहते थे सामान्य स्कूल में वैसी उपलब्ध नहीं थी, ऐसा भी जवाहर अनुभव करते थे। इसलिए इंदिरा को घर पर ही शिक्षा देने का फैसला किया गया और विशेष शिक्षक रखकर उसकी शिक्षा की व्यवस्था की गयी। जवाहर ने यह देखकर कि इंदिरा को भली प्रकार शिक्षा नहीं मिल रही और राजनैतिक कार्यों के कारण उसके साथ रहना उनके लिए सम्भव भी नहीं, स्वयं पत्र लिखकर उसे कुछ शिक्षा देने का संकल्प किया।

इंदिरा जब ग्यारह वर्ष की थी तो पहली बार जवाहर ने उसको पत्र लिखा। जवाहर स्वयं तो राजनैतिक कार्यों में व्यस्त होने के कारण इलाहाबाद की कड़कड़ाती धूप और सख्त गर्मी में ही बने रहे परन्तु इंदिरा को उन्होंने मसूरी में समय काटने के लिए भेज दिया था। अपने पत्र में उन्होंने इंदिरा को लिखा : "जब तुम मेरे पास होती हो तो अनेक प्रश्न मुझसे पूछती हो और मैं यथाशक्ति उनके उत्तर देने का प्रयास भी किया करता हूँ। अब तुम मसूरी में और मैं इलाहाबाद में हूं। हम दोनों में बातचीत तो अब हो नहीं सकती। इसलिए अब मैं कभी-कभी तुम्हें पत्र लिखा करूंगा। इस धरती तथा अन्य देशों की छोटी-छोटी कहानियां उनमें लिखा करूंगा। इन पत्रों के द्वारा नेहरू ने इंदिरा को भूगर्भ-विज्ञान, इतिहास, प्रागैतिहासिक मानव और विश्व इतिहास के बारे में काफी जानकारी दी। इन पत्रों ने स्वतंत्रता संग्राम का महत्व समझने में भी इंदिरा की सहायता की। इसमें भाग लेकर देश के लिए

जीवन बलिदान करने की प्रेरणा भी वह प्राप्त करती रही।

जवाहर इन पत्रों के माध्यम से इंदिरा को न केवल जानकारी ही देते थे वरन् उसे स्वतंत्रता संग्राम का एक कुशल सिपाही भी बनाने का प्रयास करते थे।

"यदि हमें भारत के इस स्वातंत्र्य संग्राम में सिपाही बनना है", उन्होंने पुत्री इंदिरा को लिखा था : "तो हमें जो भारत की गरिमा थाती में मिली है उसे अत्यन्त पवित्र समझकर जी-जान से उसकी रक्षा करनी है। कई बार हमारे मन में यह दुविधा पैदा हो सकती है कि हम क्या करें ? क्या करना सही है और क्या गलत, इसका फैसला करना कोई आसान बात नहीं। जब तुम इस प्रकार की किसी दुविधा में पड़ो तो क्या गलत है और क्या ठीक यह जानने की तुमको एक कसौटी मैं बतलाता हूँ, हो सकता है यह तुम्हारे काम आए। कभी कोई काम छुपाकर न करो और न ही कोई ऐसी चीज़ करो जिसे तुम छिपाना चाहो, क्योंकि किसी चीज के छुपाने का अर्थ है कि तुम डरी हुई हो और डर तो सदैव खराब होता है। तुम्हें किसी प्रकार डरना शोभा नहीं देता। बस, तुम बहादुर बनो। बाद की सब बातें तो ठीक हो जाएँगी। यदि तुम बहादुर हो तो तुम डरोगी नहीं और न ही कोई ऐसी चीज तुम करोगी जिसपर तुमको लज्जित होना पड़े। तुम तो जानती हो कि हम इस अपने महान् स्वतंत्रता संग्राम को महात्माजी के नेतृत्व में लड़ रहे हैं। कुछ भी छुपाने अथवा रहस्य में रखने की हमें जरूरत नहीं। जो कुछ हम कहते और करते हैं उससे हमें डर नहीं। हमें कुछ भी छुपाने की ज़रूरत नहीं। दिन की रोशनी में खुले तौर पर हम सब काम करते हैं। इसी प्रकार अपने जीवन में भी हमें चाहिए कि हम कुछ भी छुपकर न करें। अपनी प्राइवेसी की तो हमें आवश्यकता होती है और वह रखनी भी चाहिए, परन्तु छुपाकर काम करने को प्राइवेसी नहीं कहते। प्यारी बेटी ! तुम यदि ऐसा करोगी तो बड़ी बहादुर बनोगी। किसी चीज से डरोगी नहीं, तुम हर तरह की आपत्तियों का साहस से मुकाबला कर सकोगी और उसके नुकसान में भी डगमगाओगी नहीं, चाहे कुछ भी क्यों न हो जाय !

"तुम भाग्यवान हो, इसलिए कि तुम इस देश में लड़े जा रहे इस महान् स्वतंत्रता संग्राम को देख रही हो और इसकी साक्षी हो। तुम्हारा यह भी सौभाग्य है कि तुमको बहुत ही प्यारी और महिमामयी माँ मिली है। यदि तुमको कभी किसी प्रकार की कोई कठिनाई आ जाय तो तुमको इससे अधिक बेहतर दोस्त और नहीं मिलेगा। बेटी ! ईश्वर करे तुम बड़ी होकर देश की बहादुर सिपाही बनो।"

बालिका इंदिरा को अपने पिता से इस प्रकार की शिक्षा अनेक वर्ष तक मिलती रही। जवाहर को जब भी समय मिलता वह उसे पत्र लिखा करते थे।

मगर जहाँ तक स्कूली शिक्षा का सवाल है वह इंदिरा को, अन्य बच्चों की तरह नहीं मिल सकी। शुरू में इंदिरा को दिल्ली के एक किंडरगार्टन में भेजा गया और बाद में इलाहाबाद के एक कन्वेंट में और फिर एक बोर्डिंग स्कूल में। इंदिरा का कहना है : "मैंने इतने स्कूल बदले कि याद करना कठिन है कि मैं किन-किन स्कूलों में पढ़ी थी।"

इंदिरा जब छह साल की थीं तो उसे इलाहाबाद के एक स्कूल में प्रविष्ट किया गया। इस स्कूल की प्रबन्ध व्यवस्था कुछ यूरोपियन महिलाओं के हाथ में थी, इस कारण इस स्कूल में उसे प्रविष्ट करवा नेहरू प्रसन्न नहीं थे। इस बात को लेकर मोतीलाल नेहरू से उनका कुछ विवाद भी हुआ। परन्तु स्कूल में प्रविष्ट करवाने के इच्छुक वह इसलिए थे कि इन्दिरा को कुछ साथी वहाँ पर अपनी आयु के मिल सकें। परन्तु अपनी आयु के बच्चों का साथ थोड़े से दिन ही इन्दिरा को मिल सका। राजनैतिक कार्यों के कारण आनन्द भवन वासी नेहरू परिवार का जीवन पूरी तरह से अस्त-व्यस्त हो चुका था। इन्दिरा को पारिवारिक कारणों से किसी भी स्कूल में अधिक टिकने का अवसर नहीं मिल सका।

इन्दिरा पर दो तरह के प्रभाव पड़े। एक तो परिवार के सम्पर्क में आने-वाले महान् व्यक्तियों का प्रभाव और दूसरे भारत में और यूरोप में स्कूली शिक्षा में अनेक कारणों से आनेवाली बार-बार की बाधा का। इन्दिरा के जीवन के निर्माणकाल में भारतीय राजनैतिक क्षेत्र में भारी परिवर्तन हो रहे थे, उनका असर भी उसपर सब पड़ा।

इन्दिरा के दादा मोतीलाल नेहरू अपने ज़माने के सफल वकील थे, उनकी आय भी काफी थी। शिक्षा के बारे में उनका विचार था कि बच्चों को गवर्नेस घर में रख देनी चाहिए, अथवा यूरोपियन मिशनरी लोगों द्वारा चलाए जानेवाले मंहगे स्कूलों में उच्च वर्ग के अन्य भारतीय परिवारों के बच्चों के साथ पढ़ने के लिए उसे भेजना चाहिए। परन्तु इन्दिरा के पिता जवाहरलाल समाजवादी विचारधारा से प्रभावित थे, वह चाहते थे कि इन्दिरा का विकास उसी वातावरण में हो जिसमें देश के सामान्य मध्यम वर्ग के परिवारों के बच्चों को शिक्षा मिलती है।

मोतीलाल का घर में बड़ा प्रभाव था। वे पुराने रईस और बुजुर्ग थे। उनकी इच्छा थी कि बच्चों को अच्छे रहन-सहन का अवसर मिले, अच्छी शिक्षा मिले। उनके कारण घर का सारा वातावरण बड़ा प्रबुद्ध, उदार और प्रेममय रहता था।

स्वतंत्रता से पूर्व वह केन्द्रीय असेम्बली में विरोधी दल के नेता थे। जिस समय भगतसिंह और बटुकेश्वर दत्त ने ८ अप्रैल १९२९ को केन्द्रीय असेम्बली के अधिवेशन में बम फेंके तो वे भी वहाँ पर थे। उस समय वहाँ पर जो घबराहट पैदा हुई और जो भगदड़ मची उसमें अकेले मोतीलाल ही थे जो शान्त और निरद्विग्न बैठे रहे। वह ऐसे व्यक्ति थे जो किसी भी प्रकार की आपदा में घबराये बिना शान्ति व साहस से उसका मुकाबला कर सकने में समर्थ थे। बेटे जवाहर और पोती इन्दिरा की उनपर गहरा प्रेम व निष्ठा थी। उनकी मृत्यु पर जवाहरलाल ने लिखा था: "हमारे परिवार ने एक प्यारा मुखिया खो दिया है जो हमें शक्ति और प्रेरणा देता रहता था।··· दिन पर दिन बीतते जाते हैं परन्तु उनके अभाव से जो कमी हमें प्रतीत होती है वह दूर होती नज़र नहीं आती। उनकी अनुपस्थिति को सहन करना अभी तक वैसा ही कठिन बना हुआ है; उनके विदा होने पर हमारे मन अभी तक दुखी हैं। परन्तु असल बात तो यह है कि यदि वह जीवित होते तो उनकी कामना होती कि हम शोक से हार न मानें, वरन् साहस से इसका सामना करें और इनपर विजय प्राप्त करें।" स्वयं इन्दिरा ने भी एक बार कहा था कि अपनी बाल्यावस्था में मुझपर पिता से भी अधिक दादू का प्रभाव था। मैं

उनको अत्यन्त जोरदार व्यक्ति मानती और उनकी बड़ी प्रशंसक थी। जिन्दगी को जिस रंगीनी से वह जीते थे मुझे बड़ी पसन्द थी। बाद में मेरे पिता को भी आनन्द से जीवन व्यतीत करने का शौक हो गया। परन्तु मेरे मन पर तो अपने दादू की महानता की बड़ी जबरदस्त छाप है। मेरा अर्थ यह नहीं कि वह शारीरिक दृष्टि से किसी तरह मोटे ताजे थे। मुझे कुछ ऐसा मालूम देता था मानो उन्होंने सारी दुनिया को अपने में समेट लिया था। उनकी हँसी मैं आज तक नहीं भूल पाती हूँ, उनके हँसने का तरीका मुझे बहुत प्यारा लगता था।"

पर शायद इन्दिरा के मन पर जिस व्यक्ति का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा, वह थे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी। उसके दृष्टिकोण तथा चरित्र को उन्होंने बहुत प्रभावित किया। असल में बापू ने ही नेहरू परिवार के मन में सांसारिक महत्त्वाकांक्षाओं को समाप्त किया और उनको विलास के संगमरमर के महल से निकालकर विनम्रता और सादगी की कुटिया में ले आए। महात्माजी ने ही उनको वकालत का पेशा छोड़कर अपना जीवन जनता के सेवक के रूप में बिताने की प्रेरणा दी थी। इस महान् व्यक्ति के बारे में जितना लिखा गया है शायद उतना इस बीसवीं शताब्दी के और किसी व्यक्ति के बारे में नहीं। यह है भी उचित क्योंकि मानवता और उस विशाल देश के वासियों पर जितना प्रभाव इस व्यक्ति ने डाला है और किसी व्यक्ति ने उतना नहीं।

इन्दिरा को स्मरण नहीं कि पहली बार उसने कब गांधी जी को देखा : "मुझे याद नहीं कि कोई ऐसा समय भी था जब महात्माजी न हों। वह तो मेरे जीवन और मेरी चेतना का अंग बन चुके थे। महात्माजी जब भी इलाहाबाद में आते थे सदैव आनन्द भवन में ठहरते। महात्माजी बच्चों को बड़ा प्यार करते थे और पालने में पाँव मारती इन्दिरा को खिलाने से वे अपने को रोक न पाते। चार वर्ष की आयु में इन्दिरा अपने दादू मोतीलाल, पिता जवाहरलाल तथा परिवार की अन्य महिलाओं के साथ महात्माजी के पास साबरमती आश्रम गयी। उस वर्ष कांग्रेस का अधिवेशन अहमदाबाद में हो रहा था। यह स्थान साबरमती के निकट ही था। वहाँ पर पहली बार इन्दिरा को कठोर और अनुशासित जीवन का अनुभव हुआ। वहाँ प्रातः चार

बजे उठकर साबरमती नदी के तट पर प्रार्थना के लिए सबको इकट्ठा होना पड़ता था। भोजन भी वहाँ का बिल्कुल ही स्वादहीन था, उसमें मसाले मिर्च बिल्कुल ही नहीं होते थे। सोने के लिए फर्श पर ही बिस्तर बिछाना पड़ता। निवास स्थान को बुहारना और साफ भी स्वयं ही करना होता था। फर्श को धोने का काम भी खुद ही करना होता था।

इन्दिरा ने इस नए जीवन से किसी तरह परेशानी नहीं अनुभव की। आश्रम के कठोर जीवन में उसने अपने-आपको बिना किसी कठिनाई के ढाल लिया था। वहाँ इन्दिरा अकेली बच्ची थी। इन्दिरा शुरू में तो अपने दादू और पापू को याद करके बहुत रोयी और अपनी आँखें उसने सुजा लीं परन्तु महात्माजी के थपकी देते ही उनके स्पर्श-मात्र से वह चुप हो गयी। महात्माजी ने नन्ही बालिका का विश्वास जीत लिया था। उन्होंने उस बालिका में श्रम की महत्ता और हाथ का काम करने में गौरव की भावना पैदा कर दी थी।

दस वर्ष के बाद १९३२ में गांधीजी ने 'रेम्जे एवार्ड' के द्वारा अछूतों को अलग मतदान का अधिकार दिए जाने के विरोध में आमरण अनशन किया था। इस निर्णय से पहले तो जवाहरलाल एकदम क्रुद्ध हो उठे और महात्माजी की धार्मिक और भावात्मक पहुँच पर उन्हें खेद हुआ। अपने देशवासियों से भी वह क्रुद्ध थे कि सामाजिक दृष्टि से इतने पिछड़ेपन के कारण ही इस प्रकार की नाजुक स्थिति पैदा हो गयी थी। यह आशंका भी थी कि कहीं अनशन के दौरान महात्माजी की मृत्यु न हो जाय। इस प्रकार के मानसिक संघर्ष की स्थिति में जवाहरलाल ने इन्दिरा को पत्र लिखा था जो उस समय पूना के स्कूल में पढ़ रही थी।

"यदि बापू मर गए तो ? तब भारत कैसा लगेगा ?···ओह भारत बड़ा भयावना देश है जो अपने इस महान् व्यक्ति को मरने देगा, भारतवासी गुलाम हैं और उनके मन भी गुलामों के मन हैं। वे छोटी-छोटी बातों पर आपस में झगड़ते और कटुता पैदा करते रहते हैं। असली लक्ष्य स्वतंत्रता को भुला देते हैं। परन्तु गांधीजी अनुभूति के माध्यम से जिस निष्कर्ष पर पहुँचे थे वह बाद में सही निकला। तब जवाहरलाल ने इंदिरा को लिखा : "यह भीषण

थल जो देश में हुई उसका समाचार आया। हिन्दू समाज में उत्साह
र दौड़ गयी, ऐसा प्रतीत होने लगा कि छूआछूत का अन्त आ ही गया
। मुझे लगा कि यरवदा जेल में बैठा यह छोटा-सा आदमी कितना
ादूगर है। वह अपने लोगों के दिलों को छूने के तरीके किस तरह से
है।" उस समय तक स्वयं इन्दिरा भी महात्माजी से बहुत प्रभावित
ो थी। उसने उनके कार्य में योगदान भी शुरू कर दिया था। पिता
पाते ही (जिसमें लिखा था कि अगर बापू की मृत्यु हो गयी?) उसने
से छुट्टी ली और अपनी चचेरी बहनों के साथ यरवदा जेल में आमरण
। कर रहे बापू से मिलने गयी। यह जेल पूना के निकट ही थी। तब
अपने स्कूल में ही कुछ रचनात्मक कार्य करने का फैसला किया। स्कूल
आस के लोगों का अछूतों के प्रति हृदय परिवर्तन करने का प्रयास करने
अपनी अध्यापिका श्रीमती वकील के साथ इन्दिरा ने एक दिन का
न किया। उसने छूआछूत को दूर करने की आवश्यकता बताते हुए एक
। लिखा और बाद में महात्माजी के जीवन को बचाने के लिए की
। में इसीके आधार पर भाषण किया : "बापू को जिस चीज की जरूरत
देश ने कहा, "वह हमारी प्रार्थनाएँ नहीं वरन हमारे कार्यों की, हमें
। बचाने के लिए कुछ करना चाहिए।" अगले दिन सवेरे इन्दिरा ने स्कल
मादारनी की छोटी बेटी को अपना लिया। रगड़-रगड़कर उसे नहलाया,
गाया और उसके बालों में कंघा किया। अपने जेब खर्च में लाए नये
को उसने इस बच्ची को पहनाया और उस अछूत की बेटी को उस
अपने पास बुलाया भी। बापू के लिए कुछ करने के बाद इन्दिरा को
। तरह की राहत मिली। उसे लगा कि उसने कोई उपलब्धि प्राप्त की
उसका विश्वास मजबूत हुआ कि विभिन्न जातियों तथा भाषाओं की
त्ता के बावजूद भारत राष्ट्र एक ही है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है
स प्रकार से जात-पात के बन्धन से इन्दिरा ने जो अपने को मुक्त किया,
परिणामस्वरूप नौ साल बाद १९४१ में उसने फीरोज गांधी को अपना
चुनने की हिम्मत की।

इन्दिरा के व्यक्तित्व को समझने के लिए यह ध्यान से समझ लेना चाहिए

कि उसके स्कूली जीवन में बड़ी बाधाएँ आई है। पहले तो पिता जवाहरलाल को बार-बार जेल जाना पड़ता था जिसके कारण परिवार में जीवन असामान्य हो जाता। दूसरे उसकी माँ बार-बार बीमार पड़ती और अन्त में वह तपेदिक की शिकार हो गयी। इन दोनों का परिणाम था कि घर के जीवन में बार-बार व्यवधान आते रहते।

इन्दिरा को एक के बाद एक करके अनेक स्कूल बदलने पड़े। पहले दिल्ली में एक किंडरगार्टन में उसे डाला गया, फिर छह वर्ष की आयु में वह इलाहाबाद के एक कन्वेंट स्कूल में पढ़ने के लिए भेजी गयी और उसके बाद १९३२-३४ में वह पूना छात्रों के अपने स्कूल में उसने शिक्षा प्राप्त की। अगले वर्ष १९३५-३६ में उसने स्विटज़रलैंड के वैक्स नगर में वर्ष से कुछ समय कम तक शिक्षा प्राप्त की। और तब ऑक्सफोर्ड के समरविले कालेज में उसने शिक्षा प्राप्त की। और आक्सफोर्ड में पढ़ते समय उसे प्लूरिसी का आक्रमण हुआ और एक वर्ष तक पढ़ाई छोड़कर उसे १९३८-३९ में एक वर्ष तक स्विटज़रलैंड के लेसिन नगर में रहना पड़ा। परन्तु इन्दिरा को शिक्षा में जो व्यवधान आए उनको पूरा किया अपने पिता के पुस्तकालय में से बार-बार किताबें पढ़कर। बाल्यावस्था से ही वह खूब पढ़ने लगी थी और साथ ही पिता जवाहर ने भी उसको शिक्षा देकर निरंतर उसके अध्यापक, उपदेशक, मार्ग दर्शक की भूमिका अदा की।

जवाहरलाल जब १९३१ में जेल में थे तो उन्होंने विश्व इतिहास के बारे में इन्दिरा को पत्र लिखने शुरू किए। इन पत्रों के माध्यम से इन्दिरा को विश्व इतिहास से अच्छी जानकारी हो गयी और बाद में उसके राजनैतिक विचारधारा की यह आधार बनी। बाद में 'ग्लिम्पिस ऑफ वर्ल्ड हिस्टरी' अथवा 'विश्व इतिहास की झलक' के नाम पुस्तकाकार में भी छपे।

जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पुत्री को अच्छी पुस्तकें पढ़ने की सलाह देते हुए बताया कि कौन-कौन-सी पुस्तकें पढ़ने लायक हैं और साथ ही इन पुस्तकों को पढ़ने का तरीका भी उन्होंने बताया। नव वर्ष पर सदैव ही इन्दिरा को पिता से साइंस आफ लाइफ, एच० जी० वेल्स, जुलियन हक्सले और जी० पी० वेल्स आदि लेखकों की प्रसिद्ध पुस्तकें उपहार में प्राप्त हुआ करती थीं।

बीच बीच में नेहरू अपने पढ़ने के आधार पर अनेक प्रेरणास्पद विचार उसे प्रेषित किया करते थे।

नेहरू की इन्दिरा को औपचारिक शिक्षा देने की इच्छा थी। उन्होंने राष्ट्रीय विचारोंवाली पारसी दंपति श्री और श्रीमती कुंवरबाई जहांगीर वकील द्वारा चलाए स्कूल की चर्चा सुनी थी। उन्हें यह भी पता चला था कि शिक्षा के बारे में इस दंपति के विचार उनके विचारों से मेल खाते हैं। गांधीजी ने भी यह आदेश दिया था कि इन्दिरा को जेल नहीं वरन् स्कूल जाना चाहिए, इसलिए नेहरू ने प्युपिल ऑन स्कूल में इन्दिरा को पढ़ने के लिए भेजा। इन्दिरा वहां पर १९३२-३४ तक पढ़ती रही। जहां तक पढ़ाई का सवाल है इतिहास और अंग्रेजी में वह विशेष योग्य थी। गणित में भी वह बहुत तेज थी और फ्रांसीसी पढ़ने में उसे कठिनाई नहीं हुई तथा साहित्य में तो वह अन्य बच्चों से कहीं आगे थी। अपने साथी सहपाठियों के विपरीत वह नियमित रूप से प्रतिदिन समाचार पत्र पढ़ती थी जो निबंध वह श्रेणी में लिखा करती थी उसका विषय सदैव राजनैतिक ही हुआ करता था। छात्र प्रति वर्ष मॉक पार्लियामेंट का आयोजन किया करते थे और जब भी ऐसा अवसर आता सदैव इन्दिरा प्रधान मन्त्री बना करती। वह अपने स्कूल की साहित्य समिति की भी सचिव थी। और मूलतः संकोची स्वभाव की होने के बावजूद वह वाद-विवाद में यदि उसकी रुचि उनमें होती तो अपने पक्ष को बड़े प्रभावी ढंग से रखती थी। इन्दिरा का यह भी कहना था कि पिता जवाहर का स्वभाव भी संकोची था और जीवन के अन्तिम दिनों तक वह ऐसा रहा भी। इसी प्रकार जब नाटकों में इन्दिरा भाग लेती तो उसका संकोच दूर हो जाता। टैगोर के ऋतुराज नामक नाटक में और इसके गुजराती अनुवाद 'वाहिनों भेजें' में उसने भाग लिया। स्कूल में होनेवाले खेलों में हुतु और कबड्डी आदि खेलों में भी बड़े उत्साह से भाग लेती थी। पिकनिक के लिए और पैदल देहात की यात्रा की भी शौकीन थी परंतु सबसे अधिक शौक तो उसे अपने पिता के समान पर्वतारोहण का था। इन्दिरा ने लाठी चलाना सीखा और लेजियम में भी वह भाग लिया करती थी।

अपनी अन्य सहपाठिनों से आयु में बड़ी होने के कारण वह उसमें माता के मातृत्व की भावना से रुचि लिया करती थी और अनेक छोटी लड़कियों के वेश पहनने में, उनकी चोटी बनाने में और उनको पढ़ाने में रुचि लिया करती थी। उसकी अध्यापिका शिक्षिका श्रीमती वकील का कहना था : "वे सब इन्दिरा को दीदी कहती थीं, इन्दिरा में संगठन शक्ति बहुत अच्छी थी और स्वभाव भी उसका सब बातों को संगठित करने का था। सभी खेल, पिकनिक और मनोरंजन यात्राएँ, सभाएँ और वाद-विवाद प्रतियोगिताएँ इन्दिरा द्वारा ही आयोजित की जाती थीं। परन्तु रात को जब सब बत्तियाँ बुझ जातीं तो उसके कमरे की अन्य लड़कियाँ बिस्तर पर लेटी-लेटी इन्दिरा के सुबकने की आवाज कभी-कभी सुनतीं। उसके पिता जेल में थे और उसकी माता भी या तो जेल में थी और या बीमार थी, इसी कारण ही उनको याद करके इन्दिरा सुबकती होती। बीच-बीच में पिता से मिलनेवाले पत्र ही उसे कुछ राहत देते थे। हमें स्वतन्त्रता तो चाहिए ही, परन्तु हमें स्वतन्त्रता के अतिरिक्त कुछ और भी चाहिए। हम अपने देश की गन्दगी, व गरीबी और यहाँ फैले दुख को बुहार फैंकना है। हमें अपने हजारों करोड़ों देशवासियों के मन से भी झाड़-झंखाड़ों की मकड़ी के जालों को बुहार फैंकना है जिनके कारण वह हमारे सामने आए इस महान् कार्य के बारे में अच्छी तरह से सोच-विचार नहीं सकते और न ही इसमें इस कारण हमें सहयोग ही दे पाते हैं। यह कार्य बड़ा महान् है और हो सकता है कि इसमें समय लगे···परन्तु स्वतन्त्रता तो ऐसी देवी है जिसे पाना कोई सरल कार्य नहीं। वह भी बलिदान माँगती है।"

माँ कमला बहुत ही धार्मिक वृत्तिवाली थीं। वे प्रायः पूजा-पाठ और ध्यान में रहती थीं। उन्हें अपनी मृत्यु का कुछ आभास भी हो गया था। बेटी इन्दिरा के साथ घण्टों ही वह हुगली नदी के तट पर धीमी-धीमी बहती गंगा नदी को देखा करतीं। शायद नदी का जो बहाव था वह उन्हें जीवन के बहाव के समान प्रतीत होता था और जो अन्त में ऐसा आनन्द शक्ति सीत में मिल जाता है जिस प्रकार नदी की जलधारा बंगाल की खाड़ी में जा गिरती थी। भारतीय दार्शनिक विचारधारा के अनुसार जीवन निरन्तर बहता है ठीक उसी प्रकार जैसे को नदी की धारा बहती रहती है। पुरानी जिन्दगी खत्म

होने पर नई जिन्दगी उभरती है, प्रौढ़ मां के पास बैठी इन्दिरा इसीका उदाहरण प्रस्तुत करती थी। हमें यह तो पता नहीं लगता कि जल आता कहां से है और जाता कहां है। इस प्रकार जीवन के आदि और अन्त तक कुछ पता नहीं चलता। जीवन के अन्तिम दिनों में कमला के मुख पर जो तेज दिखाई देता था उससे साफ था कि ध्यान और अध्ययन से उसने ऐसा तृप्ति-दायक दर्शन अपने लिए ढूंढ लिया था जो उसके मन में सन्तोष भाव बनाये रखता था और विश्व शक्ति से उसे जोड़ देता था। वह अभी युवती ही थी, जीवन चुनौतियों भरा था और पति के प्रति प्रेम तथा बच्ची इन्दिरा के प्रति स्नेह की भावना खिल रही थी अपने इन प्यारे साथियों के संग जो आनन्द और प्रसन्नता उसे प्राप्त होती थी वह उसे छोड़ना नहीं चाहती थी। परन्तु उन्हें मालूम था कि उनका रोग अत्यन्त घातक है और ये भौतिक सम्बन्ध ज्यादा देर तक नहीं बने रह सकते इसीलिए उन्होंने अपने मन को इस प्रकार तैयार कर लिया था कि जब समय आए तो मृत्यु का बिना कष्ट के स्वागत कर सकें।

इन्दिरा ने जब दसवीं श्रेणी की परीक्षा पास की तो जवाहरलाल उसे कालेज में भेजने के इच्छुक थे। परन्तु उन दिनों कालेजों में जो घुटन का वातावरण था वह जवाहरलाल को पसन्द न था। जेल में कैद के दिनों उन्होंने रवीन्द्रनाथ टैगोर से पत्र-व्यवहार करके इस सम्भावना का पता चलाया कि क्या इन्दिरा को कुछ समय के लिए शान्ति निकेतन भेज दिया जाय। जवाहर-लाल की इच्छा थी कि अधिक नहीं तो कम से कम एक वर्ष के लिए तो इन्दिरा वहां पर अध्ययन करे ही, परन्तु इस बारे में अन्तिम फैसला उन्होंने इन्दिरा से बात करके ही लेने का निश्चय किया। उनका ऐसा मत था कि बच्चों पर दूसरों के निर्णय थोपे नहीं जाने चाहिए। जहां तक पढ़ाई के विषय का सवाल था वह स्वयं वहां पहुंचकर चुन सकती थी। इन्दिरा ने वहां जाना स्वीकार कर लिया और जुलाई १९३४ में जब शान्ति निकेतन में नया शैक्षिक सत्र शुरू हुआ तो इन्दिरा ने कला-विभाग में प्रथम वर्ष में प्रवेश लिया।

शान्ति निकेतन अत्यन्त सुन्दर स्थान है। कलकत्ता महानगरी के निकट ही बसे इस शिक्षा केन्द्र का वातावरण बहुत शान्तिपूर्ण है। टैगोर का उद्देश्य

ारत की सांस्कृतिक धरोहर को पुनः जीवित करना था। उनकी प्रेरणा से तिभाशाली लेखक, संगीतज्ञ और कलाकार इस सांस्कृतिक केन्द्र शान्ति निके-न के प्रति आकर्षित हुए थे। वहाँ आकर उन्होंने भारत की युवा शक्ति को पनी सेवाएँ समर्पित कर दी थीं। वहाँ के वासी कठोर और सादा जीवन यतीत करते थे और सौन्दर्य तथा कुशलता से कार्य करना उनका लक्ष्य रहता ा। वहाँ पर सम्पन्न घरानों के छात्र पढ़ने आए हुए थे। टैगोर चाहते थे कि किशोर और युवक उस जीवन की कठोरताओं को अच्छी तरह से समझ और अनुभव कर लें जिनमें से भारत की साधारण जनता को गुज़रना ड़ता है। उनका ऐसा सोचना महात्मा गांधी की भावनाओं के ही अनुरूप था, रन्तु साथ ही टैगोर यह भी चाहते थे कि उनको सत्यम् शिवम् सुन्दरम् के नुसार ही जीवन का समग्र रूप से दर्शन हो। सभी छात्रों को आत्म-र्भर रहना सिखाया जाता था। उनको प्रातः साढ़े चार बजे उठना होता था, पने बिस्तर लपेटकर रखने होते थे और इसके बाद प्रातःराश कर सवेरे ६ जे कक्षाओं में उपस्थित होना होता था और इसी प्रकार दिन में उनका कार्य लता था। इन सब कामों में छात्र-छात्राओं को स्वयं अनेक काम करने पड़ते । इन्दिरा खद्दर की साड़ी पहने और नंगे पाँव वहाँ पर पहुँची और इस ठोर जीवन के अनुरूप अपने को ढाल लिया। असल में वहाँ के और छात्र न्दिरा को इस रूप में देखकर बड़े चकित रह गये थे। उनकी कल्पना तो थी इन्दिरा तो बड़ी सजी-सजीली होगी, ऊँची एड़ी के जूते और फ्रांसीसी चिकन फ़ोन साड़ी पहन रखी होगी।

शान्ति निकेतन में इन्दिरा की सहपाठी श्रीमती अशोक सिन्हा का कहना है : वह अति संकोची स्वभाव की और गम्भीर थी परन्तु रुचि लेनेवाली थीं। ध्ययन के समय वह बहुत ही गम्भीर और अपने-आप में खोई रहती थीं। रन्तु बाद में वह अपने छात्रावास के साथियों और कक्षा के सहपाठियों के साथ ोरंजन और दिल-बहलाव करतीं। नियमित कक्षाओं के अतिरिक्त वह त्रकला, संगीत और नृत्य सीखने की इच्छुक थी। अपना बहुत-सा समय वह ला भवन में ही व्यतीत करतीं अनेक बार वह टैगोर के कला कक्ष में चली जाती र कोने में बैठ उस महान् कलाकार को तन्मयता से कार्य करते देखती रहती"।

इन्दिरा का कहना है कि उसके जीवन पर टैगोर का बहुत अधिक और
स्थायी प्रभाव पड़ा है : "मुझ पर टैगोर का प्रभाव बहुत अधिक पड़ा।
घर में थी तो माता-पिता को गिरफ्तार करने के लिए आमतौर पर पु
आती रहती थी और मेरे मन में कुछ असुरक्षा की भावना पैदा होती गई
टैगोर के यहां मुझे शांत वातावरण मिला। पिता की कृपा से मैं विश्व भा
से तो पहले ही परिचित थी परन्तु शान्ति निकेतन जाने के बाद कला के मु
कारी दुनिया का दरवाजा टैगोर ने मेरे लिये खोल दिया। मैं सदा ही कि
को जीवन से अलग समझती रही थी परन्तु टैगोर ने मुझे दिखा दिया
किस प्रकार सब कलाएँ और जीवन आपस में गुथे हुए हैं। शान्ति निकेतन
से पहले मैंने संगीत का अधिक अध्ययन नहीं किया था और न ही नृत्य अ
चित्रकारी में ही अधिक आनन्द लिया था।"

नेहरू ने पहले ही 'झलकियाँ' पत्र तब तक समाप्त कर दिए थे और
पत्र-शृंखला के अन्तिम पत्र में उन्होंने लिखा था कि इन पत्रों में मैंने जो
तुम्हें लिखा है, उन विषयों में मेरे द्वारा दी गयी जानकारी को ही तुम अन्ति
जानकारी समझ लेना। राजनीतिज्ञ हर विषय पर बात कहना चाहता है
जितना वास्तव में उसे ज्ञान है उससे कहीं अधिक जानने का वह दिख
करता है उसको सावधानी से देखते रहना चाहिए। नेहरू ने अपने पत्र
शृंखला को टैगोर के उद्धरण से ही समाप्त किया था जो कि उनकी प्रि
पुस्तक 'गीताजंलि' में से लिया गया था। इसी पुस्तक पर उनको १९१३
नोबल पुरस्कार मिला था।

मन जहाँ निर्भय है और माथा ऊँचा,
ज्ञान पर कोई रोक नहीं जहाँ,
संसार जहाँ घर की दीवारों से छोटे भागों में बंटा नहीं।
मन तेरे द्वारा जब विचार और कर्म की विस्तृत होती धारा में
बहता जाता है।
मुक्ति के उस स्वर्ग में ओ पिता मेरे देश को जगा।

इन्दिरा सन्त और दार्शनिक टैगोर और व्यावहारिक राजनीति में म
लेनेवाले तथा क्रांतिकारी पिता के बीच जो विचारों का तालमेल था

चकित होकर देखा करती थी। टैगोर में उन्हें कर्मठ और क्रांतिकारी व्यक्ति की तथा अपने पिता में संत और दार्शनिक के दर्शन होते थे।

टैगोर को मणिपुरी नृत्य बहुत पसन्द था, यह अत्यन्त सरल, उल्लासमय और भावना भरा था। अत्यन्त सुन्दर और आनन्द देनेवाला और बड़ी आसानी से इसे सामूहिक नृत्य में बदला जा सकता था। टैगोर अपने विश्वविद्यालय के लिए धन एकत्र करने के वास्ते उन दिनों निकलनेवाले थे और इसके लिए उन्होंने इन्दिरा को भी अपने कलाकारों के दल में शामिल किया था। रिहर्सल के लिए इन्दिरा अन्य कलाकारों के साथ मणिपुरी का अभ्यास कर रही थी। वह इस नृत्य की जटिल और भावभरी मुद्राओं का अभ्यास कर रही थी। इन्दिरा तो हर कार्य को बहुत अच्छी तरह से करने में विश्वास रखती थी। इसी कारण उसके मन में कुछ आशंका तो थी परन्तु उसमें आत्मविश्वास की कमी न थी। शान्ति निकेतन में आए उसे एक वर्ष के करीब हो चुका था और इस अवधि में उसने इस नृत्य का काफी अभ्यास कर लिया था। इस नृत्य की लय-ताल पर उसके अंग थिरकने लगते थे। उसने काफी अभ्यास किया था और भी अधिक अभ्यास वह कर रही थी कि एकाएक उसे गुरुदेव रवींद्र का संदेश मिला : गुरुदेव तुम्हें एकदम मिलना चाहते हैं। वह तुरन्त ही टैगोर के कलाकक्ष में उनके पास पहुँची। जेल से जवाहरलाल द्वारा भेजा तार उन्होंने इन्दिरा को दिखाया। उसमें सूचना दी गयी थी कि उसकी माँ कमला बहुत बीमार है और उसे माँ की सेवा के लिए तुरन्त ही इलाहाबाद भेज दिया जाय। यह भी संकेत था कि उसे शायद अपनी माँ की तीमारदारी के लिए यूरोप भी जाना पड़े। इन्दिरा को एकदम आघात-सा लगा। कुछ आभास हो गया था कि अब पुनः यहाँ पर उसका आना नहीं हो सकेगा परन्तु बड़े धैर्य से उसने इस समाचार को सुना। अपने साथियों से उसने विदा ली और तब गुरुदेव कवींद्र का यह सुझाव अस्वीकार कर दिया कि इलाहाबाद तक उसे कोई अध्यापक पहुँचाने जाय। उसने कहा : "मेरे पिता ने मुझे अकेला सफर करना सिखाया हुआ है।" बड़े ही संकल्प और निश्चय से उसने कहा और तब टैगोर से छुट्टी लेकर वह इलाहाबाद रवाना हुई। शान्ति निकेतन छोड़ने के समय टैगोर ने जवाहरलाल को लिखा था : "इन्दिरा को भारी मन से मैं वि[illegible]

रहा हूँ। यह हमारे लिए बहुत ही महत्वपूर्ण थी; मैंने उसे बहुत निकट से देखा है और जिस तरह से आपने उसका विकास किया है मैं उससे बड़ा प्रभावित हुआ हूँ। उसमें आपके चरित्र और आपके विचारों की दृढ़ता विद्यमान है। एक स्वर से उनके सभी अध्यापकों ने उसकी प्रशंसा की है और मुझे यह भी पता चला है कि वह अपने सहपाठियों में भी बड़ी लोकप्रिय है। और इन्दिरा भी शान्ति निकेतन में रहकर बड़ी संयुक्त हुई थी। उसने एक दिन मुझे चिट्ठी में कहा : "शान्ति निकेतन में मैं बड़ी प्रसन्न थी, विशेष रूप से इसलिए कि गुरुदेव की उपस्थिति मुझे बड़ी भली लगती थी। उस सारे वातावरण में उनको अदृश्य रूप से विद्यमान अनुभव होते थे, ऐसा लगता था कि वह प्रेम से और ध्यान से हम लोगों की फिक्र कर रहे हैं। मेरे जीवन और विचारधारा पर उनके जीवन का बहुत प्रभाव पड़ा है।"

टैगोर बड़े क्रान्तिकारी व्यक्ति थे। उनका व्यक्तित्व अत्यन्त गंभीर और विशाल था। ऐसे महान् व्यक्तित्व के द्वारा ही संभव था कि रवीन्द्रनाथ संसार के उस दिनों के उथलपुथल के उस वातावरण में भी सृजनात्मक कला और रचनात्मक शिक्षा का कार्य कर सके। ज्यों-ज्यों उनकी आयु बढ़ती गयी उनका यह विश्वास दृढ़ होता गया कि शान्ति की आवश्यकता देश को जगाने और गुलामी के पंजों से छुड़ाने के लिए है। भारत के विभिन्न साम्राज्यवादी शासक जिस प्रकार फूट डालो और राज करो की नीति का शोषण कर रहे थे उससे वे बड़े ही व्याकुल हो उठते थे।

"शान्ति तो होनी ही," अपने एक भाषण में गुरुदेव ने कहा था : "शान्ति तो होनी चाहिए और कुछ लोगों को अपना जीवन न्यौछावर करके उसका दीप जलाना ही होगा; विशेष रूप से उन वर्ग के लोगों द्वारा जो आराम से जीवन व्यतीत कर रहे हैं और जिनका विश्वास भौतिकवाद में है। जो परम्परावादी है और जो वास्तव में इस आधुनिक युग के व्यक्ति नहीं वरन् भूतकाल के हैं, उस युग के जबकि शरीर का आकार-प्रकार ही प्रधान था, मानव मन की महिमा न थी।"

टैगोर का व्यक्तित्व सदभुत था। वह उस प्रकार के विद्वान थे जिनको कि विश्व साहित्य का पूरा परिचय था। कलाकार के रूप में उन्होंने अपने में विश्व की संस्कृतियों का समंजन किया हुआ था। वह धार्मिक प्रवृत्ति के

और विश्व के सभी धर्मों में जो कुछ अच्छा था वह उन्हें स्वीकार था। वह ह भी चाहते थे कि इस देश के युवकों में एकांगी व्यक्तित्व का विकास न हो। ह चाहते थे कि इन युवकों को कलाकार के संसार की समानता से जानकारी हो। स प्रकार उन्होंने शांति निकेतन में विभिन्न कलाओं का विकास किया और छात्रों ो सीखने और अनेक प्रकार की कला संबंधी गतिविधियों में भाग लेने की विधा प्रदान की। विभिन्न धर्मों के प्रति सम्मान का भाव पैदा करने के लिए न्होंने शांति निकेतन में क्रिसमस, होली तथा अन्य धर्मों के उत्सव मनाने की रिपाटी डाली थी। क्रिसमस के अवसर पर आयोजित सभा में उन्होंने कहा ा : "ईसा एक ऐसे व्यक्ति थे जिन्होंने भारत की धरती पर कभी पाँव नहीं रा था परन्तु अन्य किसी भी धार्मिक व्यक्ति की तुलना में उन्होंने अधिक भाव यहाँ की जनता पर डाला था।" इस प्रकार के कार्यक्रमों के माध्यम से गोर अपने छात्रों में विभिन्न धर्मों के प्रति सहनशीलता की भावना को पैदा रने के साथ ही साथ सांस्कृतिक समंजन भी पैदा करना चाहते थे। बालिका कशोरी इन्दिरा को तो इस प्रकार का वातावरण बहुत ही उपयोगी था। उसे ो उसके पिता ने विश्व इतिहास की झलकियाँ दिखाते हुए मानसिक रूप से स प्रकार के एकीकरण के लिए तैयार किया हुआ था।

शांति निकेतन से लौटने के बाद इन्दिरा ने बड़ी उद्विग्नता से अपनी माता ी सेवा करते हुए दिन बिताए। कई बार उसको मानसिक यंत्रणा झेलनी ड़ती। तभी उसके पिता जो कि छह मास से जेल में थे एक दिन एकाएक ारावास से मुक्त कर दिए गए। इसका कारण यही था कि उनकी धर्मपत्नी मला की हालत निरंतर ही खराब होती जा रही थी। ग्यारह अगस्त को हरादून जेल से नेहरू को पुलिस के पहरे में इलाहाबाद लाया गया। अगले दिन वह प्रयाग रेलवे स्टेशन पर थे। वहाँ पर मजिस्ट्रेट ने उनको यह सूचना ी कि उनको अस्थायी रूप से छोड़ा जा रहा है ताकि वह अपनी बीमार पत्नी से मिल आएँ। तब जवाहर अपनी बीमार पत्नी और पुत्री से भेंट करने के लिए आनंद भवन पहुँचे। वहाँ पर लोग निरन्तर बीमार कमला को देखने तथा जवाहर से मिलने के लिए आते रहते थे। माँ बेटी और पिता दोनों को भी कुछ आराम मिला। अब उनको भोजन ठीक मिलता और ह

कमला की बीमारी की चिन्ता से सारा वातावरण बोझिल बना रहता था
अपनी आत्मकथा में जवाहरलाल ने कमला की हालत का वर्णन बड़े मार्मि
शब्दों में किया है : "वहां पर दुबली-पतली और बहुत ही कमजोर कम
लेटी रहती थी। अब वह पहले की कमला न थी। अब तो उस
छाया-मात्र थी। वह अपने रोग से संघर्ष कर रही थी। और य
विचार जब मुझे आता कि शायद वह मुझसे अब जुदा हो जा
मेरे लिए असह्य हो जाता था।" नेहरू तो बड़े ही गतिशील व्यक्ति थे औ
काम भी वह बहुत कर पाते थे। परन्तु अपनी प्यारी पत्नी की जब किस
प्रकार की सहायता करने में वह असमर्थ पाते तो वह बड़े व्यथित हो जाते
विशेष रूप से उस समय जबकि उसे जवाहर की सबसे अधिक जरूरत थी। व
भावुकता में बहकर बरसों बाद तक यह कहते रहे थे : "अठारह वर्ष बीत चु
हैं परन्तु कमला की याद मेरे मन में अभी ताजी है। वह अभी तक लड़की-स
कुंआरी-सी मुझे दीखने लगती है। और उसमें बड़ी औरत की कोई बा
नहीं लगती थी। पिता जोकि निरंतर राजनैतिक संघर्ष में जुटे हुए थे औ
लंबी कैद काटनी पड़ी थी वह तो जाहिरा तौर पर कुछ बड़ी उम्र के लग
लगे थे। कुछ सिर उनका गंजा हो गया था। उनके बाल भी सफेद हो गए
और उनके चेहरे पर गहरी रेखाएं पैदा हो गयी थीं। उनकी धंसी आंखों
नीचे जाले से पड़ गये थे। बाद के वर्षों में तो जब नेहरू कमला के साथ बाह
जाया करते थे तो आमतौर पर लोगों को भ्रम हो जाता था कि कमला जवा
हर की बेटी हैं। और सचमुच ही इन्दिरा और कमला आपस में दोनों सग
बहिनों के समान दिखाई देती थीं। और कभी-कभी तो यह गलतफहमी इतनं
हो जाती थी कि इन्दिरा जो कि अब कुछ मोटी हो गयी थी उसे ही भ्रम
लोग कमला समझ जाते। कमला बहुत ही पतली-दुबली थीं। जवाहरलाल
बताया कि इस प्रकार की असमंजसपूर्ण स्थिति कई बार पैदा हो जाती
थी।

सातवाँ अध्याय

माता से विछोह

२३ अगस्त को अपनी रिहाई के ग्यारह दिन बाद पुलिस की एक कार आनन्द भवन तक आयी और उसमें एक अफसर जवाहरलाल के निकट गया और बस इतनी ही सूचना दी कि उनका समय समाप्त हो गया है और अब उनको नैनी जेल में जाना होगा। कमला उस समय जवाहरलाल के कपड़े लेने ऊपर की मंजिल में गयी थी। वह उसके पीछे विदाई लेने गये और जो कुछ तब घटा उसका वर्णन जवाहरलाल ने इन शब्दों में किया है: "एका-एक वह मुझसे चिपट गयी और बेहोश होकर ढह गयी। यह बड़ी असाधारण बात थी क्योंकि हमने अपने-आपको साथ लिया हुआ था और जेल जाना हमारे लिए मामूली बात बन चुकी थी। और बिना किसी लंबी-चौड़ी बात के हम लोग हँसी-हँसी जेल चले जाया करते थे।" यह जाहिर था कि कमला अपने पति जवाहर से लिपटे इसलिए जा रही थी कि उसे अपनी मृत्यु का आभास हो गया था और वह जानती थी कि उसका अंत अब निकट ही है।

जवाहरलाल को दुबारा गिरफ्तार कर लिया जाने पर कमला की हालत और खराब हो गयी। अपनी आत्मकथा में जवाहरलाल ने आर० एस० पंडित की पुस्तक राजतरंगिणी (राजाओं की नदी) में लिखा है: उसके उद्धरण से अपनी कठिन और सुख-दुखभरी जिंदगी का विवरण किया है: "छाया तो अपने मार्ग में बिना किसी अवरोध के चलती है, जबकि सूर्य-प्रकाश तो अपनी प्रकृति की घटना के रूप में ही सौ गुना पीछे रहता है। इस प्रकार दुख सुख से भिन्न है। और सुख का समय तो अनंत दुखों और कष्टों से भरा रहता है। कुछ सप्ताह बाद कमला को भोवाली सैनिटोरियम भेजा गया।

कमला की बीमारी की चिन्ता से सारा वातावरण बोझिल बना रहता था। अपनी आत्मकथा में जवाहरलाल ने कमला की हालत का वर्णन बड़े मार्मिक शब्दों में किया है : "वहां पर दुबली-पतली और बहुत ही कमजोर कमला लेटी रहती थी। अब वह पहले की कमला न थी। अब तो उसकी छाया-मात्र थी। वह अपने रोग से संघर्ष कर रही थी। और यह विचार जब मुझे आता कि शायद वह मुझसे अब जुदा हो जाय, मेरे लिए असह्य हो जाता था।" नेहरू तो बड़े ही गतिशील व्यक्ति थे और काम भी वह बहुत कर पाते थे। परन्तु अपनी प्यारी पत्नी की जब किसी प्रकार की सहायता करने में वह असमर्थ पाते तो वह बड़े व्यथित हो जाते। विशेष रूप से उस समय जबकि उसे जवाहर की सबसे अधिक जरूरत थी। वह भावुकता में बहकर बरसों बाद तक यह कहते रहे थे : "अठारह वर्ष बीत चुके हैं परन्तु कमला की याद मेरे मन में अभी ताजी है। वह अभी तक लड़की-सी कुंआरी-सी मुझे दीखने लगती है। और उसमें बड़ी औरत की कोई बात नहीं लगती थी। पिता जोकि निरंतर राजनैतिक संघर्ष में जुटे हुए थे और लंबी कैद काटनी पड़ी थी वह तो जाहिरा तौर पर कुछ बड़ी उम्र के लगने लगे थे। कुछ सिर उनका गंजा हो गया था। उनके बाल भी सफेद हो गए थे और उनके चेहरे पर गहरी रेखाएं पैदा हो गयी थीं। उनकी धंसी आंखों के नीचे जाले से पड़ गये थे। बाद के वर्षों में तो जब नेहरू कमला के साथ बाहर जाया करते थे तो आमतौर पर लोगों को भ्रम हो जाता था कि कमला जवाहर की बेटी हैं। और सचमुच ही इन्दिरा और कमला आपस में दोनों सगी बहिनों के समान दिखाई देती थीं। और कभी-कभी तो यह गलतफहमी इतनी हो जाती थी कि इन्दिरा जो कि अब कुछ मोटी हो गयी थी उसे ही भ्रम में लोग कमला समझ जाते। कमला बहुत ही पतली-दुबली थीं। जवाहरलाल ने बताया कि इस प्रकार की असमंजसपूर्ण स्थिति कई बार पैदा हो जाती थी।

सातवाँ अध्याय

माता से विछोह

२३ अगस्त को अपनी रिहाई के ग्यारह दिन बाद पुलिस की एक कार आनन्द भवन तक आयी और उसमें एक अफसर जवाहरलाल के निकट गया और बस इतनी ही सूचना दी कि उनका समय समाप्त हो गया है और अब उनको नैनी जेल में जाना होगा। कमला उस समय जवाहरलाल के कपड़े लेने ऊपर की मंजिल में गयी थी। वह उसके पीछे विदाई लेने गये और जो कुछ तब घटा उसका वर्णन जवाहरलाल ने इन शब्दों में किया है : "एका-एक वह मुझसे चिपट गयी और बेहोश होकर ढह गयी। यह बड़ी असा-धारण बात थी क्योंकि हमने अपने-आपको साथ लिया हुआ था और जेल जाना हमारे लिए मामूली बात बन चुकी थी। और बिना किसी लंबी-चौड़ी बात के हम लोग हँसी-हँसी जेल चले जाया करते थे।" यह जाहिर था कि कमला अपने पति जवाहर से लिपटे इसलिए जा रही थी कि उसे अपनी मृत्यु का आभास हो गया था और वह जानती थी कि उसका अंत अब निकट ही है।

जवाहरलाल को दुबारा गिरफ्तार कर लिया जाने पर कमला की हालत और खराब हो गयी। अपनी आत्मकथा में जवाहरलाल ने आर० एस० पंडित की पुस्तक राजतरंगिणी (राजाओं की नदी) में लिखा है : उसके उद्धरण से अपनी कठिन और सुख-दुखभरी जिंदगी का विवरण किया है : "छाया तो अपने मार्ग में बिना किसी अवरोध के चलती है, जबकि सूर्य-प्रकाश तो अपनी प्रकृति की घटना के रूप में ही सौ गुना पीछे रहता है। इस प्रकार दुख सुख से भिन्न है। और सुख का समय तो अनंत दुखों और कष्टों से भरा रहता है। कुछ सप्ताह बाद कमला को भोवाली सैनिटोरियम भेजा गया।

जवाहरलाल कमला के निकट ही रहें इसलिए उनको भी नैनी जेल से अल्मोड़ा में स्थानांतरित कर दिया गया। स्थान परिवर्तन से कुछ राहत मिली।

डाक्टरों की सलाह पर कमला को मई १९३५ में यूरोप में और चिकित्सा के लिए भेजा गया। इंदिरा अपनी माता के साथ जर्मनी के एक चिकित्सालय में रही। वहाँ अपनी रोगिणी माता के निकट वह अकेली बैठी रहती और कभी कभी अपने को असहाय अनुभव करती। कमला का तपेदिक रोग काफी बढ़ चुका था। उसकी हालत धीरे-धीरे खराब हो रही थी। कितनी भी सेवा-सुश्रुषा अब किसी काम की नहीं थी।

जवाहरलाल जेल में थे। तब परिवार के एक मित्र फीरोज गांधी लंदन स्कूल आफ इकानामिक्स में अपने अध्ययन को छोड़कर आमतौर पर अवकाश ले लिया करते थे और आंटी कमला और इन्दिरा से मिलने चले आया करते थे। फीरोज जवाहर के परिवार की सेवा करना चाहते थे और आंटी कमला की सेवा-सुश्रुषा में वह इन्दिरा की सहायता किया करते थे। इन्दिरा और फिरोज इस अवधि में एक-दूसरे को बहुत पसंद करने लगे थे। और उस दुख के कष्ट के कुंड में से प्रेम की ज्वाला पैदा हुई थी।

इन्दिरा और फीरोज के निरन्तर सेवा करते रहने और डाक्टरों की कोशिशों के बावजूद कमला की हालत निरन्तर बिगड़ती गयी। कुछ डर में, इन्दिरा ने जेल में बंद अपने पिता को माता की बीमारी की चिंताजनक हालत की सूचना देते हुए तार दे दिया।

चार सितम्बर को उनकी शेष साढ़े चार मास की कैद को रद्द कर दिया गया और थके हुए तथा चिंतित जवाहरलाल अपनी पत्नी के पास पहुँचने के लिए रवाना हुए। जवाहरलाल अपनी बेटी के संग कमला की देखभाल किया करते। जवाहरलाल के वहाँ पहुँचने पर कमला के मन में नयी आशा पैदा हो गई और उसके जीवन के दिन बढ़ गये। उसकी हालत में कुछ सुधार हुआ। घंटों तक वह कमला के पास बैठे रहते और कभी-कभी बीच में उससे बातचीत भी कर लिया करते। कई बार वह नयी पुस्तकों में से उसे कुछ सुनाते। अधिकांश समय तो वे एक-दूसरे से मौन ही अपनी भावनाएँ व्यक्त करते रहते। भारत में वे दोनों राजनैतिक संघर्ष में पूरी ताकत के साथ लगे रहते

थे। वहाँ पर तो उनको परस्पर एक साथ बैठने का अवसर ही कम मिलता था। परन्तु अब युद्धक्षेत्र से दूर कुछ समय के लिए वे बिल्कुल ही एक-दूसरे के लिए थे। आपस में साथ का जो आनंद था वही उनके कष्ट में सुख देनेवाला था। वहाँ वेडनवेयर में उस शांत स्थल में बैठे जवाहरलाल यूरोप पर मंडराते संकट के बादलों को देखकर चिंतित हो उठे। बाडेनवेलर में २५ अगस्त १९३५ को लिखी अपनी आत्मकथा के परिशिष्ट में उन्होंने अपने मनोभावों को व्यक्त किया है: "यूरोप में राजनैतिक जगत में गहरी उथल-पुथल थी वहाँ पर युद्ध छिड़ने का भय हो गया था और आर्थिक संकट भी वहाँ नजर आने लगा था। एबेसीनिया पर आक्रमण हुआ और वहाँ की जनता पर बम बरसाए गए। विभिन्न साम्राज्यवाद की प्रणालियाँ आपस में संघर्षरत थीं और एक-दूसरे के लिए खतरा बनी थीं। इंग्लैंड जो कि महानतम साम्राज्यवादी शक्ति थी शान्ति की समर्थक थी और विचित्र यही है कि यही इंगलैंड अनेक राष्ट्रों के निवासियों का दमन करके उनपर बम वर्षा करने में भी संकोच नहीं किया करता था। (जवाहरलाल का संकेत अफगानों पर इंगलैंड द्वारा की गई बमवर्षा से था) परन्तु यहाँ पर ब्लैक फारस्ट में पूरी शांति है यहाँ पर स्वस्तिक का चिह्न भी अधिक दिखाई नहीं देता—मैं यहाँ पर देख रहा हूँ कि धुन्ध उस घाटी पर छा रही है और उसमें फ्रांस की सुदूर सीमाएं छुप गयी हैं और उस धुन्ध ने इस सारे प्रदेश को ढांप लिया है और न जाने क्या कुछ इन प्रदेशों के पीछे है।"

कुछ समय बाद जवाहरलाल को यह समाचार मिला कि उन्हें दूसरी बार कांग्रेस का अध्यक्ष चुना गया है। इससे वह काफी परेशान हो गये। अनेक दिनों तक वह निरन्तर ही बेचैन रहकर इस बारे में सोचते रहे।

इसका अर्थ क्या है? उनको आगामी वसंत में होनेवाले कांग्रेस अधिवेशन के लिए भारत लौटना होगा? और यह अध्यक्ष का कर्त्तव्य था कि स्वतन्त्रता के लम्बे संघर्ष के लिए वह कोई संघर्षनीति को तय करे। जवाहरलाल से बड़ी-बड़ी आशाएँ की जा रही थीं। जवाहरलाल अपने को बड़ी दुविधा में पा रहे थे। उनको पता नहीं चल रहा था कि क्या ठीक है और क्या करना चाहिए। न ही उनको यह पता चल रहा था कि क्या करना ठीक रहेगा?

उनको यह फैसला करना था कि क्या वह कांग्रेस के अध्यक्ष पद से त्यागपत्र दें दे अथवा यूरोप से लौट जावें। वह कमला को छोड़कर जाने के लिए अपने मन को तैयार नहीं कर सके। उसकी हालत निरन्तर ही बिगड़ रही थी। कमला को जर्मनी के बाडेनवेलर से लौसाने स्विटजरलैंड ले जाया गया।

इन्हीं दिनों कमला की हालत में कुछ सुधार होने लगा। वह जोर देकर कहने लगी कि उन्हें कांग्रेस अधिवेशन में भाग लेने के लिए जाना चाहिए और उसके बाद लौट आना चाहिए। जवाहरलाल ने भारत जाने की तैयारी कर ली। परन्तु चिंतित जवाहर का मन शान्त न था। उसने कमला को आश्वासन दिया कि वह अधिक देर तक नहीं रुकेंगे और अधिक से अधिक दो तीन मास तक वहां पर रहेंगे और तब यदि आवश्यकता हुई तो वह तार पाते तुरन्त ही लौट आयेंगे। इतना कुछ कहकर बड़ी अनिच्छा से जवाहरलाल लौटने की तैयारी करने लगे। परन्तु डाक्टरों को तो कमला की हालत का सही अन्दाज था। उन्होंने जवाहरलाल से कहा कि वह एक सप्ताह तक अपना जाना स्थगित करें। उन्होंने तुरन्त ऐसा किया। कमला की हालत और बिगड़ गयी। उसके सारे व्यक्तित्व में परिवर्तन हुए। उसने यह नहीं बताया कि क्या बात थी लेकिन उसमें जीने की इच्छा का अभाव हो गया था। उसका मन भटकने लगा था। वह कहने लगतीं : "हमारे साथ कोई और भी इस कमरे में है।" एक दिन सुबह होने उषाकाल से कुछ पहले वह शान्त चुपचाप सदा के लिए गहरी निद्रा में सो गयीं और उसका दाह संस्कार लौसाने के शवदाह-गृह में किया गया।

इस प्रकार एक एकाकी जीवन समाप्त हुआ जो यद्यपि निरन्तर ही रोगिक और इस घातक रोग से पीड़ित रहा, अन्त में अपने को देने को उत्सुक था कि स्वतंत्रता की मशाल सदैव ही मातृभूमि पर जलती रहे। कमला की स्मृति में एक मित्र द्वारा दी श्रद्धांजलि का वर्णन कृष्णा ने अपनी पुस्तक में किया है : "उसका जीवन तो दीपक की चमकती बाती के समान था। यह देदीप्यमान रहता था और फिर चमक-चमक जाता था। और यह निरन्तर ही तीव्र प्रकाश में चमकता रहा और जब इसका तेल सोख लिया गया तो यह टिमटिमाकर बुझ गया।"

गहरे शोक में डूबे पिता और पुत्री एक-दूसरे को ढाढस बंधाते। इन्दिरा के छोटे से जीवन में यह मृत्यु का दूसरा आघात था। पहले तो उसके दादू की मृत्यु हुई और फिर अपने दिल की सबसे निकटवर्ती अपनी प्यारी माँ को भी उसने खो दिया था। अब वह अपने पापू से चिपट गयी परन्तु उन्हें भी शीघ्र ही भारत जाना था।

नेहरू अपनी पत्नी सहधर्मिणी की भस्मी एक कलश में लेकर इलाहाबाद लौट आए। घर लौटने पर मित्रों और सम्बन्धियों का तांता बंध गया और वे सब लोग शान्त, मौन रहकर उनको देखते रहते।

उन लोगों ने अन्तिम शोक-दिवस में देरी नहीं की। इसके बारे में दिल हिला देनेवाले शब्दों में उन्होंने लिखा था: "हम उस अस्थि-कलश को तेज़ बहती गंगा तट पर ले गये और वहाँ पर अस्थियों का विसर्जन कर दिया। न जाने हमारे कितने पूर्वजों की पावन अस्थियाँ इसी प्रकार ही गंगा में बहकर समुद्र तक जा पहुँची होंगी। और न जाने हमारे बाद आनेवाले कितने ही लोगों की अस्थियों को इस गंगा में प्रवाहित होकर उस पवित्र जल में समा जाना है।" कमला की अस्थियों के भौतिक अवशेष भी गगा के गर्भ में समा गये; उस नदी में जिससे कमला को बहुत प्यार था। न जाने कितनी ही बार भावभरी दृष्टि से उसने इस गंगा के जल को निहारा था। सम्भवतः जब वह इस जल को देखकर विचारों में खो जाती तो वह कहीं दूर देख रही होती। जाहिर है जवाहरलाल की उस सुदूर स्थल तक कोई दृष्टि न जाती। जवाहरलाल गहरे दुख में डूब गये थे। निकट आते युद्ध के विचार भी उसे परेशान करने लगे और इनके साथ ही वित्तीय कठिनाइयाँ भी उन्हें परेशान करने लगीं। भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में अपने को पूरी तरह से डुबोकर उन्होंने कुछ राहत पाने की कोशिश की। और साथ ही उन्होंने अपने देशवासियों को नाजीवाद के खतरे से अवगत करवाने का भी प्रयास किया। सारे यूरोप में युद्ध का खतरा बढ़ रहा था। हिटलर की सेनाएँ एक के बाद एक करके यूरोप के देशों को अपने पाँवों तले रौंदने लगी थीं।

इन्दिरा १९३६ में लंदन गयी और वहाँ पर ऑक्सफोर्ड में उसने प्रवेश लिया। वहीं पर उसकी भेंट अपनी सहपाठिनी शांता गांधी से हुई। उन दोनों

ने एक ही कमरे में रहने का फैसला किया। उन्होंने लंदन के एक बोर्डिंग हाउस में एक कमरा लिया। यह इन्दिरा के लिए एक नया अनुभव था। वह घर से दूर और शान्ति निकेतन के आरक्षित स्थल से दूर थी और न ही आनंद भवन जैसी आरक्षित जगह पर थी। अब वह अपने पर पूरी तरह से निर्भर होकर रहने लगी थी। पिता के पास अब धन तो अधिक बचा नहीं था इसलिए अब पैसा तो उसके पास सीमित ही था। और उसे अब बहुत मितव्ययता से जीवनयापन करना पड़ता था। परन्तु तो भी अपने नए स्वतन्त्र जीवन को वह पसंद करती थी। शान्ता और इन्दिरा ने वहाँ के अनेक नृत्य कार्यक्रमों में भाग लिया। स्पेन सहायता समिति ने इनका आयोजन किया था। एक बार तो इन्दिरा ने अपने गले का हार भी दान में दे दिया और इसकी नीलामी भी पंद्रह पाउन्ड की हुई और इस राशि को इस कार्य में दान दे दिया गया। दोनों ही इण्डियन लीग में स्वयंसेविकाओं के रूप में काम करतीं। जब राजनैतिक कार्यों से कुछ अवकाश पातीं तो वे नृत्य समारोहों और थिएटरों में भी जातीं।

घर से तो यद्यपि वह बहुत दूर थी वह पत्रव्यवहार द्वारा और समाचारों के माध्यम से भारत में होते तूफानी परिवर्तनों से काफी निकट का परिचय रखतीं।

मुहम्मदअली जिन्ना ने १९३४ में मुस्लिम लीग की बागडोर अपने हाथों में संभाल ली थी और उन्होंने पाकिस्तान की मांग रख दी थी। अनेक विद्वानों की दो राष्ट्रवाद सिद्धान्त के आधार पर यह मांग रखी गयी थी। यह नया देश मात्र मुसलमान लोगों के लिए होना था। कुछ मुसलमानों ने दो राष्ट्रों का सिद्धान्त रखा था। इसके अनुसार भारत को हिन्दू और मुस्लिम इन दो राष्ट्रों में बांटा जाना था। वर्षों से ब्रिटिश लोग 'फूट डालो और राज करो' की जो नीति अपना रहे थे यह मांग उसीका परिणाम थी। शुरू में हिन्दू और मुसलमान नेताओं ने इस सिद्धान्त को अस्वीकार कर दिया और अनांप्रदायिक आधार पर भारत को मुक्त करवाने का आन्दोलन जारी रखा।

सन् १९३५ में ब्रिटिश संसद ने भारत का नया संविधान बनाया और

भारत अधिनियम के अन्तर्गत अनेक परिवर्तन किए। इस नए कानून के मुताबिक भारत में एक संघ बनाया जाना था। भारत की देसी रियासतें और गवर्नरी प्रान्तों को इसमें सम्मिलित होना था। परन्तु यह संघ बन नहीं पाया क्योंकि अधिकांश देसी रियासतों के शासकों को यह आशंका थी कि नए प्रकार की सरकार से उन्हें अपने जो अधिकार प्राप्त हैं उनमें कुछ कमी करनी होगी।

१९३५ के इस कानून से राज्यों में विधानसभाओं की स्थापना हुई। इनको देश की लगभग ११ प्रतिशत जनता ने निर्वाचित किया। इस कानून के मुताबिक हर प्रान्त में गवर्नर को अपना मन्त्रिमण्डल बनाना था। उसमें केवल भारतीय लोगों को ही सदस्य बनाना था। गवर्नर और वायसराय को यह अधिकार था कि विधानसभाओं और केन्द्रिय सरकार द्वारा बनाये गये सब कानूनों को रद्द कर दे। वित्तीय विभाग भी केन्द्रीय सरकार के पास रहना था।

जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में कांग्रेस दल ने १९३७ के चुनावों के लिए जोरदार आन्दोलन चलाया। एक तरह के इन चुनाव आन्दोलनों के द्वारा नेहरू ने देश की जनता और विशेष रूप से देहातों में रहनेवाले लोगों को राजनीति की शिक्षा दी। उन्होंने धर्म और जाति से ऊपर राष्ट्रीय एकता की भावना इन लोगों में पैदा करने का प्रयास किया। जवाहरलाल ने उन्हें बताया

रत को स्वतंत्र इसलिए करवाना है कि इस देश के हजारों लाखों लोग जीवन को अधिक बेहतरी से व्यतीत कर सकें। चुनाव के दौरान यात्राओं वाहरलाल को भी असली भारत के दर्शन हुए। उन्होंने अपनी पुस्तकों में ा का वर्णन इस प्रकार किया है।

"जब मैं भारत के बारे में सोचता हूँ तो मेरे दिमाग में बहुत-सी बातें ा हैं, बड़े-बड़े विशाल मैदान जिनमें असंख्य छोटे-छोटे गाँव बड़े-बड़े व कस्बे हैं। वर्षा ऋतु का जादू देखने लायक है। जब सूखी धरती में जीवन आ जाता है और इन विशाल मैदानों में हरियावल ही हरियावल ाती है; मैं महान् नदियों और उनमें बहती जलधाराओं की बात सोचने ा हूँ। मेरे दिमाग में खैबर का दर्रा, उनके आस-पास का धुंधला-सा

ने एक ही कमरे में रहने का फैसला किया। उन्होंने लंदन के एक बोर्डिंग हाउस में एक कमरा लिया। यह इन्दिरा के लिए एक नया अनुभव था। वह घर से दूर और शान्ति निकेतन के आरक्षित स्थल से दूर थी और न ही आनंद भवन जैसी आरक्षित जगह पर थी। अब वह अपने पर पूरी तरह से निर्भर होकर रहने लगी थी। पिता के पास अब धन तो अधिक बचा नहीं था इसलिए अब पैसा तो उसके पास सीमित ही था। और उसे अब बहुत मितव्ययता से जीवनयापन करना पड़ता था। परन्तु तो भी अपने नए स्वतन्त्र जीवन को वह पसंद करती थी। शान्ता और इन्दिरा ने वहाँ के अनेक नृत्य कार्यक्रमों में भाग लिया। स्पेन सहायता समिति ने इनका आयोजन किया था। एक बार तो इन्दिरा ने अपने गले का हार भी दान में दे दिया और इसकी नीलामी भी पंद्रह डालर की हुई और इस राशि को इस कार्य में दान दे दिया गया। दोनों ही इण्डियन लीग में स्वयंसेविकाओं के रूप में काम करतीं। जब राजनैतिक कार्यों से कुछ अवकाश पातीं तो वे नृत्य समारोहों और थिएटरों में भी जातीं।

घर से तो यद्यपि वह बहुत दूर थी वह पत्रव्यवहार द्वारा और समाचारों के माध्यम से भारत में होते तूफानी परिवर्तनों से काफी निकट का परिचय रखतीं।

मुहम्मदअली जिन्ना ने १९३४ में मुस्लिम लीग की बागडोर अपने हाथों में संभाल ली थी और उन्होंने पाकिस्तान की माँग रख दी थी। अनेक विद्वानों की दो राष्ट्रवाद सिद्धान्त के आधार पर यह माँग रखी गयी थी। यह नया देश मात्र मुसलमान लोगों के लिए होना था। कुछ मुसलमानों ने दो राष्ट्रों का सिद्धान्त रखा था। इसके अनुसार भारत को हिन्दू और मुस्लिम इन दो राष्ट्रों में बांटा जाना था। वर्षों से ब्रिटिश लोग 'फूट डालो और राज करो' की जो नीति अपना रहे थे यह माँग उसीका परिणाम थी। शुरू में हिन्दू और मुसलमान नेताओं ने इस सिद्धान्त को अस्वीकार कर दिया और असांप्रदायिक आधार पर भारत को मुक्त करवाने का आन्दोलन जारी रखा।

सन् १९३५ में ब्रिटिश संसद ने भारत का नया संविधान बनाया और

भारत अधिनियम के अन्तर्गत अनेक परिवर्तन किए। इस नए कानून के मुताबिक भारत में एक संघ बनाया जाना था। भारत की देसी रियासतें और गवर्नरी प्रान्तों को इसमें सम्मिलित होना था। परन्तु यह संघ बन नहीं पाया क्योंकि अधिकांश देसी रियासतों के शासकों को यह आशंका थी कि नए प्रकार की सरकार से उन्हें अपने जो अधिकार प्राप्त हैं उनमें कुछ कमी करनी होगी।

१९३५ के इस कानून से राज्यों में विधानसभाओं की स्थापना हुई। इनको देश की लगभग ११ प्रतिशत जनता ने निर्वाचित किया। इस कानून के मुताबिक हर प्रान्त में गवर्नर को अपना मन्त्रिमण्डल बनाना था। उसमें केवल भारतीय लोगों को ही सदस्य बनाना था। गवर्नर और वायसराय को यह अधिकार था कि विधानसभाओं और केन्द्रिय सरकार द्वारा बनाये गये सब कानूनों को रद्द कर दे। वित्तीय विभाग भी केन्द्रीय सरकार के पास रहना था।

जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में कांग्रेस दल ने १९३७ के चुनावों के लिए जोरदार आन्दोलन चलाया। एक तरह के इन चुनाव आन्दोलनों के द्वारा नेहरू ने देश की जनता और विशेष रूप से देहातों में रहनेवाले लोगों को राजनीति की शिक्षा दी। उन्होंने धर्म और जाति से ऊपर राष्ट्रीय एकता की भावना इन लोगों में पैदा करने का प्रयास किया। जवाहरलाल ने उन्हें बताया कि भारत को स्वतंत्र इसलिए करवाना है कि इस देश के हजारों लाखों लोग अपने जीवन को अधिक बेहतरी से व्यतीत कर सकें। चुनाव के दौरान यात्राओं से जवाहरलाल को भी असली भारत के दर्शन हुए। उन्होंने अपनी पुस्तकों में भारत का वर्णन इस प्रकार किया है।

"जब मैं भारत के बारे में सोचता हूँ तो मेरे दिमाग में बहुत-सी बातें आती हैं, बड़े-बड़े विशाल मैदान जिनमें असंख्य छोटे-छोटे गाँव बड़े-बड़े नगर व कस्बे हैं। वर्षा ऋतु का जादू देखने लायक है। जब सूखी धरती में नया जीवन आ जाता है और इन विशाल मैदानों में हरियावल ही हरियावल छा जाती है; मैं महान् नदियों और उनमें बहती जलधाराओं की बात सोचने लगता हूँ। मेरे दिमाग में खैबर का दर्रा, उनके आस-पास का धुंधला-सा

वातावरण, दक्षिणी भारत का छोर तथा विशाल जनसमुदाय आ जाता है। बर्फ से लदी हिमालय की चोटियां अथवा नये फूलों से लदी कश्मीर की घाटियां जिनमें उछलती-कूदती छोटी-छोटी नदियां बह रही होती हैं, मेरे मन की आंखों के सामने आ जातीं।

चार मास की अवधि में जवाहरलाल ने लगभग ५० हजार मील की यात्रा की। उन्होंने हर तरह के परिवहन साधन का इस्तेमाल किया। उनके अपने शब्दों में : "मैंने हवाई जहाज, रेलगाड़ी, मोटरकार, ट्रक तरह-तरह के तांगों, बैल-गाड़ी, बाईसिकल, हाथी, ऊंट, घोड़ा के अलावा स्टीमर नौका, डोंगी के साथ-साथ ही पैदल भी भ्रमण किया। मेरी सभाओं में लगभग एक करोड़ लोगों ने भाग लिया होगा। सड़क से यात्रा के दौरान और लाखों लोग मेरे सम्पर्क में आए।"

आठ राज्यों के चुनावों में इन्डियन नेशनल कांग्रेस को भारी विजय मिली। बहुमत में होने के कारण वहां पर ब्रिटिश गवर्नरों के अन्तर्गत उन्होंने मन्त्री-मंडल बनाये। नये कांग्रेसी मंत्रिमंडल अपने काम बड़ी ईमानदारी से करने लगे। विशेष रूप से गांवों में पुनर्निर्माण का कार्य ताकि उनसे देहातियों की हालत सुधरे। परन्तु ये योजनाएं एकदम बन्द कर देनी पड़ीं। ब्रिटिश सरकार ने जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दी और इसके साथ ही यह भी कह दिया कि भारत भी जर्मनी के विरुद्ध युद्ध की स्थिति में है। भारत को इस प्रकार युद्ध में घसीट लेने पर कांग्रेस के नेता क्रुद्ध हो उठे। कांग्रेसी मंत्रि-मंडलों ने अक्तूबर में त्यागपत्र दे दिया। ब्रिटिश सरकार ने जो तानाशाही की नीति अपनायी थी उसके विरोध में व्यक्तिगत सत्याग्रह जारी किया गया।

जून १९३८ में इन्दिरा के पिता जवाहरलाल इंगलैंड के दौरे पर गये; वह वहां पर पांच मास रुके और निरन्तर घूमते रहे। वहां पर उन्होंने अनेक सभाओं में भाषण दिये; अनेक सम्मेलनों में भाग लिया। उन्हें इस बात से बड़ी निराशा थी कि अपनी एकमात्र लड़की के लिए उनके पास इतना कम समय था। इसलिए उन्होंने इन्दिरा को सहमत कर लिया कि ऑक्सफोर्ड में शिक्षा पूरी करने से पहले वह उनके साथ भारत चले। इस तरह इन्दिरा को अवसर मिला कि वह तीन मास अपनी वृद्धा दादी के साथ समय बिता सके।

को इस बात से बड़ी प्रसन्नता हुई कि इंदिरा उसके पास है, क्योंकि आशंका थी कि वह अधिक देर तक अब जीवित नहीं रह सकेगी। तभी दिन इंदिरा को याद आया कि वह २१ वर्ष की हो गई है। ८ वर्ष पहले ाज्य भवन में कांग्रेस के मुख्य कार्यालय में उसे इसका सदस्य बनने से दिया गया था; क्योंकि उस समय वह बहुत छोटी आयु की थी। परन्तु वह बड़े आत्मविश्वास से कांग्रेस के कार्यालय में गई और वहाँ जाकर ो : "मैं अब २१ वर्ष की हूँ।" उसे कांग्रेस का सदस्य बना लिया गया। इन्दिरा की राजनैतिक यात्रा में उल्लेखनीय मील-स्तम्भ था।

अप्रैल १९३९ में इन्दिरा आक्सफोर्ड के समरविले कालेज में पढ़ने के ए लौट गई। कुछ समय बाद उसे समाचार मिला कि उसकी वृद्धा दादी देहान्त हो गया है। इन्दिरा को अनुभव हुआ कि उसके बचपन से जोड़ने-ली एक और कड़ी टूट गई है। उसे याद हो आया कि अभी जब वह पूना स्कूल में थी तो वृद्धा दादी के कांग्रेस जलूस का नेतृत्व करने पर लाठी र्ज में घायल होने पर कितना कष्ट हुआ, परन्तु साथ गर्व भी। पुलिस ने ा को डंडों से मार नीचे गिरा दिया था। उसके सिर में चोट से जो घाव ा उसमें निरन्तर खून बहने लगा था; काफी समय तक वह बेहोश हो सड़क : पड़ी रही थी और तब अन्त में किसीने कार में डाल उसे घर तक पहुँ-या था, परन्तु इन्दिरा को लिखे पत्र में उसने इस घटना का मामूली-सा क्र किया था। यही लिखा था : "स्वयंसेवकों और स्वयंसेविकाओं के साथ तों और लाठियों की चोटें खाकर मैं अपने को बड़ा सौभाग्यशाली मानती ?"

तब दूसरा विश्व युद्ध आरम्भ हुआ था। भारत में वैयक्तिक सत्याग्रह भी ारम्भ हुआ। नेहरू एक बार फिर जेल में बंद कर दिये गये। इन्दिरा के न में एक विचार बार-बार आ रहा था : "मुझे लौट जाना चाहिए, मुझे वश्य ही लौट जाना चाहिए।" वह अब कांग्रेस की पूर्ण सदस्या थी और त्याग्रह करने की अधिकारी थी। उसे याद हो आया कि बचपन में 'जोन ाफ आर्क' की बलिदान गाथा से वह कितनी प्रभावित हुई थी और इलाहा बाद में अपने शिक्षक को उत्तर दिया था : "मैं तो 'जोन आफ आर्क' के समान

बनना पसन्द करोगी ?" अपने तेरहवें जन्म दिवस पर ३० नवम्बर १९
को पिता द्वारा लिखा एक और पत्र भी उसे याद हो आया : "मेरे उपहार व
भौतिक अथवा ठोस रूप नहीं ले सकते; वे केवल मन और भावना के रूप
ही हो सकते हैं। इनको जेल की ऊँची-ऊँची दिवारें भी रोक नहीं सकतें
तुम्हें याद है कि जब पहले-पहल तुमने 'जोन आफ आर्क' की कहानी पढ़ी
तो तुम कितनी मंत्र-मुग्ध हो गई थी; तुममें महत्वाकांक्षा जग गई थी कि
भी कुछ वैसी बनो।"

इंदिरा का स्वास्थ्य पहले से ही खराब रहता था, वह इन्हीं दिनों प्लूर
रोग से पीड़ित हो गई। इंगलैंड के एक गाँव में वह घूमने गई थी। मौसम
ठंडा था; वह वर्षा में फंस गई और बुरी तरह से भीग गई। लौटने
वह इतनी बीमार हो गयी कि उसे अस्पताल में दाखिल करवाना पड़ा। उस
रोग का निदान प्लूरसी हुआ। पिता से निर्देश प्राप्त करके वह स्विटजरल
के सेनीटोरियम में दाखिल हो गयी।

वहाँ पर लगभग एक वर्ष तक रही। सन् '४० में उसने भारत लौटने
फैसला किया। नेहरू ने अपनी विशिष्ट शैली में लिखा था : "मुझे प्रसन्नता
कि इन्दु तुमने लौटने का फैसला कर लिया है। इसमें शक नहीं कि यह फैस
खतरों से भरा पड़ा है। परन्तु अलग होकर परेशान रहने की बजाय इन
खतरों का सामना करना ही बेहतर है। यदि लौटना है तो इसके सब परिणा
पर विचार कर लेना चाहिए।"

अप्रैल १९४१ में इन्दिरा और फिरोज स्टीमर से भारत के लिए रवा
हुए। इस प्रकार इन्दिरा ने बिना किसी औपचारिक डिग्री के अपनी शि
समाप्त की। बचपन से ही वह भारत की राजनैतिक और सामाजिक उथ
पुथल में गहरी डूबी रही थी। टैगोर के शान्ति निकेतन में उसे दुगुनी शां
मिली थी। पुलिस से राहत के अलावा कुछ आत्मिक शान्ति वहाँ उसे प्रा
हुई थी।

भारत तक की यह लम्बी यात्रा बड़ी सावधानी से की गई। उन दि
महानागरों में जगह-जगह जर्मन पनडुब्बियाँ घूमती थीं और मित्र देशों
जहाजों को खोज-खोजकर डुबोती थीं। बड़ी कठिनाई से शत्रु की पनडुब्बि

आठवाँ अध्याय

विवाह व दाम्पत्य जीवन

यूरोप से १९४१ में लौटने के बाद इन्दिरा स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़ी। फिरोज गांधी से उसके विवाह की बातचीत भी चल रही थी। फिरोज पारसी थे, बम्बई में १९१२ में उनका जन्म हुआ था। उनका पारिवारिक घर इलाहाबाद में आनन्द भवन के निकट ही था। बाल्यावस्था में इन्दिरा और वह एक साथ खेलते रहे थे। मोतीलाल नेहरू के प्रभाव में आकर किशोर फिरोज ने भी स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेना शुरू कर दिया था। कांग्रेस पार्टी के काम में वह काफी समय देने लगे थे। फिरोज बड़े सेवावृत्ति वाले और भावुक युवक थे। जब यूरोप में इन्दिरा अपनी माता की सेवा-सुश्रुषा अकेली ही कर रही थी तो वह वहाँ पर पहुँचे और उसकी सेवा की। गांधी जी के शब्दों में : "फिरोज ने बीमारी में कमला नेहरू की बड़ी सेवा की। वह उसे पुत्र के समान प्यारा था।" इन्दिरा तथा फिरोज के स्वाभाविक रूप से सम्बन्ध घनिष्ठ बने। जब कमला की मृत्यु हुई तो इन्दिरा के साथ वह भी वहाँ पर थे।

फिरोज ने लंदन के 'स्कूल आफ इकनामिक्स' में अध्ययन किया और वहां से स्नातक परीक्षा पास की। कुछ समय उन्होंने 'इनर टैम्पल' में भी अध्ययन किया परन्तु अधिक देर वह वहाँ पर रुके नहीं। बड़ी लगन से वह इन्दिरा के इंगलैंड निवास के दौरान उसके एकाकीपन को दूर करते रहे। श्री वी० के० कृष्णामेनन के नेतृत्व में चलायी जा रही 'इण्डियन लीग' के कार्यक्रमों के लिए भी वह इकट्ठे काम करते रहे। फिरोज और इन्दिरा १९४१ में इकट्ठे इलाहाबाद लौट आए।

फिरोज और इन्दिरा के विवाह का विरोध भी हुआ, विशेष रूप से इस-

लग्नपत्रिका जितने भी चाहे लोगों को भेज सकते हैं और सभी से उनके आ
वाद मांग सकते हैं परन्तु किसी व्यक्ति-विशेष को वहाँ पहुँचने का
करने की जरूरत नहीं। यदि एक को वहाँ पर बुलाया जाता है तो शेष
को भी बुलाना पड़ेगा। परन्तु यह देखने की बात है कि इन्दिरा को भी इ
सादगी पसन्द है या नहीं।"

यह विवाह २६ मार्च १९४२ बृहस्पतिवार, वसन्त पंचमी के दिन सम्
हुआ। इलाहाबाद में उस दिन आकाश साफ था और धूप खिली हुई
आनन्द भवन की दिवारों को फूलों से सजा दिया गया था। मंद-मंद
उनके साथ खिलवाड़ कर रही थी। सुगन्धित गुलाब के फूलों से सारा वातावर
खुशबू से भर उठा था।

विवाह के समय इन्दिरा ने गुलाबी साड़ी पहनी हुई थी। उसपर
के फूलों से कढ़ाई की हुई थी। यह फूल उसके स्नेही पिता ने उसे बढ़िया
से बनवाये थे जिसे उन्होंने स्वयं जेल में काता था। इन्दिरा की अनेक सखि
वहाँ पर उपस्थित थीं। उन्होंने उसके बालों में कंघी की, सुगन्धित तेल
बालों को तैयार किया। साड़ी के ऊपर ताजे पत्तों व फूलों से बनाये
नेवलस, ब्रेसलेट और अन्य आभूषण पहनाए। तैयार होने के बाद
वह अपनी सखियों में मिल गई, कभी इतनी सुन्दर वह पहले दिखाई न दी

दो-तीन दिन पहले से ही परिवार के मित्रों और सम्बन्धियों का
पर आना शुरू हो गया था और आनन्द भवन में मेले जैसी रौनक हो
थी। सप्ताहों से उपहार निरन्तर आ रहे थे। मुदित इन्दिरा लज्जा से
हो उठी थी परन्तु निरन्तर अधिक होने रोमांच के बावजूद वह शांत
मित्रों और सम्बन्धियों से बधाइयां ले रही थी।

अपनी आत्मकथा में दुग्रा कृष्णा हथीसिंह ने इस अवसर के बा
लिखा है: "इन्दिरा पहले कभी इतनी सुन्दर नहीं लगती थी। दुबली-प
इन्दिरा ऐसे प्रतीत हो रही थी मानों कोई स्वर्ग की अप्सरा हो। वह
पास के लोगों से हँस-हँसकर बातें कर रही थी, परन्तु बीच में कभी-
उसकी बड़ी-बड़ी काली आँखें और गहरी काली हो जातीं। कुछ शोक-
सुदूर कहीं देखने लगती। इस हर्ष के दिन कौन-सा काला बादल उसके सु
अपनी माँ की याद आ रही थी जो पर

सिवार चुकी थी या उसे अपने पिता से अलग होने का विचार परेशान कर रहा था और वह पिता भी ऐसा था जिसका वह स्वयं जीवन थी। वह अब अपने पिता को उस एकाकीपन में छोड़े जा रही थी जो पहले से भी अधिक भीषण होनेवाला था।"

विवाह आनन्द भवन के खुले आँगन में हुआ। वहाँ पर एक मंडप तैयार कर दिया गया था। यज्ञ के लिए एक छोटी-सी वेदी बनी हुई थी। उसके एक तरफ इन्दिरा और फिरोज के लिए चटाइयाँ बिछी हुई थीं, दूसरी तरफ इन्दिरा के बुजुर्गों के लिए चटाइयाँ थीं। चारों तरफ आमंत्रित व्यक्तियों के लिए गलीचे बिछे हुए थे। बिना बुलाए पहुँच जानेवाले अतिथियों को भी भगाया नहीं गया। ऐसे कई अतिथि तो विवाह देखने के लिए वृक्षों पर भी चढ़ गये थे।

इन्दिरा के द्वारा विवाह की स्वीकृति देने के साथ यह समारोह आरम्भ हुआ। स्वतंत्रता बनाये रखने के संकल्प का समारोह—जय होम—किया गया और इन्दिरा ने संस्कृत के श्लोक पढ़े।

जवाहरलाल द्वारा कन्यादान के साथ विवाह का दूसरा भाग आरम्भ हुआ। इसके बाद इन्दिरा पिता के पास से उठी और फिरोज के पास बैठ गई, फिरोज ने श्लोक पढ़कर संकल्प लिया कि वह इन्दिरा की इच्छाओं का सम्मान करेगा और कभी उसकी उपेक्षा न करेगा।

इसके पश्चात् होम हुआ। अग्नि प्रज्वलित की गई तथा पुरोहितों ने मंत्रपाठ करते हुए इस अग्नि में घी डालना आरम्भ किया। सप्तपदी हुई, हाथ में हाथ पकड़े नये जोड़े ने सात बार अग्नि की परिक्रमा की और इस तरह विवाह पूर्ण हो गया। इन्दिरा और फिरोज ने एक-दूसरे के हाथ से प्रतीक के रूप में भोजन किया और तब घर की महिलाओं ने फिरोज और इन्दिरा पर पुष्प वर्षा की। विवाह के अवसर पर गाये जाने वाले गीत गाये। इन्दिरा और अतिथियों के सामने खड़े होकर ऋग्वेद के मंत्रों को बोलकर संकल्प लिए, तब यह विवाह संस्कार समाप्त हुआ।

विवाह समारोह के बाद हर कोई शादी की धूमधाम में मस्त हो गया। इन्दिरा और फिरोज बाल्यावस्था में ही मित्र रहे थे, उन दोनों की यही मैत्री

बाद में प्रेम में बदल गयी और अन्त में उनमें विवाह भी हो गया। अब वे मृत्युपर्यन्त एक-दूसरे के साथ थे। उनको एक-दूसरे के साथ रहना भी था।

नव-विवाहित दम्पति घूमने के लिए कश्मीर गया। कश्मीर को बहुमंजिला भवन कहा गया है, क्योंकि वहाँ बहुत सुन्दर दृश्यावलि थी। हिमालय की हिमाच्छादित चोटियों पर यह कश्मीर प्रदेश बहुत सुन्दर दिखाई देता है। नीचे की हरियाली-भरी घाटी हरे गलीचे की तरह दिखाई देती है। मानव निर्मित नहरें, नदियों के नीले जल और झीलों के जल को एक-दूसरे से मिला देती हैं। चिनार के बड़े-बड़े वृक्ष सूर्य की धूप से बचाव करते हैं। ठंडे पहाड़ मैदानों की गर्मियों से आनेवाले लोगों को बड़ी राहत देते हैं। नव-युगलों के लिए तो यह स्वप्न-देश है।

कश्मीर की नदियों, झीलोंवाली उस सौन्दर्य भूमि में फिरोज और इन्दिरा ने बड़े आनन्द के दिन व्यतीत किए। नेहरू उन दिनों इलाहाबाद की तेज गर्मियों में स्वतंत्रता संघर्ष कर रहे थे। मजाक-मजाक में इन्दिरा और फिरोज ने उन्हें तार दिया : "क्या ही अच्छा होता यदि हम यहाँ की कुछ सर्द हवाओं को आप तक भेज सकते। कठिनाई में भी हँसी-मजाक, चुहल न छोड़नेवाले नेहरू ने जवाब दिया : "धन्यवाद, परन्तु आप लोगों को आम कहाँ नसीब।"

इलाहाबाद लौटने पर इंदिरा और फिरोज किराये का मकान लेकर आनन्द भवन के निकट ही फोर्ट रोड पर रहने लगे। वह स्वतंत्रता आन्दोलन में पूरे जोरों से भाग लेने लगे। इविंग क्रिश्चियन कालेज के छात्रों ने अपने कालेज के प्रांगण में तिरंगा लहराने का संकल्प किया। इसके लिए इंदिरा को आमंत्रित किया गया। वह इस बात के लिए तैयार थी कि उसे गिरफ्तार भी किया जा सकता है। छात्र जब तिरंगा फहराने की कोशिश कर रहे थे, पुलिस ने बुरी तरह से उन्हें पीटा; यह देखकर इंदिरा व्याकुल हो उठी। उनमें कई छात्र खून से लथपथ हो गये।

झंडा जमीन पर गिर गया। इससे पहले कि पुलिस इसे रौंद सके इन्दिरा भागकर वहाँ पहुँची और उसे जमीन से उठा लिया और ऊँचे उठाए रखा। जब छात्रों ने देखा कि जवाहरलाल की बेटी ने झंडा पकड़ लिया है तो वे फिर उसके चारों ओर जमा हो गये। तब एकाएक उसे पीछे से लाठी की चोट

सभी भारतीय राजनैतिक दलों ने क्रिप्स के प्रस्तावों का विरोध किया। उनका मत था कि इस तरह से भारत को प्रशासन और रक्षा विभाग नहीं दिया जा रहा था।

मुस्लिमलीग का कहना था कि यह योजना बहुत अस्पष्ट है और भारत के विभाजन की उसकी मांग पूरी नहीं होती।

क्रिप्स शिष्टमंडल की असफलता के बाद सारे भारत में रोष की लहर फैल गयी। महात्मा गांधी ने अहिंसक असहयोग का आह्वान किया। उन्होंने 'भारत छोड़ो' का नारा लगाया।

इन्दिरा और फिरोज इस ऐतिहासिक अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के अधिवेशन में भाग लेने के लिए बम्बई गये। भारत ने ब्रिटिश शासन से छुटकारा पाने के लिए भरसक प्रयास किया। प्रगतिशील और क्रान्तिकारी वर्ग कुछ करने की मांग कर रहे थे। यह अधिवेशन गोवालिया टैंक मैदान में हुआ। ८ अगस्त १९४२ को भारत छोड़ो प्रस्ताव पास कर दिया गया। परन्तु इससे पहले कि समिति किसी प्रकार की तैयारी कर सके सारे देश में कांग्रेसी नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया।

इंदिरा अपनी बुआ कृष्णा हथीसिंह के साथ रह रही थीं। वह अपने पिता के सामान बांधने में सहायता दे रही थीं कि एकाएक पुलिस दिन निकलने से पहले ही आ गयी और उन्हें गिरफ्तार कर ले गयी। अगले दिन वह आनन्द भवन चली गयीं। वहां पर पुलिस बहुत सवेरे पहुँच गयी और बुआ विजयलक्ष्मी पंडित को गिरफ्तार कर लिया। भूतकाल की अनेक स्मृतियां इन्दिरा के मन में उभर आयीं कि किस तरह बचपन में वह पिता को आंसू-भरी विदाई दिया करती थी जब पुलिस उन्हें गिरफ्तार करके ले जाया करती थी। तब वह बालिका थी और निःसहाय-सी चुपचाप खड़ी देखने के सिवाय और कुछ न कर सकती थी। परन्तु अब तो वह बालिग और कांग्रेस की सदस्य थी। अब वह निःसहाय दर्शक की भांति खड़ी न रह सकती थी। उसने बुआ की तीन लड़कियों—चन्द्रलेखा, नयनतारा और तारा—को अपने चारों ओर एकत्र कर लिया। उसे पता था कि आनन्द भवन में यह अब सबसे बड़ी थी। उसमें उत्तरदायित्व की एक नयी भावना पैदा हो गयी थी।

इन्दिरा फिरोज के बारे में चिंतित थी। भारत छोड़ो आन्दोलन के दिनों वह कांग्रेस का प्रचार कार्य करते थे। वह क्योंकि सक्रिय कार्यकर्ता थे इसलिए उनको गिरफ्तार करने के लिए वारंट जारी कर दिए गए। गिरफ्तारी से बच वह छुपकर काम करने लगे थे। उन्होंने दाढ़ी बढ़ा खाकी वेश पहन अपने को छुपा लिया था। रंग साफ होने और गालों के लाल होने के कारण उन्हें एंग्लो इण्डियन सैनिक ही समझा जा रहा था। बम्बई से इलाहाबाद यात्रा के दौरान वह बीच के एक छोटे-से स्टेशन पर उतर गये।

फिरोज ने सोचा था कि इलाहाबाद में सब उसे पहचानते हैं और भेष बदला होने के बावजूद लोगों की निगाह से छुप नहीं पाएंगे। काफी देर तक वह आगे यात्रा के लिए कोई साधन न पा सके। वह अधीर हो रहे थे। कुछ समय बाद वहाँ से ब्रिटिश और एंग्लो इण्डियन सैनिकों से भरा एक ट्रक गुजरा। उसने उनसे कहा कि वे इलाहाबाद तक पहुंचा देवें। उसने पाया कि वे सैनिक घबराए हुए हैं और उसे इलाहाबाद छोड़ने को किसी भी हालत में तैयार नहीं। उनका कहना था कि यदि वहाँ लोगों ने उसे पकड़ लिया तो वे उसे छोड़ेंगे नहीं और मौत के घाट उतार देंगे। परन्तु काफी देर तक बातचीत करके उसने उनको विश्वास दिलवा दिया कि वह सुरक्षित ही रहेगा और उसका कुछ बिगड़ेगा नहीं। बड़ी अनिच्छा से उन लोगों ने फीरोज को इलाहाबाद उतारा।

इलाहाबाद पहुँच जाने के बाद उसने पत्नी इन्दिरा से सम्पर्क स्थापित किया। अपने ऐसे दोस्तों के घरों में जिनका राजनीति से कोई वास्ता न था वे लोग रात को मिलते। पुलिस और सेना ने जो सुरक्षा सम्बन्धी कड़े कदम उठाए थे उनके कारण छुपकर काम करनेवाले राजनैतिक कार्यकर्ताओं का एक साथ मिलकर बैठना असंभव था, फिर भी इन्दिरा ने फीरोज द्वारा उन लोगों तक राजनैतिक साहित्य और धन पहुँचाने में सफलता प्राप्त कर ली।

स्वराज-भवन उन दिनों कांग्रेस का मुख्य कार्यालय था। सेना द्वारा वह अधिकार में कर लिया गया था। इसलिए इन्दिरा और आनन्द भवन के अन्य वासियों को सदा सैनिकों की मशीनगनों और रायफलों के सामने रहना होता था। आनन्द भवन के नौकर तो अधिकांश देहाती थे। वे इनको देखकर डर

जाया करते थे। जब कभी वे स्वराज्य भवन की निकटवाली दीवार के पास पहुँचते 'रुको' की आवाज से चौंक जाते। उन सैनिकों को कोई जवाब देने की हिम्मत उनमें नहीं होती।

लालबहादुर शास्त्री का आनन्द भवन से बड़ी देर से सम्बन्ध था। वह जवाहरलाल के काफी निकट थे। यह भी सबको पता था कि लालबहादुर के नाम गिरफ्तारी के वारंट हैं। अक्लमंद शास्त्री ने सोचा था कि कोई भी यह नहीं सोचेगा कि मैं आनन्द भवन में ही रह रहा हूँ। इसलिए उन्होंने आनंद-भवन में ही रहकर पुलिस को मात दी। कुछ समय उन्होंने छुपे रहकर ही काम करने का निर्णय किया था। इस अवधि में उन्होंने इस आन्दोलन को चलाने के महत्वपूर्ण कार्य के लिए प्रबंध व्यवस्था पूरी की। उन्हें सारा दिन कमरे में ही बन्द रहना होता। अंधेरा होने के बाद ही वह घर से निकलते। इन्दिरा उन्हें उनके कमरे में खाना पहुँचाया करती थी। हर चीज बड़ी सावधानी से करनी होती थी। यह कार्य करना भी इस प्रकार से था कि किसी की नजर न पड़े। घर के कर्मचारी दिखावा करते कि उस कमरे में घर का सदस्य बीमार पड़ा है और बिस्तर पर ही उसे खाना पहुँचाना होता है, उनकी सेवा-सुश्रुषा करनी होती है। शास्त्री और उनके सम्बन्धियों को पता था कि वे अधिक देर छुपकर नहीं रह सकते। सादा वेष पहने पुलिस सारा दिन और रात निरन्तर आनन्द भवन की निगरानी करती थी। यह भी खतरा था कि किसी भी समय घर की तलाशी ले ली जाय। इन सब बातों को सोचकर शास्त्रीजी वहाँ से निकल और किसी स्थान पर छुपने की सोचने लगे थे। परन्तु सादे कपड़े पहने सिपाही शास्त्री से कहीं अधिक चतुर निकले। कुछ समय बाद उनको गिरफ्तार कर लिया गया और जेल ले जाया गया। शास्त्रीजी हमेशा इंदिरा के लिए सहायक सिद्ध हुए थे, आनन्द भवन में उनका अभाव बहुत अखरा। इन्दिरा जब बच्ची थी तभी से शास्त्रीजी को उनपर स्नेह रहा था। कहा जाता है कि स्वतंत्रता आन्दोलन में गंभीर चेहरे लिए जितने भी कार्यकर्ता आते उनमें से केवल शास्त्री ही ऐसे थे जो थोड़ा समय एकाकी इंदिरा से खेलने के लिए निकाल लिया करते थे।

इन्दिरा को विश्वस्त सूत्रों से जानकारी मिली थी कि उसे शीघ्र गिर-

इन्दिरा और फिरोज सहित बहुतों को गिरफ्तार कर लिया गया। उ
जेल ले जाया गया। जेल तक की यात्रा इंदिरा का कहना है : "बहुत
रण थी। मेरी बातचीत से उस मोटर गाड़ी के पुलिस सिपाही इ
हो उठे कि उन्होंने बार-बार मुझसे क्षमा माँगी। उन्होंने अपने
मेरे पाँवों पर रख दीं। बड़े ही दुख में रोते-रोते कहने लगे कि यह
उन्होंने मजबूरी में अपनी रोजी की खातिर किया है।"

कैदियों को छोटे-छोटे दलों में बाँट दिया गया था। वे लोग आपस
चीत कर रहे थे कि किसीने पुकारा 'श्रीमती इन्दिरा गांधी ?' सारी
उत्तेजना फैल गयी। इन्दिरा ने जेल में प्रवेश किया तो एकाएक वह
छा गया। इन्दिरा बड़े ही गौरवमय ढंग से माथा ऊँचा किए चल
वहाँ जेल में अनेकों संडलियों ने उनका अभिनन्दन किया। उसने
अपनी बुआ विजयलक्ष्मी पंडित को पाया तो प्रसन्न हो उठीं। दोनों
मिलकर रात को देर तक बैठी बातें करती रहीं।

कुछ दिन बाद परिवार का एक और सदस्य भी उनमें आ मिला
पंडित की पुत्री लेखा को भी जेल में लाया गया। श्रीमती पंडित अप
दिनों में डायरी रखती थीं। उन्होंने लिखा है कि इन्दिरा सदैव की त
उन दिनों भी था। अन्य महिला कैदियों के लिए वह प्रेरणा स्रोत
इन्दिरा के अपने शब्दों से पता चलता है कि उसके दिल पर क्या
थी। यद्यपि वह सदैव खुश रहने का निरन्तर प्रयास करती थी।

बाहर से देखने-सुनने और अन्दर से अनुभव करने में बड़ा अन्तर
किसीने कभी जेल काटी नहीं तो वह अनुभव ही नहीं कर सकता
प्रकार से वहाँ मन बुझ जाता है। ओस्कार वाइल्ड ने लिखा है: "हर
के समान होता है, और यह वर्ष ऐसा होता है जिसके दिन बहुत लम्बे
दिन के बाद दिन एक तरह के वातावरण में बिताना होता है।
अपमान की स्थिति में से गुजरना होता।" पैथिक लारेंस ने लिखा
के जीवन में मुख्य बात यह होती है कि वह मानव से निचली कोटि
हो जाता है। कैद में व्यक्तियों को जानवरों की तरह गिरोहों में
जाता है। उनमें न तो कोई अपना व्यक्तित्व रहता है न ही निजी
केवल उन्हें बाहर के लोगों के साथ, समाचार से वंचित रहना होता है

सब तरह की रंगीनी, मृदुता, भव्यता और सौन्दर्य से भी वंचित हो जाता है।" "मैदान, दीवारें और चारों ओर की सब चीजें मटमैली-सी होती है। जेल में धुले कपड़ों का रंग भी वैसा ही हो जाता है। खाने में भी कुछ ऐसा ही स्वाद आने लगता है। वहाँ घिरे बाड़े में छोटे-छोटे छिद्र थे। हमें आँधी और तूफानों, वर्षा की बौछारों और कठिन सर्दियों को भुगतना होता है। अन्य लोगों को एक मुलाकात मिलती थी। मास में एक या दो बार पत्र भी मिलते थे परन्तु मुझे ये भी नहीं। मेरे पति उसी जेल में थे। लगातार प्रयासों के बाद ही हमें आपस में भेंट करने की इजाज़त दी गयी। परन्तु शीघ्र ही उनका स्थानांतरण और किसी जेल में कर दिया गया मैं हँसमुख रहने की कोशिश करती और पढ़ने तथा पढ़ाने में व्यस्त रहती। मैं जिस बच्चे की माँ को पढ़ा रही थी उसका पूरा ध्यान रखने का जिम्मा मैंने ले लिया। मैं उसे सिखा-पढ़ा इसलिए रही थी कि जब वह जेल से रिहा हो तो अपनी रोजी कमाने लायक बन सके।"

जवाहरलाल जब जेल में थे तो उनको यह याद रहा कि इन्दिरा बचपन से ही आम खाने की कितनी शौकीन रही है। उन्हें मालूम था कि काफी समय से उसे अपना प्रिय फल आम नहीं मिला। एक मित्र को उन्होंने लिखा कि वह उसके लिए आम पहुँचा देवे। सचमुच में ही स्वाद आमों की टोकरी जेल पहुँची भी। परन्तु जेल के सुपरिंटेंडेंट और अन्य अधिकारियों ने ही उनका स्वाद लिया। बाद में इन्दिरा ने लिखा कि उस जेलर में इतनी भी भलमन साहत नहीं थी कि वह मुझे अथवा मेरे साथियों को एक आम तो दे देता यह हाल हुआ उन स्वाद आमों का। वे शायद प्रतीक-मात्र थे, क्योंकि यह पहला अवसर नहीं था जबकि दृश्य और अदृश्य हाथों ने भाग्य ने इन्दिरा के जीवन में से अनेक प्रिय और बहुमूल्य वस्तुओं को हटाया था। इन्दिरा का कहना है कि कुछ समय बाद उसके मन में बाहरी दुनिया के प्रति कोई लगाव न रह गया था, क्योंकि कोई वहाँ पर था ही नहीं जिसके साथ होने की दिल में चाह होती, सभी निकट सम्बंधी तथा अन्य स्वतन्त्रता संग्राम के साथी या तो जेल के सीखचों के पीछे बन्द थे और या भूमिगत राजनैतिक काम करते थे इसके अतिरिक्त इन्दिरा और अन्य राजनैतिक कैदियों का यह पक्का विश्वास था कि वे लोग लगभग सात वर्ष तक जेल में ही रहेंगे। इन्दिरा ने ये सब कष्ट

ऐसी हुई कि हँसने को बहुत कुछ मिला। मिसाल के तौर पर जब इन्दिरा का स्वास्थ्य बहुत गिर गया और जनता में इस बारे में चिन्ता फैल गयी तो उत्तर प्रदेश के गवर्नर ने सिविल सर्जन को भेजा कि वह इन्दिरा के स्वास्थ्य की जाँच करे। सिविल सर्जन ने जाँच के बाद विशेष भोजन और टॉनिक का नुस्खा लिखा। इसमें ओवलटीन आदि मंहगी चीजों का भी जिकर था। परन्तु जेल के सुपरिंटेंडेंट इस नुस्खे को देखते ही आग-बबूला हो गए। ज्यों ही सर्जन वहाँ से गया उसने इस नुस्खे को फाड़कर फेंक दिया। ऐसा उसने इन्दिरा के सामने किया : "यदि आप को यह भ्रम हो कि कोई ऐसी स्वास्थ्यवर्द्धक वस्तुएँ यहाँ मिलेंगी तो आप गलतफहमी में हो।" उसने कहा। रोगिणी इन्दिरा को इस सारे कांड पर आश्चर्य हुआ, क्योंकि उसने तो कुछ मांगा नहीं था।

जेल में कई बार ऐसी घटना भी हुई जिन्होंने वहाँ के उदासी-भरे वातावरण में रहनेवाले लोगों को चौंका दिया। मिसाल के तौर पर जेल के निकट ही एक विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया। यह एक रोमांस का दुखद अन्त था। वह युद्ध के दिन थे। जेल के निकट ही छावनी में ब्रिटिश सैनिक जमा थे। कनाडा के एक विमानचालक को जेलर की पुत्री से प्रेम था। अपनी प्रेमिका को अपना कौशल दिखाने के इरादे से वह उसकी छत के ऊपर से काफी नीची उड़ान भरा करता था। एक बार ऐसी उड़ान के दौरान विमान का पंख बिजली के तार के खम्बों से टकरा गया और विमान नीचे गिर गया उसमें आग लग गयी। वह जेल के ऊपर गिरने ही वाला था कि भाग्य से कुछ आगे निकलकर आधे बने बंगले की छत पर जा गिरा।

इन्दिरा ने खून जमा देनेवाली एक अन्य घटना का वर्णन भी किया है, जो रात के समय घटी थी। यह घटना रात को हुई। जेल की वार्डरों में जौहरा ऐसी थी जिसे सब लोग नापसन्द करते थे। आधी रात को एक बार उसके जोर जोर से चीखने की आवाजें सुनायी देने लगीं। वह डरकर चीखें इसलिए मार रही थी कि राउंड के दौरान उसे जिस घड़ी को चाबी देनी होती थी उसपर एक कोबरा सांप कुंडली मारकर बैठा था। उसे उस विषधर से तो डर लग रहा था परन्तु साथ ही वह डर रही थी कि यदि उसने अपना काम पूरा न किया तो कहीं इस काम से ही न उसे हटा दिया जाय। कोबरा इंदिरा के सीखचों से केवल एक गज की दूरी पर था। वह दीवारों के भीतर थी और

में समंजित करने में कुछ समय लगा।"

भाग्य की बात कि इन्दिरा के पति फिरोज को अगस्त १९४३ में जेल रिहा कर दिया गया। वे दोनों आनन्द भवन में एक साथ रहने लगे। जेल कष्टमय जीवन को व्यतीत करने के बाद एक साथ आनंद भवन में रहना व सुखद उन लोगों को लग रहा था।

कुछ समय बाद वह मातृत्व प्राप्त करने की स्थिति में थी। अपनी गर्भ वस्था के दिनों में वह चाहती थी कि उसकी अच्छी देखभाल हो। इसलिए व बम्बई चली गयी और बुआ कृष्णा हथीसिंह के पास रहने लगी। उनके पह पुत्र राजीव का जन्म २० अगस्त १९४४ को हुआ। कृष्णा हथीसिंह ने श समाचार नाना जवाहरलाल को दिया। वह इस समय अपने दूसरे घर- 'अहमदनगर जेल' में थे। अपनी बहिन को उत्तर में उन्होंने लिखा: "अप पत्र में मैंने इंदु को लिखा है कि वह तुम्हें कहे कि किसी योग्य पंडित से बच्च की जन्मी बनवा ले। जन्म के समय और तिथि के इस प्रकार के रिकार्ड आव श्यक और उपयोगी होते हैं। जहाँ तक समय का सवाल है उचित तो यही कि सौर समय अंकित किया जाय न कि समय जो आजकल इस्तेमाल किय जाता है।" युद्ध का यह समय आम समय से कम से कम एक घण्टा आगे है

द्वितीय महायुद्ध के दौरान ब्रिटिश सरकार और उसके साथी मित्र देशों भारत के सब साधनों का इस्तेमाल किया था। जापान ने १९४२ में जब ब्र रोंट अपने अधिकार में ले लिया तो अमरीकी और ब्रिटिश हवाई अड्डे भार में स्थापित किये गये। सामान भारत से चीन पहुँचाया जाने लगा। भारत स्थली ब्रिटिश सेनाओं ने बर्मा में जापानियों के विरुद्ध घनघोर युद्ध शुरू क दिया।

भारत १९४३ के अन्त तक ब्रिटेन और अन्य मित्र देशों की सेनाओं लिए सप्लाई का मुख्य केन्द्र बन गया था। यहाँ पर सैनिकों को प्रशिक्षि भी दिया जाने लगा। जापानियों ने मार्च १९४४ में पूर्वी भारत पर आक्रम कर दिया। परन्तु ब्रिटिश, भारतीय और अमरीकी फौजों ने आक्रमणकारि को खदेड़कर वापिस बर्मा तक पहुँचा दिया।

ब्रिटिश सरकार का किसी प्रकार से कांग्रेसी नेताओं से समझौता न ह

Swearing in ceremony of Mrs. Gandhi as
Minister of Information and Broadcasting

Mrs. Gandhi with Mr. V. V. Giri and
Sheikh Mujibur Rehman.

Mrs. Gandhi and Mr. Hamayun Rashid, High Commissioner of Bangla Desh, in Delhi, on December 19, 1971.

Mrs. Indira Gandhi being greeted by Shri V. V. Giri on Delhi Airport, on

When Prime Minister greets President on Birthday.

सका, इसलिए अधिकांश कांग्रेसी नेता जेलों में ही बन्द रहे। महात्मा गांधी को पूना के निकट आगाखाँ महल में रखा गया। कांग्रेस कार्यसमिति के सदस्य जिनमें जवाहरलाल नेहरू भी शामिल थे अहमदनगर के किले में रखे गये। जवाहरलाल के लिए यह अन्तिम जेल यात्रा थी। यह सबसे लम्बी अवधि भी थी उनके जेल में रहने की। १५ जून १९४५ को लगभग तीन वर्ष पश्चात उन्हें रिहा किया गया। कुल मिलाकर जवाहरलाल ने नौ-बार जेल भुगती थी और दस वर्ष के लगभग की अवधि जेल में बिताई थी।

इन्दिरा आनन्द भवन लौट आई। जून १९४५ में पिता जवाहर भी वहीं आ गये थे। अधिकांश राजनैतिक कैदियों को शीघ्र ही रिहा कर दिया गया।

फिरोज अपने परिवार के पालन-पोषण के लिए किसी अच्छे काम की तलाश में थे। अन्त में उन्हें लखनऊ के नेशनल हैरल्ड में मैनेजिंग डायरेक्टर के पद पर नियुक्त कर लिया गया। यह एक अंग्रेजी दैनिक पत्र था। इसकी स्थापना १९३७ में जवाहरलाल ने की थी। मैनेजिंग डायरेक्टर के रूप में फिरोज बड़े सफल रहे। उत्तम प्रबन्ध व्यवस्था से उन्होंने इस समाचार पत्र व्यापार को सफल बना दिया।

फिरोज और इंदिरा लखनऊ में हजरत गंज मोहल्ले में एक छोटे से भवन में रहने लगे। इंदिरा को प्राय: लखनऊ और नई दिल्ली में अपना समय बिताना पड़ता था। उसे अपने घर की देखभाल तो करनी होती थी साथ में अपने कुछ प्रौढ़ होते पिता की भी देखभाल करने की जरूरत रहती।

ब्रिटेन के प्रधानमंत्री कलीमेंट एटली ने १९४६ के आरम्भ में भारत को पूर्ण स्वतंत्रता देने का आश्वासन दिया। यह शर्त रखी कि भारत के विभिन्न राजनैतिक दलों के नेताओं के इस बात पर सहमत होते ही कि वे किस प्रकार की सरकार चाहते हैं यह कार्य पूरा कर दिया जाएगा। १९४६ में अप्रैल से लेकर जून तक की अवधि में ब्रिटिश सरकार के नेता नई दिल्ली और शिमला में भारत के राजनैतिक और विभिन्न साम्प्रदायिक दलों के नेताओं से विचार-विमर्श करते रहे। कांग्रेस और लीग के प्रतिनिधि आपस में किसी समझौते पर न पहुँच सके। यह बैठक असफल रही। दिल्ली तथा अन्य कई नगरों में हिन्दु-मुस्लिम दंगे हुए इनमें बहुत से लोगों की मृत्यु हुई।

जवाहरलाल नेहरू ने १९४६ में नई दिल्ली में चार कमरों का एक फ्लैट लेकर उसे अपना निवास स्थान बना लिया था। वहीं पर इंदिरा ने अपने दूसरे पुत्र संजय का प्रसव किया। प्रसव के पश्चात् अभी उसकी शारीरिक अवस्था भली प्रकार सुधरी भी न थी कि महात्मा गांधी ने उसके जिम्मे यह कार्य लगा दिया कि वह दिल्ली के मुसलमानों के मन से सब तरह के डर दूर करे और रक्तपात बन्द करवाने के लिए कदम उठवाए। पहले तो उसने यह प्रयास किया कि सभी दंगाइयों को गिरफ्तार करवा दिया जाए और इस प्रकार दंगों का स्रोत ही बंद कर दिया जाए परन्तु इसमें वह सफल नहीं रही। इसलिए इंदिरा ने यह कोशिश की कि मोहल्लों के नेताओं में एकता पैदा की जाए और उनके प्रभाव से शान्ति पैदा की जाय। विभिन्न सम्प्रदायों के लगभग पांच सौ नेताओं को एक बैठक में इकट्ठा किया गया। इस बैठक में साम्प्रदायिक तनाव कम करने और आपस में मैत्रीभाव पैदा करने के तरीकों पर योजना बनाई गई। वहाँ एकत्र लोग आपस में इस समझौते पर पहुंचे कि हर कोई अपने क्षेत्र में लोगों को शान्ति से रहने की अपील करेगा और इस प्रकार कार्य करेगा कि विभिन्न सम्प्रदाय के लोगों में वर्षों से जो गलतफहमियां चली आ रही हैं वे समाप्त हो जाएं। इस सम्मेलन का परिणाम यह हुआ कि लोगों में तनाव काफी कम हो गया।

१९४७ में भारत के नए वायसराय लार्ड माउण्ट बेटन ने स्वतंत्रता के बारे में नई वार्ताएँ शुरू कीं। आपसी विवादों को सुलझाने के एकमात्र हल के रूप में भारत विभाजन को स्वीकार कर लिया गया। राष्ट्रमंडल के देशों में भारत और पाकिस्तान को अलग-अलग उपनिवेश बना लिया गया। अन्त में चिरप्रतीक्षित स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली गयी परन्तु भारतीय नेताओं को दो राष्ट्र का सिद्धान्त स्वीकार नहीं था। उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि भारत धर्मनिरपेक्ष राज्य होगा जिसमें सब लोगों को समान अधिकार प्राप्त होंगे। जवाहरलाल नेहरू कार्यवाहक प्रधानमंत्री बने। १४ अगस्त १९४७ की मध्य रात्रि को संविधान सभा में एक अत्यन्त प्रभावशाली समारोह हुआ, जिसमें स्वतन्त्रता की घोषणा की गयी। ऑल इण्डिया रेडियो के माध्यम से देश-भर में लाखों लोगों ने जवाहरलाल का भावनापूर्ण संदेश सुना : "वर्षों पहले", जवाहर

लाल ने कहा : "हमने नियति के साथ संकल्प किया था···और आज वह समय आ गया है जबकि हम अपने उस वचन को पूरा कर रहे हैं। बिल्कुल पूरा और सच्चे अर्थ में तो नहीं; परन्तु वास्तविक रूप में आज आधी रात को उस क्षण जब विश्व गहरी नींद में सोया है, भारत स्वतन्त्रता और नये जीवन में जाग रहा है। ये क्षण आता है पर आता इतिहास में कभी-कभी ही है, जब हम पुराने से नये में प्रवेश कर रहे होते हैं। जब एक युग समाप्त हो रहा होता है और देरी से दबी राष्ट्र की आत्मा अभिव्यक्ति का अवसर पाती है। यह उचित ही है कि इस पवित्र क्षण पर हम यह शपथ लें कि हम भारत और विश्व की जनता के कल्याण के लिए अपने जीवन समर्पित कर देंगे···" ऐसा कहा गया है कि शान्ति का विभाजन नहीं किया जा सकता। यही बात स्वतन्त्रता पर और अब समृद्धि पर और यही महाविनाश पर लागू होती है। इस एक विषय में पृथक-पृथक खंडों में इनको नहीं बाँटा जा सकता।

भारत, नेहरू और उनकी पुत्री के लिए यह विजय का क्षण था। इस क्षण को स्मरण करके इंदिरा कहती हैं : "मैं तो इतनी उत्तेजित और आत्माभिमान में थी कि मुझे लग रहा था कि मैं किसी भी क्षण फट पड़ूंगी।" उन्होंने स्पष्ट किया कि ऐसा अनुभव इसलिए हो रहा था कि उन्होंने उस संघर्ष में भाग लिया था जिसके फलस्वरूप उन्हें यह स्वतंत्रता मिल रही थी। वह संघर्ष बेकार नहीं था।

भारत की स्वतंत्रता से मिला हर्ष कुछ सीमा तक साम्प्रदायिक दंगों के कारण कम हो गया। पश्चिमी पाकिस्तान से लाखों हिन्दू और सिक्ख विस्थापित दिल्ली आने लगे। पाकिस्तानी मुसलमानों द्वारा किये अत्याचारों की जो कहानियाँ वे सुनाते वे रोंगटे खड़े कर देनेवाली होतीं। दिल्ली में मुसलमानों के प्रति जनता में गहरा रोष फैल गया। नतीजा हुआ कि वहाँ पर हिंसा, आग और लूट की घटनाएँ होने लगीं और बदले की बेवकूफी भरी कार्यवाहियों में अनेकों निर्दोष पुरुष, महिलाओं और बच्चों की हत्याएँ की गईं। जनता को हिंसा से रोकने के लिए गांधी, नेहरू और इन्दिरा तथा अन्य नेताओं ने भरसक प्रयत्न किया।

महात्मा गांधी प्रसिद्ध उद्योगपति घनश्यामदास बिड़ला

थे। वहाँ प्रतिदिन अपनी प्रार्थना सभाओं में गांधीजी लोगों से आग्रह कि करते थे कि वे कानून का पालन करें और विभिन्न सम्प्रदायों में शान्ति प्रेम भाव बनाये रखें। इस प्रार्थना सभा में अनेक धर्मों के प्रार्थना गीत गा जाया करते थे। बाईबल, कुरान, गीता तथा अन्य पवित्र धार्मिक पुस्तकों मे इन बैठकों में पाठ होता था। 'लार्ड प्रार्थना' (ईसा द्वारा अपने शिष्यों व बताई प्रार्थना) महात्मा गांधी को बड़ी पसन्द थी। आमतौर पर वह अप प्रार्थना सभा की समाप्ति निम्नलिखित भजन से किया करते थे :

"रघुपति राघव राजाराम;
पतित पावन सीता राम।
ईश्वर अल्ला तेरे नाम;
सबको सन्मति दे भगवान।"

गांधीजी यह मानते थे कि सभी धर्मों के लोगों में आपस में भ्रातृ-भा रहना चाहिए क्योंकि सभी धर्म ईश्वर की ओर ले जाने और मनुष्य-मात्र प्रेम करने की शिक्षा देते हैं।

जवाहरलाल १७ यार्क रोड पर तीन बैडरूम वाले एक छोटे से मकान रहते थे। उन्होंने यथासम्भव शरणार्थियों की सहायता का प्रयास किया; यह तक कि उन्होंने अपने घर के दो बैडरूम औरों के लिए दे दिए। अपने घर लॉन में उन्होंने अनेक शरणार्थियों को स्थान देने के लिए टैन्ट भी लगवा दिए इन्दिरा अपने पिता के साथ इन असहाय शरणार्थियों को देखभाल के लिए अन थक रूप से कार्य करती। यद्यपि वह राशन का जमाना था परन्तु घर व प्रबन्ध अच्छी तरह से करके उसने घर के सब सदस्यों और शरणार्थियों व खिलाने पिलाने की व्यवस्था कर ली थी।

इन्दिरा का कार्य केवल घर की देखभाल तक ही सीमित था। बीच-बी में वह अपने पिता के साथ उन स्थानों पर जाती जहाँ से दंगों के समाचा आते। अपने वैयक्तिक प्रभाव से भी उन्होंने खतरे में पड़े मुसलमानों को बचा की कोशिश की। एकबार जवाहरलाल हिंसक दंगियों की भीड़ की ओर भा और एक व्यक्ति की हाथ से तलवार भी छीन ली। वह उस तलवार से किसी निर्दोष व्यक्ति की हत्या करने ही वाला था। इन्दिरा भी उसी धातु की बनी

हुई थी। इन्दिरा ने भी एक हत्यारे को पकड़ लिया जो एक गुसलखाने हुआ था। उसने उसका चाकू छीना और धक्का मारकर बाहर निकाल एक अन्य अवसर पर इन्दिरा जीप पर बैठकर तुरन्त एक ऐसे मुसलमा वार के मकान पर पहुँची जिसे सशस्त्र भीड़ ने चारों तरफ से घेर लि पाकिस्तान में मुसलमानों द्वारा गैर मुस्लिम पर किये जा रहे अत्याच और ताजी खबरें आ रही थीं। इसलिए दिल्ली की जनता पहले ज्यादा क्रुद्ध हो गई थी। इन्दिरा की जीप नारे लगाती उस निकट रुकी। ड्राईवर खतरे को देखकर जीप छोड़कर भाग गया। को भी कई गालियाँ सुननी पड़ीं परन्तु वह बड़े शान्त भाव से औ घबराये उस मकान की ओर चली। भीड़ ने उसे जाने दिया। पर बदमाश ने सिर का कपड़ा फाड़कर उसका अपमान किया। उस अ कोई बहस न कर वह घर में चली गई और भयभीत परिवार को सुर बाहर निकाल अपने पिता के घर ले गई।

१३ जनवरी १९४८ को महात्मा गांधी ने हिंसा पर उतारू लोगों व बदलने और इस प्रकार साम्प्रदायिक सौहार्द स्थापित करने के लिए अनशन शुरू किया: "मैं तब तक कुछ भी न खाऊंगा", गांधी ने कहा तक मुसलमान दिल्ली की गलियों में सुरक्षापूर्वक नहीं चल फिर सकते सिक्ख और मुसलमानों को भाइयों की तरह रहना होगा।" भारत के पिता महात्मा गांधी के जीवन की रक्षा के बारे में स्थानीय लोगों और राष्ट्र में चिन्ता व्याप्त थी। अनेक लोगों ने महात्माजी के साथ सहानु अनशन शुरू कर दिया था। हिन्दुओं और सिक्खों को शान्त करने में इ शन का भारी प्रभाव पड़ा। मुसलमान इस अनशन से कुछ आश्वस्त हुए

इसे शुरू किए ६ दिन हुए थे कि विभिन्न सम्प्रदायों के नेताओं से वचन गांधीजी को मिल गये कि वे शान्ति बनाये रखेंगे। महात्माजी ने म अबुल कलाम आज़ाद के हाथों से संतरे के रस से भरा गिलास लेकर तोड़ा। दो दिन बाद महात्माजी ने अपनी प्रार्थना सभाओं को फिर से दि दिया। एक युवक ने उनपर बम्ब फेंका और दरवाजे से निकल भागा फेंका तो गांधीजी पर गया था परन्तु भाग्यवश उन्हें कोई चोट नहीं इस युवक को लोगों ने पकड़ लिया और पुलिस को सौंप दिया।

यह समाचार सुनते ही नेहरू बिड़ला हाउस भागे। गांधीजी से बातचीत दौरान उन्होंने यह सुझाव दिया कि जब तक उनके जीवन को खतरा है प्रार्थना सभाओं को बंद कर दें। "नहीं" यह महात्माजी का उत्तर था : हुत से लोग आते हैं और उन्हें मेरी जरूरत होती है मैं उनको नाराज नहीं : सकता।"

२६ जनवरी को दोपहर बाद इंदिरा अपने पुत्र राजीव, बुआ कृष्णा हथी-ह तथा नयनतारा के साथ गांधीजी से मिलने गई। यह भेंट बड़ी ही सुखद । अच्छा-अच्छा, बापू ने आंखें मटकाते हुए कहा : "तो यह सब राजकुमारियां के देखने आई है ?" सर्दियों की उस दोपहरी में वे सब धूप में बैठे आनन्द रहे थे। मेजबान गांधीजी बड़ी मनमौज में थे। उन्होंने नोआखली ने लाया क किसान का हैट पहना हुआ था। उन्होंने उनसे पूछा, "क्या इस हैट में मैं बसूरत दिखाई नहीं देता ?" इसपर वे सब खिल-खिलाकर हंस पड़े। बातें करते रहे। तब मेजबान ने यह कहकर इस भेंट को समाप्त किया : अब लड़कियो तुम गायब हो जाओ, नहीं तो बाहर इन्तजार करते लोग हें कोसेंगे।" बड़े संतोष के साथ वे लोग वहां से चली आयीं।

३० जनवरी सायंकाल गांधीजी हर रोज की तरह प्रार्थना सभा शुरू करने ए। खाकी कपड़े पहने एक मोटा तगड़ा युवक उनकी ओर बढ़ा और हाथ ोड़े पारम्परिक ढंग से नमस्कार करने लगा। गांधीजी ने भी हाथ जोड़कर नम-ार का उत्तर दिया। तभी एकाएक उस युवक ने छोटी-सी रिवाल्वर काली और निकट से तीन गोलियां चला दीं। दो गोलियां तो महात्माजी । छाती में गईं और तीसरी पेट में। "हरे राम" शब्द गांधी के होठों पर ाया और अहिंसा का वह दूत गिर पड़ा। ऐसा बताया जाता है कि गांधीजी ब नीचे गिरे तो उन्होंने कुछ ऐसा इशारा किया कि उनकी हत्या करनेवाले । क्षमा कर दिया जाय; उनकी नंगी छाती से खून बहने लगा। दुबले-पतले पू लड़खड़ाकर धरती पर गिरने लगे। बापू को उनके कमरे में ले जाया या। बापू मर चुके थे।

जवाहरलाल और पटेल उनके मृत शरीर के सामने झुके और रोये। इसी ार वहां अन्य लोग भी अपने को रोने से रोक न पाये। जब जवाहरलाल

अपने को संभाल सके, उन्होंने ऑल इंडिया रेडियो के द्वारा दुखी देश को यह सन्देश दिया : "दोस्तो और साथियो, हमारे जीवन में से प्रकाश चला गया है; हर जगह अन्धकार व्याप्त है; मुझे नहीं मालूम पड़ता कि मैं आपको क्या बताऊँ और क्या कहूँ ? हमारे प्यारे नेता बापू राष्ट्र-पिता अब नहीं रहे। शायद मेरा ऐसा कहना गलत ही है। खैर, कुछ भी हो हम उन्हें फिर उस रूप में तो देखेंगे नहीं जिसमें वर्षों से हम देखते चले आए थे···प्रकाश लुप्त हो गया है, ऐसा मैंने कहा यद्यपि ऐसा कहना है गलत; क्योंकि इस देश में ज्योति प्रकाशित हो रही थी वह कोई साधारण ज्योति न थी। वह ज्योति इस देश को इतने वर्षों तक प्रकाशित करती रही और वर्षों तक प्रकाशित करती रहेगी···क्योंकि वह ज्योति वर्तमान से भी अधिक का प्रतीक थी, वह जीवित शाश्वत सत्यों का प्रतीक थी···"

सारे देश में शोक छा गया था। यही नहीं सारे विश्व में गांधीजी की मृत्यु के कारण गहरा शोक था बड़े-बड़े ऊँचे और शक्तिशाली लोगों के साथ एकाकी और निर्धन लोगों की श्रद्धांजलियाँ भी दिल्ली पहुँचने लगीं। बीसवीं सदी के किसी अन्य व्यक्ति की तुलना में महात्माजी के बारे में अधिक बोला और लिखा गया है। महात्माजी के जीवन के अत्यन्त सुन्दर विश्लेषण अमरीकी मिशनरी डाक्टर स्टनले जॉन ने किया। डाक्टर जॉन ने भारत को अपना घर बना लिया था। उन्होंने अनेक बार धार्मिक विषयों पर महात्माजी से विचार-विमर्श भी किया। उन्होंने एक बार कहा था : "गांधी व भारत एक थे", उन्होंने लिखा था : "गांधीजी, देखने में बहुत सरल प्रतीत होते थे परन्तु वे थे बड़े जटिल। वे पूर्व और पश्चिम के मिलन विन्दु थे। वे पूर्व की आत्मा के प्रतिनिधि थे, वह ऐसे शहरी व्यक्ति थे जो साधारण किसान की आवाज़ बन चुके थे; वे [illegible] और शान्तिवादी थे और दोनों एक समय पर वह जनता से अलग थे [illegible] फिर भी जन-साधारण के थे। वह रहस्यवादी थे परन्तु फिर भी [illegible] हारिक। वह ऐसे व्यक्ति थे जो चर्खे और आर्थिक स्थिति को [illegible] कार्यक्रमों से सम्बन्धित थे; उनमें हिन्दुओं और ईसाइयों का [illegible] मूलतः हिन्दू थे परन्तु ईसाई धर्म से उन्हें गहरा प्रेम था; वह [illegible] सरल और चालाक थे, वह साफ़-सा [illegible]

बड़े विनम्र भी थे। वह एक ऐसे व्यक्ति थे जो साम्राज्यों को हिला देने की ताकत रखते थे। परन्तु साथ ही इतने विनम्र व सहज भी थे कि किसी बच्चे को ठोढ़ी पर उठाकर उसे हँसाकर अपना मित्र बना लेनेवाले थे; वह बड़े सौम्य थे। उनमें यह सामर्थ्य थी कि वह परिस्थितियों को बदल दें; उनमें विचित्र प्रकार की विनम्रता और विचित्र प्रकार का अहं था; सबसे बड़ी बात तो यह थी कि वह एक लक्ष्य अर्थात् स्वतन्त्रता के लक्ष्य के प्रतीक बन गये थे।

गांधी की मृत्यु से काफी समय तक नेहरू बड़े दुखी रहे। यह एक ऐसा आघात था जिसकी उन्हें कल्पना भी न थी; यह आघात बहुत गहरा था। उन्हें प्रतीत होता था कि यह कमी कभी पूरी न हो सकेगी। उन्होंने इस दुर्घटना की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली। संविधान सभा में भाषण करते हुए उन्होंने अपनी भावनाओं को इस प्रकार व्यक्त किया: "व्यक्ति के रूप में और भारत सरकार के प्रमुख के नाते मुझे इस बात पर गहरी लज्जा है कि हम अपने सबसे बड़े खजाने को बचा न सके।" उन्होंने यह भी कहा, "हमारे लिए इतना ही काफी नहीं कि हम उस महान् आत्मा की मृत्यु पर शोक मनाएँ। उनको श्रद्धांजलि देने का एकमात्र तरीका तो यही है कि हम इस बात का संकल्प करें कि दिवंगत नेता ने जो महान् कार्य अपने ऊपर लिया हुआ था और जिसे उन्होंने काफी हद तक पूरा कर लिया था उसके प्रति अपने जीवन को समर्पित करें।

गांधीजी की मृत्यु के बाद जवाहरलाल के जीवन में एक अजीब खालीपन-सा आ गया। उनके समान और कोई व्यक्ति न था जिसके पास जाकर वह कोई सहारा ले सकें। उनके पास तो असंगत संभव बन जाता। अदर्श वास्तविकता बन जाता था। इन दोनों नेताओं ने लगभग तीस वर्ष तक मिलकर एक साथ काम किया था। आरम्भ काल में तो उन दोनों में अनेक मतभेद आपस में रहे थे। जवाहरलाल पहले यह समझते थे कि गांधी उनकी मर्जी के मुताबिक क्रांतिकारी नहीं। और गांधीजी यह सोचते थे कि यह व्यक्ति तो ज्यादा तेज विचारों का है और अपने चारों ओर के वातावरण से कहीं आगे की बात सोचता है। परन्तु इतनी विनम्रता उसमें है कि वह चाल कभी तेज नहीं कर देता कि उसके साथ काम करना ही कठिन हो जाय। वह

मणिम क्रिस्टल की तरह विशुद्ध है और अत्यन्त सच्चा आदमी है; उसपर किसी तरह के संदेह की गुंजाइश नहीं। जनता जवाहरलाल को गांधी का उत्तराधिकारी मानती थी। गांधी उसे 'भारत का जवाहर' कहते थे। दोनों में मतभेद तो थे परन्तु तो भी दोनों में अत्यन्त गहरे सम्बन्ध थे। गांधी अपने शिष्य को पुत्र से भी अधिक प्रेम करते थे। इसी तरह युवक जवाहर भी गांधी को अपने पिता के समान ही मानते थे। नव-स्वतन्त्रता प्राप्त राष्ट्र के मामलों में यदि किसी प्रकार का अनिश्चय अथवा संभ्रम पैदा हो जाता तो नेहरू गांधी जी से ही सलाह लेते। हर महत्वपूर्ण कदम के बारे में उन्होंने बापू से राय ली थी। अब गांधी के बाद उनको अपने ऊपर और अपने पुराने साथियों सरदार पटेल, रफी अहमद किदवई, मौलाना आजाद और गोविंदवल्लभ पंत आदि पर ही निर्भर होना था। दस वर्ष की अवधि में मृत्यु ने इन सब लोगों को जवाहर लाल से छीन लिया। तब नेहरू सांत्वना के लिए और सहायता के लिए इंदिरा प्रियदर्शनी पर निर्भर हो गए।

भारत २६ जनवरी १९५० को गणतंत्र घोषित किया गया था। नवम्बर १९४९ में संविधान सभा ने नए संविधान को पारित कर दिया था। ब्रिटिश सत्ता के प्रतीकों का स्थान गणराज्य के नए प्रतीकों ने ले लिया।

भारत की राष्ट्रीय मुद्रा सारनाथ के अशोकस्तम्भ के सिंह से ली गयी। मूल प्रतिमा स्तम्भ में चार सिंह थे, वे एक चौकोर आधार पर थे। परन्तु भारत ने जो मुद्रा अपनायी उसमें केवल तीन सिंह ही दिखाई देते हैं। चौथा सामने से दिखाई नहीं देता। देवनागरी में "सत्यमेव जयते" भी इस मुद्रा के आधार पर अंकित है।

यूनियन जैक उतार दिया गया। भारतीय तिरंगा लहरा दिया गया। राष्ट्रीय गान के रूप में विश्वकवि रवीन्द्र का 'जन-मन गण अधिनायक' नामक गीत अपनाया गया।

इस गीत को सबसे पहले २७ दिसम्बर १९११ को कलकत्ता कांग्रेस के अधिवेशन में गाया गया था। भारतविधाता शीर्षक सबसे पहले तत्त्वबोधिनी पत्रिका में जनवरी १९१२ में प्रकाशित हुआ। इस पत्रिका के संपादक स्वयं टैगोर थे। 'मार्निंग सांग ऑफ इण्डिया' के शीर्षक से कवि [illegible]

इस गीत का अनुवाद किया था। इसके साथ बंकिम चटर्जी के वन्देमातरम् को भी राष्ट्रीय गान के समकक्ष दर्जा दिया गया। इस गीत ने भी स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में भारतवासियों को अनंत प्रेरणा दी थी। सबसे पहले १८९६ में इसे कांग्रेस अधिवेशन में गाया गया था।

प्रधानमंत्री के रूप में नेहरू को बहुत काम करना पड़ता था। उनको अनेक लोगों की मेजबानी भी करनी होती थी। उनके अतिथि होते थे मुख्य रूप से बड़े-बड़े विश्व राजनेता। नयी स्थिति की आवश्यकता को देखते हुए नेहरू ने तीन मूर्ति के विशाल बंगले को अपना निवास स्थान बनाया। पहले वहां पर किचेनर के कमांडर इन-चीफ रहा करते थे। गांधी के अनेक अनुयाइयों ने जो कि सरलता और सादगी के बड़े पक्षधर थे नेहरू के इस विशाल बंगले में रहने का कड़ा विरोध किया। इस भवन में लगभग सोलह कमरे थे और बड़ी-बड़ी दीवारों से घिरा हुआ एक विशाल मैदान था। ये लोग अपने मन को यह नहीं समझा सके कि गांधी का शिष्य जो कि निर्धन लोगों से एकाकार कर मिट्टी की झोंपड़ी में रह चुका था इतने बड़े विशाल शानदार बंगले में रहे। उनके लिए तो यह इस बात का सूचक था कि जवाहरलाल अब जनता से दूर हटना शुरू हो गए हैं और साथ ही कांग्रेस दल भी अब साधारण जनता से परे हटना शुरू हो गया है। इसमें संदेह नहीं महात्माजी ने यही कहा था कि भारत के नेताओं को चाहिए कि वे छोटी-छोटी कुटियों में रहकर जनता के सामने सादे जीवन का उदाहरण पेश करें। हो सकता है कि बाहर के देशों से आनेवाले लोगों को यह कुछ विचित्र दिखाई दे परन्तु वैसे तो अहिंसक ढंग से की जा रही स्वतंत्रता की लड़ाई भी उनको विचित्र ही प्रतीत होती थी। परन्तु फिर भी भारत ने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली थी। कुछ लोगों ने यह भी सुझाव दिया कि प्रधानमन्त्री के लिए एक नया निवास स्थान बनाया जाना चाहिए। परन्तु यह विचार इसलिए त्याग दिया गया कि पहले बने हुए घर में रहना कम खर्चीला होगा; बजाय इसके कि अन्य कोई मकान बनवाया जाय। खैर कुछ भी हो प्रधानमंत्री के साथियों ने उनको तैयार कर लिया कि वह उस कमांडर इन-चीफ के विशाल बंगले को कार्य कुशलता, सुरक्षा और सुविधा की दृष्टि से इस्तेमाल करें।

नेहरू एकाकी थे और उनपर भार भी बड़ा था। उन्होंने इन्दिरा और

विशेषकर 'राजनैतिक शिष्टाचार' का मामला बड़ा जटिल था। इस बारे में इन्दिरा की टिप्पणी थी, महिलाओं को राजनय शिष्टाचार बनाये रखने में विशेष रूप से कठिनाई होती है। पहले तो उन्हें इस शिष्टाचार का विशेष ध्यान रखनेवाले अतिथि की भावना का विचार रखना होता था। पर उन्हें सारे वातावरण को इतना घुटन-भरा भी नहीं बना देना था कि सारी रंगीनी समारोह की समाप्त हो जाय। हर रोज भिन्न रुचियों के लोगों के लिए तरह-तरह का भोजन बनाना बड़ा कठिन काम था। राजकीय अतिथिशाला को सजाना भी सरल न था पर इन्दिरा बहुत कुशलता और गौरवशाली ढंग से अपना कर्तव्य निभातीं। वहाँ ठहरनेवाले अतिथियों और पत्रकारों ने उनकी बहुत सराहना की। लार्ड पैथिक लारेंस ने कहा था : "इंदिरा तो अत्यन्त आकर्षक मेजबान है। अपने काम को बड़ी सेवा-भावना से करती है।" अपने पति, उपराष्ट्रपति जानसन के साथ भारत की पूरी यात्रा इंदिरा के साथ करने के बाद श्रीमती जानसन ने कहा था : "भारत को देखने के लिए आपको गांवों को देखना होगा। भारत को समझने के लिए आपको टैगोर पढ़ना होगा। परन्तु भारत जानने के लिए आपको इन्दिरा गांधी जैसे एक शिक्षक की जरूरत होगी। मैं सौभाग्यशाली रही क्योंकि ये तीनों ही सुविधाएँ मुझे मिलीं।"

नौवां अध्याय

पिता की साथी

एक बार इंदिरा से सवाल पूछा गया था कि यदि जवाहरलाल की पुत्री होकर के वे पुत्र होतीं तो क्या परिणाम होते। इंदिरा ने गजब की अंतर्दृष्टि का परिचय देते हुए उत्तर दिया था, "शायद पुत्र को अधिक कठिनाइयों का सामना करना होता, पहली बात तो यह कि पुत्र को पिता के साथ रहने का अवसर न मिलता।"

यह पूछे जाने पर कि यदि आपको पूरी आजादी होती तो आप क्या बनना पसंद करतीं? इंदिरा का जवाब था: "मैं शायद लेखक बनना पसंद करती," और तब इसके साथ ही उसने जोड़ दिया, "शायद मैं इतिहास अथवा मानव नृवंश विज्ञान में अनुसंधान करना पसंद करती। नृवंश विज्ञान में मुझे इतिहास से अधिक रुचि है।" इस विषय में रुचि के कारण ही इंदिरा ने अपने पिता को यह सुझाव दिया कि वह गणतंत्र दिवस पर लोक नर्तकों के नृत्यों का आयोजन की व्यवस्था करें। कबीलों के लोग अपने रंगीन वेश पहने हुए गणतंत्र दिवस के जलूस में शामिल होकर उसकी रंगीनी बढ़ाएं यह सुझाव भी इंदिरा का था। इंदिरा को घर सजाने का भी शौक है और उसने तीन मूर्ति भवन को बड़े सुरुचिपूर्ण ढंग से सजाया हुआ था।

दिल्ली में आ बसने के बाद इंदिरा और फिरोज पहले यार्क रोड के एक बंगले में रहने लगे, बाद में वे नेहरू के विशाल बंगले तीन मूर्ति भवन में आ गये। नेहरू को सांत्वना देने और उनकी सुविधाओं की व्यवस्था करने में इंदिरा बहुत सहायक सिद्ध हुईं। यद्यपि कोई साफ बात हुई नहीं थी परंतु ऐसा मान लिया गया था कि यह व्यवस्था कुछ समय के लिए ही रहेगी।

नेहरू पर अनेक तरह की

प्रायः अठारह-अठारह घंटे काम करना होता था। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक था कि कोई उनको खाने पीने की ओर ध्यान दिलवाए और विश्राम करने को कहे। यह काम कोई ऐसा व्यक्ति ही कर सकता था जो उन्हें प्यार करता हो और उनको अच्छी तरह से समझता हो। साथ ही उनके प्रेम का भाजन हो और उसके लिए उनके दिल में सम्मान हो। ऐसा व्यक्ति एक ही थी और वह थी उनकी पुत्री इंदिरा।

आमतौर पर जवाहरलाल नाश्ता परिवार के सदस्यों के साथ ही करते। पुत्री इन्दिरा दामाद फिरोज और साथ में उनके दो नाती भी होते। भोजन के बाद ये बच्चे तो स्कूल चले जाते और सायंकाल अथवा अगले दिन प्रातः काल तक अपने नाना को न मिल पाते। उस थोड़े से समय में जब यह परिवार के साथ होते निरंतर अनेक सचिव उनके पास आते और दस्तावेजों को पढ़कर सुनाते और हस्ताक्षर करवाते रहते।

इन्दिरा को यह कार्य भी करना होता कि जवाहरलाल को व्यर्थ में परेशान करनेवालों से उनको बचाए। वर्षों तक सामाजिक व राजनैतिक कार्य के दौरान भारत के इस महान् नेता ने हजारों अनुयायी और साथी बना लिए थे। निरंतर ही कोई न कोई उनसे मिलने आया ही रहता था। नेहरू को एकांत पाना बड़ा कठिन हो जाता। नेहरू इन लोगों को सहन कर लेते; यहाँ तक की कई पिछलग्गू तो स्नानागार तक भी उनके पीछे पहुँच जाते। अनेक लोग साथ उनके दर्शनों के लिए ही आए रहते। नेहरू न केवल देखने में ही सुन्दर थे वरन् हजारों लोगों के लिए प्रेरणा स्रोत भी थे। इंदिरा को आमतौर पर ऐसे लोगों को हटाने के लिए हस्तक्षेप करना होता था। परंतु यह सावधानी उसे बरतनी होती थी कि इन लोगों को रुष्ट न कर देवें। उसे अच्छी तरह से पता था कि राजनीति में जनता को व्यर्थ में ही नाराज नहीं किया जाना चाहिए और जहाँ तक हो सके उनकी भावनाओं का ध्यान रखते हुए उनसे व्यवहार करना चाहिए।

के निवास स्थान में संबंधित अनेकों अधिकारी थे। इंदिरा कामों में तालमेल बिठाना होता था ताकि घर के सब काम हो सकें। उनके पिता अपने आमतौर के दौरों में आवश्यक

फाइलों को देखते थे। पिता के पास आवश्यक फाइलें पहुँचती रहें, यह देखना भी इन्दिरा का काम था। एक बार ऐसी ही यात्रा के लिए तैयार हो रहे थे कि उन्होंने एक विशेष फाइल माँगी। सचिवों ने उस फाइल को खोजना शुरू किया परंतु कोई उसे ढूँढ नहीं सका। नेहरू का स्वभाव बड़ा गुस्सैल था वह अत्यंत क्रुद्ध और उत्तेजित हो उठे। तब इंदिरा ने स्थिति संभाल ली। उसने पिता से कहा कि वे अपने स्थान से उठें, उनके उठते ही नीचे से दबी वह फाइल निकली।

इन्दिरा की धारणा थी कि उसके जीवन के मिशन का यह एक महत्त्वपूर्ण भाग है कि वह प्रधानमंत्री के रूप में काम करते पिता की सहायता करें। वह अनुभव करती थीं कि उसके विधुर पिता बहुत ही एकाकी हैं और उसकी सहायता की उन्हें बहुत जरूरत है। पिता जो कार्य कर रहे थे इंदिरा उनको बहुत ठीक समझती थी। जिनको वह गलत समझती थी उनकी वह कठोर आलोचना भी कर देती थी। इन्दिरा की लोक-कल्याण की भावना को समझते हुए और विभिन्न मामलों को समझने की उसकी गहरी क्षमता को देखते हुए और यह जानते हुए कि उसका इन सब बातों में कोई स्वार्थ नहीं, नेहरू इन्दिरा के विचारों की कदर किया करते थे। अनेकों भारतीय नेता नेहरू के सामने आलोचना करने में झिझकते थे परंतु इन्दिरा को कोई ऐसी झिझक न थी।

सन् १९४८ में इन्दिरा पिता के साथ राष्ट्रमंडलीय देशों के प्रधानमंत्रियों के सम्मेलन में भाग लेने गयी। यह सम्मेलन लंदन में हुआ था। इन्दिरा को अनोखा अवसर मिला था कि वह विभिन्न राष्ट्रों के नेताओं के संपर्क में आए और सारे संसार की समस्याओं के संदर्भ में भारत की समस्याएँ देखे। भारत में अनेक लोग इस बात के विरुद्ध थे कि उनका देश ब्रिटिश राष्ट्रमंडल का सदस्य बना रहे। इन्दिरा पिता के समान यह मानती थी कि भारत के लिए राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से लाभदायक यही है कि वह राष्ट्रमंडल का सदस्य बना रहे।

राष्ट्रमंडल प्रधानमंत्री सम्मेलन के बाद नेहरू ने तीन नवंबर १९४८ को संयुक्तराष्ट्र संघ की वृहत्सभा के पेरिस अधिवेशन में भाषण किया। एशियाई

नेता जवाहरलाल विश्व के राजनैतिक मंच पर प्रमुख व्यक्ति थे। इन्दिरा को याद है कि किस प्रकार जवाहरलाल ने तब वहाँ पर प्रभावशाली भाषण किया था और एशिया की शक्तिशाली आवाज विश्व मामलों में सुनी जाने लगी थी।

जवाहरलाल के राजनैतिक जीवन का एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु था एशियाई राष्ट्रों सम्मेलन का आयोजन। इसमें एशिया के लोगों को स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए एक मंच पर एकत्र करने का प्रयास किया गया था। इस सम्मेलन में धीरे-धीरे अफ्रीकी राष्ट्र भी सम्मिलित किए जाने लगे। जनवरी १९४६ में होलैंड की पुलिस कार्रवाई के विरोध में एक सम्मेलन नयी दिल्ली में आयोजित किया गया। नेहरू इसके मुख्य नेता थे। इन्दिरा को एशियाई नेताओं से मुलाकात करने और उनकी राष्ट्रीय समस्याओं को निकट से जानने का अवसर मिला।

नेहरू ने १९४९ में अमेरिका का अभिभूत दौरा किया। उन्होंने इस यात्रा में इन्दिरा को भी अपने साथ मजबूत और साथी के रूप में लिया। अमेरिका में सर्वत्र नेहरू का सरकार और जनता दोनों ने ही भव्य स्वागत किया। समाचार-पत्रों में उनके दौरे की विशेष चर्चा रही। नेहरू का हीरो की तरह स्वागत किया गया। अमेरिका की जनता के मैत्रीभाव और भाव-भरे स्वागत में इन्दिरा भी अभिभूत हो उठी थी। अमेरिका की जनता का जीवन स्तर देखकर इन्दिरा बड़ी प्रभावित हुई।

अमेरिका में जो उसने देखा उसपर इन्दिरा की टिप्पणी थी: "ऐसे बिना यह विश्वास नहीं हो सकता कि अमेरिका कितना समृद्ध है।"

जवाहरलाल १९५५ में अपने साथ पोलैंड और यूगोस्लाविया के दौरे पर इन्दिरा को भी अपने साथ ले गए। उन लोगों का हर स्थान पर बड़ा भव्य स्वागत हुआ। वह भी बड़े उत्साह से लोगों से मिलती और विशेष देखने योग्य दर्शनीय स्थलों को देखती। अनेक नवजात रूसी बच्चों के नाम उसके नाम का अनुकरण करते हुए इन्दिरा रख गये।

देखने में दुबली-पतली इन्दिरा अपने पिता के साथ इन यात्राओं की थकान और परेशानी को बड़ी हिम्मत से सहन करती थी। भारत में १९५२ में

आम चुनाव हुए। इनमें जवाहरलाल को भारी काम करना पड़ा। इन्दिरा भी दौरे में अपने पिता के साथ ही रहती। उन्होंने सभी वाहनों से हवाई-जहाज से लेकर बैलगाड़ी और पैदल दौरा तक किया। सख्त गरमी में उन लोगों को दौरा करना होता। दर्शन पाने को बेचैन भीड़ में से अधिकांश समय उनको गुजरना होता था। जवाहरलाल ने अकेले इस चुनाव में जो काम किया उसका वर्णन उनकी जीवनी लेखक माइकल ब्रेचर ने इस प्रकार किया है: "कांग्रेस का चुनाव एक आदमी की ही जिम्मेदारी थी। इसका सारा भार असल में एक ही आदमी ने वहन किया। वह व्यक्ति थे नेहरू। नेहरू के इस संघर्ष में इंदिरा निरन्तर उनके साथ थी। वह उनकी सहायता करती और उनकी सुविधा की देखभाल करती। समय-समय पर थके प्रधानमन्त्री को सलाह भी देती। कुछ सीमा तक तो उमर में बढ़ते और विचारों में खोकर बातें भूल जानेवाले पिता के लिए इन्दिरा अनिवार्य थी।"

इन्दिरा पर दबाव पड़ता रहता था कि वह राजनीति में सक्रिय भाग ले और संसद के लिए चुनाव लड़े परन्तु उसने निरन्तर इससे इकार किया क्योंकि अपने प्रधानमन्त्री पिता की देखभाल करना ही वह राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा समझती थी। इन्दिरा २१ सदस्य कांग्रेस कार्यकारिणी की सदस्या चुनी गयी। उनको अधिकतम मत मिले। इस समिति में चुनावों के लिए दल के प्रत्याशी को खड़ा करना होता है। सदैव की तरह इन्दिरा ने अपना काम पूरी मेहनत से किया। उन्होंने विभिन्न वर्गों के लोगों से मुलाकात की और अनेकों सभाओं में भाषण दिया। हर जगह वे आकर्षण का केन्द्र बनीं। कांग्रेस चुनाव समिति और कांग्रेस अनुशासन समिति के अपने काम के साथ उन्होंने देहात संपर्क आंदोलन में भी काफी प्रमुख भाग लिया। कांग्रेस को देहातों में रहनेवाले लोगों की समस्याओं के प्रति सजग करने के सिलसिले में यह महत्त्वपूर्ण कार्य था। कांग्रेस दल के कार्य के अलावा वे निरंतर सरकारी अधिकारियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करती रहती कि वे लोग सार्वजनिक हित की दृष्टि से ही कार्य करें। अनेक समाज कल्याण के कार्यों में इन्दिरा जी स्वयं भाग लेतीं।

सन् १९५५ में अप्रैल १८ से २३ अप्रैल तक बांडुंग में २९ अफ्रेशियाई

देशों का सम्मेलन हुआ। यह नगर इंडोनेशिया में है। इस सम्मेलन के आयोजकों में जवाहरलाल नेहरू प्रमुख थे। बर्मा के ऊ नू और अफ्रीकियाई नेताओं ने भी इसमें भाग लिया। इस सम्मेलन में सब प्रकार के उपनिवेशवाद के प्रति विरोध प्रकट किया गया। यह सम्मेलन किसीके विरोध में नहीं था वरन् शान्ति और स्वतंत्रता के लिए किया जा रहा संघर्ष था उपनिवेश रहकर इतनी देर तक इतनी कठिनाइयाँ सहने और शोषण का शिकार होने के बाद नहरू तथा अन्य नेता इस बात के लिए कटिबद्ध थे कि हर रूप में उपनिवेशवाद समाप्त हो जाय।

इंदिरा को अवसर मिला कि वह अपने पिता के साथ इस सम्मेलन में भाग ले। बताया जाता है कि उन्होंने अपने से इस सम्मेलन के विचार-विमर्श में भाग लिया। उन्होंने अनेकों प्रतिनिधिमंडलों के सदस्यों से मुलाकात की। इंदिरा की अंतरराष्ट्रीय मामलों में पैनी दृष्टि तथा अनेक जटिल अंतरराष्ट्रीय समस्याओं के प्रति उसके द्वारा सुझाए हल को देखकर वे अत्यंत प्रभावित हुए।

इंदिरा २१ जून को अपने पिता के साथ राष्ट्रसंघ की सम्मेलन में सदन गयी। उसने आयरलैंड, पश्चिम जर्मनी, यूगोस्लाविया, फ्रांस और कुवैत का दौरा किया। बाद में इंदिरा पिता के साथ अनेक अंतरराष्ट्रीय दौरों पर गयी। इसमें मिस्र, फ्रांस, चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड और आस्ट्रिया भी सम्मिलित थे। यह ध्यान देने की बात है कि इन अवसरों में दर्शनीय स्थलों की सैर पर उनका ध्यान उद्योग की बजाय इंदिरा ने सोवियत समाज करने के उद्योग धंधों की दिशा में पिता के काम में सहायता दी। इस प्रकार अंतरराष्ट्रीय शान्ति और सुरक्षा का स्थायी आधार बनाने में उन्होंने योग दिया। पिता के साथ आमतौर पर इंदिरा को विदेशों की यात्रा पर जाना होता था और अन्य सार्वजनिक कार्यों में भी समय देना होता था। इस कारण काफी समय उन्हें अपने पति से अलग रहना होता। इससे उन दोनों के संबंधों में काफी तनाव भी पैदा हो जाता। इसमें संदेह नहीं कि शुरू में इंदिरा और फिरोज की एक-दूसरे से तालमेल बिठाने में कठिनाई पैदा हुई। इसके अतिरिक्त कोई भी व्यक्ति जोकि ऐसी महिला से विवाह करता है, जिसका कि

विशेष स्थान राजनैतिक और सामाजिक जगत में हो उसे काफी तनावों में से गुज़रना होता है। यदि वह महिला प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की पुत्री हो तो पुरुष से हीनता का आभास होने लगे तो इसमें आश्चर्य की बात नहीं। फिरोज अत्यंत संवेदनशील व्यक्ति थे। उनको कई बार अनेक मानसिक कष्टों में से गुज़रना पड़ा था।

उन दिनों में रोमांस बड़े स्वाभाविक ढंग से आरम्भ हुआ था। इससे प्रेम और प्रेम अंत में विवाह में परिणित हुआ। उन दोनों ने सुखी पारिवारिक जीवन भी व्यतीत किया। एकसाथ मिलकर देश में स्वतन्त्रता संग्राम में संघर्ष भी किया। परन्तु तब दो ऐसी घटनाएं हुईं जिनसे उनके संबंधों में खिचाव पैदा हुआ। पहले तो जवाहरलाल १९४७ में भारत के प्रधानमंत्री बने; दूसरे उन्होंने इन्दिरा और फिरोज को अपने साथ रहने को आमंत्रित किया। स्वतंत्रता संग्राम का सेनानी अब प्रधानमंत्री का जामाता था। प्रधानमंत्री के निवास स्थान पर अनेक प्रकार की औपचारिकताएं आवश्यक थीं। कुछ सरकारीपन भी वहाँ था परन्तु फिरोज के स्वभाव के यह सब कुछ विरुद्ध था।

इन्दिरा और फिरोज में एक-दूसरे के प्रति गहरा प्रेम था। परन्तु वे दोनों ही युवा थे न ही जीवन का अनुभव उन्हें अधिक था। इसके अतिरिक्त वे दोनों बड़े आत्माभिमानी थे। दोनों के अपने अलग तरीके थे, परन्तु क्योंकि दोनों का जवाहरलाल से प्रेम था इसलिए यह संभव था कि यदि उन्हें उचित सलाह दी जाती तो उनके आपसी संबंधों में जो तनाव पैदा हुआ और जिन मानसिक कष्टों में से उनको गुज़रना पड़ा उनसे वे बच जाते। परन्तु इतना उनका सौभाग्य न था कि उनको ठीक परामर्श देने वाला कोई होता।

कई लोग इस बात पर हैरान होते हैं कि श्रीमती गांधी ने पत्नी के रूप में कर्त्तव्यों का पिता की देखभाल के साथ कैसे मेल बिठाया होगा? क्या उसके पति उपेक्षित महसूस नहीं करते होंगे? क्या फिरोज इस बात से सहमत थे कि इंदिरा का मुख्य कार्य यही है कि वह अपने पिता की देखभाल करे

फिरोज ऐसे युवक थे जिन्होंने राजनैतिक जीवन में प्रवेश किया हुआ था। कुछ समय बाद संसद के चुनावों में निर्वाचित अपने अधिकृत बंगले में चले गए। इस प्रकार

की पुत्री की देखभाल की आवश्यकता के कारण यह संभव न रहा कि वे दोनों एक साथ रह सकें। फिरोज रायबरेली से संसद के लिए निर्वाचित हुए थे। संसद सदस्य के रूप में अपने कर्तव्यों में वह व्यस्त थे। इन्दिरा अपने पिता की मेजबान के रूप में काफी व्यस्त रहती थीं। परन्तु जब संभव होता वे एक दूसरे से मिलते। उनके दोनों पुत्र बोर्डिंग हाउस में थे। छुट्टियों के दिनों में वे दिल्ली आते। होता यह था कि फिरोज और इन्दिरा बच्चों का स्वागत करने के लिए इकट्ठे हो जाते थे। परन्तु यह कोई पारिवारिक व्यवस्था न थी सामान्य रूप से विदेशी लोगों को यह विचित्र ही लगेगा परन्तु वे दोनों एक दूसरे के साथ इसलिए रह सके क्योंकि भारत में और विशेष रूप से स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में उन्होंने आत्म बलिदान के आदर्श के अनुरूप अपने मनों को ढाला हुआ था। बचपन से ही इन्दिरा ने यह सीखा था कि राष्ट्र के लिए व्यक्तिगत खुशियाँ, सुविधाएँ आराम छोड़ दिए जाएँ। उनकी अब यह स्पष्ट धारणा थी कि राष्ट्र की अधिकतम सेवा वे इस प्रकार ही कर सकती हैं यदि पिता की देखभाल करती रहें। फिरोज ने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया था, उन दिनों के अनुभव के आधार पर वह समझ सकते थे कि वास्तविकता क्या है। वह स्वयं भी जनता की सेवा के लिए समर्पित थे। नेहरू परिवार के लिए स्वतन्त्रता और देश हित व्यक्तिगत अथवा पारिवारिक हित से ऊपर की बात थी। फिरोज स्वयं आदर्शवादी थे। उन्होंने भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में सक्रिय भाग लिया था। इसलिए उन्होंने चाहे कितनी भी कठिनाई से ही क्यों न हो परिस्थितियों के मुताबिक अपने को ढाल लिया। वृद्ध होते भारत के नेता जवाहर की सुविधा और आराम के लिए अपने जीवन-साथी के उनके साथ रहने में किसी प्रकार की बाधा उन्होंने नहीं डाली।

इन्दिरा राजनैतिक कार्यों से अधिक समय सामाजिक कार्यों में खपाती थी। सामाजिक कल्याण के काम करने वाली संस्थाओं से उनका संबंध था। इन संस्थाओं में काम करते हुए उन्होंने विकलांगों और असहायों की भलाई का काम करने वाली संस्थाओं में भी व्यक्तिगत रुचि ली।

इंदिरा की करुण-भावना की परिचायक एक घटना निम्नलिखित है: सत्या एक रेलवे कर्मचारी की पत्नी थी। इस कर्मचारी की हत्या दिल्ली में हुए

सांप्रदायिक दंगों के दौरान कर दी गयी थी। सत्या की आयु बीस वर्ष की थी परन्तु वह किसी प्रकार का कार्य करने में असमर्थ थी; क्योंकि बचपन में किसी दुर्घटना में उसकी दोनों टाँगें कट गयी थी। इसलिए उसे रेंग-रेंग कर ही चलना होता था। इन्दिरा ने काफी प्रयास किया कि उसकी कृत्रिम टाँगें लग जायें। उनको पता चला कि भारत में केवल एक ही संस्थान था जो कृत्रिम टाँगों को बनाने का कार्य करता था। और यह केन्द्र था पूना में केवल सेना के लोगों के लिए यहां पर कृत्रिम अवयव बनते थे। इसलिए मामले में कुछ और कर सकना इंदिरा के लिए बड़ा कठिन हो गया। परन्तु अन्त में उन्होंने रक्षा मन्त्री सरदार बलदेवसिंह को इस बात के लिए तैयार कर लिया कि वे अपवाद स्वरूप सत्या के लिए कृत्रिम टाँगों को वहाँ पर तैयार करवाने की अनुमति दे देवें। ऐसा किया गया और परिणाम यह हुआ कि वह केन्द्र असैनिक लोगों के लिए भी कृत्रिम अवयव तैयार करने लगा।

सत्या का इलाज होने और कृत्रिम टाँगें लगवाने में कई महीने का समय लगा। इतनी लम्बी प्रतीक्षा की अवधि में कई बार सत्या बहुत निराश हो जाया करती थी। कई बार ऐसा प्रतीत होता मानो अब वह हौसला छोड़ देगी तब धैर्य प्राप्त करने के लिए वह इंदिरा के पास जाती। अन्त में उसकी टाँगें लग गयीं और वह उनका इस प्रकार इस्तेमाल करने लगी मानो प्राकृतिक टाँगें हों। सत्या शारीरिक दृष्टि से ही नहीं वरन् मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी सबल बन गयी। अत्यन्त प्रसन्न मन से वह इन्दिरा के पास आकर अपनी नयी टाँगें दिखाने लगी। और उसने बताया कि उसका विवाह होने वाला है। कहना अनावश्यक है कि इन्दिरा को इस सारी बातों से गहरा संतोष हुआ। उसने काफी कार्य इस क्षण के लिए किया था। इस घटना के बारे में इंदिरा ने लिखा है जब कभी मैं चक्करों में पड़ जाती हूँ और मुझे ऐसा प्रतीत होने लगता है कि काम बड़ा भारी है और मेरे प्रयास उसके सामने बहुत नगण्य हैं तो मुझे सत्या की घटना याद हो आती है। मैं मुस्कराए बिना नहीं रह पाती।

दस वर्ष की आयु से ही इन्दिरा ने सेवा कार्यों में भाग लेना शुरू कर दिया था। इलाहाबाद से लगभग छह मील दूर नैनी तक वह हर रविवार को साइकिल पर जाया करती और वहाँ पर कोढ़ियों के लिए खोले सेवा गृह में काम किया करती थी। बारह वर्ष की आयु में इन्दिरा ने

संघ का बच्चों के विभाग का गठन किया। इसमें कताई का काम किया जाता था। इलाहाबाद में बच्चों के संगठन —वानर सेना— को गठित करने में भी इन्दिरा ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। दिल्ली में इन्दिरा ने बालकों के लिए एक सहकारी संस्था स्थापित की थी। इसका नाम था 'बाल सहयोग' एक दिन वह दिल्ली में कनॉट प्लेस में किसी दुकान से सामान खरीद रही थी कि चिथड़ों में लिपटे एक बच्चे ने आकर उसे कंघे बेचने का प्रयास किया। इन्दिरा ने उस समय तो कोई कंघा नहीं खरीदा परन्तु बच्चा लगातार उसके पीछे लगा रहा और ज़ोर देता रहा कि वह कंघा खरीदे। इन्दिरा ने इस घटना के में कहा है : "वह बच्चा अत्यंत सुंदर था। हम दोनों में बातचीत हुई और उससे यह पूछा कि वह स्कूल कब जाता है ? वह सारा दिन काम करता ौर दिन में लगभग दो रुपये कमाता था। वह स्कूल नहीं जाता था।"

इस घटना के बाद श्रीमती गांधी ने बाल सहयोग स्थापित करने का काम । एक मंज़िल भवन में बच्चे बढ़ईगिरी, लकड़ी का काम, दर्जीगिरी और का काम करते थे। कुछ बागों में काम करते और कुछ सब्ज़ियाँ पैदा करते। इन्दिरा ने भारतीय बाल कल्याण परिषद के अध्यक्ष के रूप में भी काम ा। वे अंतर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ की उपाध्यक्ष भी रहीं। इस संघ का ालय जेनेवा में है। वे इलाहाबाद के कमला नेहरू अस्पताल के ट्रस्टी मंडल ी सदस्य हैं। इलाहाबाद के ग्राम भारती नामक देहाती संस्थान की भी अध्यक्ष रही हैं। इन्दिरा ने समाज कल्याण की सरकारी समितियों और जनिक संगठनों में तालमेल बिठाने का महत्वपूर्ण कार्य किया। इन सेवाओं ारण उनको कई तरह सम्मानित भी किया गया। अमेरिका का मदर ई (१९५३) में युन विश्वविद्यालय का होलैंड मैमोरियल पुरस्कार और ी के इज़ाबेला पुरस्कार उनको इन सेवाओं के कारण दिए गए।

अपने विख्यात पिता और पितामह के समान इन्दिरा को भी अनेक बातों चि है। पशुओं और पक्षियों तक के लिए उनके मन में करुणा है। अपने ास स्थान पर उसने अनेक प्रकार के पालतू पशु और पक्षी रखे हुए थे। , कबूतर और गिलहरियाँ, कुत्ते आदि अनेक पालतु पशु पक्षी वहाँ थे। यों को उड़ते देखने का विशेष आनन्द उन्हें आता था। ये सब रुचियाँ नमंत्री या मेज़बान रहते और अन्य कार्यों में व्यस्त होने के बावजूद ारा ने विकसित की थीं।

दसवाँ अध्याय

कांग्रेस की अध्यक्ष

भारत के प्रमुख राजनैतिक संस्थान राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष पद से १९५९ में यू० एन० ढेवर ने त्यागपत्र दिया। उन्होंने अभी अपना कार्यकाल पूरा नहीं किया था। दल के नेताओं ने तब इन्दिरा को कहा कि वह इस पद का उम्मीदवार बने। इन्दिरा ने इसके लिए अनिच्छा जाहिर की परन्तु ढेवर सहित अन्य लोगों ने उनपर बहुत दबाव डाला। जब वह अपने पिता के साथ इलाहाबाद के दौरे पर थीं उन्हें यह समाचार मिला कि सर्वसम्मत्ति से उनको कांग्रेस का अध्यक्ष चुन लिया गया है। उन्होंने तब इस पद को स्वीकार कर लिया। परन्तु ढाई वर्ष का कार्यकाल पूरा करने के बाद इन्दिरा ने इस पद से त्यागपत्र दे दिया। इसका कारण यह था कि वह अपना पहला कर्तव्य समझती थी कि पिता की सेवा की जाय। नेहरू तब सत्तर की आयु को पार कर चुके थे। बढ़ती आयु का असर उन पर नज़र आने लगा था। वह काफी थके-थके रहते थे।

उल्लेखनीय है कि इन्दिरा नेहरू परिवार की तीसरी सदस्य थीं जिन्हें कांग्रेस अध्यक्ष बनने का गौरव मिला था। पहले १९१९ और १९२८ में मोती लाल तब बाद में जवाहरलाल अनेक बार और अब इन्दिरा अध्यक्ष चुनी गयीं।

इन्दिरा का चुनाव उनको अपने राजनैतिक व्यक्तित्व का सूचक था। नेहरू इस बात का विशेष ध्यान रखते थे कि अपनी पुत्री को वे अपने प्रभाव से किसी ऊँचे स्थान पर न पहुँचाएँ। साथ ही वह ऐसे पिता थे जिनको इंदिरा की क्षमता पर गर्व था। वे मानते थे कि वह किसी भी कार्य को भली प्रकार कर सकती है : "मैं बिल्कुल ही तटस्थ हूँ और जो लोग मुझे पसन्द नहीं करते उन्होंने भी मुझे बताया कि इन्दिरा ने अध्यक्ष पद के रूप में बहुत अच्छा कार्य

किया। कई बार वह अपनी समझ के अनुसार ही रास्ता चुनती, यद्यपि मैं उसके विरुद्ध होता। और इन्दिरा थी भी ठीक·····इन्दिरा के अपने स्वतन्त्र विचार हैं और ऐसे होने भी चाहिए। बस इतनी ही बात है। मैं न तो किसी भी चीज के लिए उसे तैयार कर रहा हूँ और न ही मैं उसे रोक रहा हूँ। वह देश अथवा लोगों की इच्छा के मुताबिक किसी प्रकार का उत्तरदायित्व संभाल सकती है।" मृत्यु से कुछ समय पहले नेहरू ने सामूहिक नेतृत्व (कामराज, लालबहादुर और नन्दा) का जिकर किया। उन्होंने इस बात का खंडन किया कि वे अपनी किसी उत्तराधिकारी को तैयार कर रहे हैं। उन्होंने यह भी कहा : "इसका अर्थ यह नहीं कि मेरे बाद किसी प्रकार उत्तरदायित्व लेने के लिए उसे कहा ही न जाय। दूरदर्शी पिता को यह आभास हो गया कि उसकी पुत्री में सेवा करने की क्षमता होगी।

इन्दिरा ने जब पद सम्भाला तो उसकी आयु केवल ४२ वर्ष की थी। कांग्रेस की लोकप्रियता बहुत घट चुकी थी। कांग्रेस अध्यक्ष के पद का महत्व भी पिछले वर्षों से निरन्तर घट रहा था। कांग्रेस जब स्वतन्त्रता संग्राम में व्यस्त थी तो सब लोग एक होकर उसके पीछे थे। वे शत्रु ब्रिटिश साम्राज्य-वाद से लड़ रहे थे। स्वतन्त्रता का लक्ष्य उनको प्रेरणा दे रहा था। महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू, वल्लभभाई पटेल, राजेन्द्रप्रसाद और अन्य लोगों से वे प्रेरणा प्राप्त करते थे। स्वतन्त्रता के नेताओं ने जो बलिदान किए थे उससे जनता में भी बलिदान की भावना पैदा हो गयी थी। लोग हजारों कष्टों को हँसी-हँसी सहन करते थे।

इन नेताओं ने यह भी आश्वासन दिया कि भारत स्वतन्त्र होने पर लोगों का भविष्य सुधरेगा। लोगों को उनकी बातों में विश्वास था परन्तु सत्ता प्राप्त करने के बाद अनेक वर्ष तक प्रतीक्षा के बाद लोगों को यह अनुभव होने लगा था कि ये लोग अपने स्वार्थों को पूरा करने में ही लगे हैं और साधारण जनता का ध्यान उनको नहीं रहा। वह पहले से भी अधिक कष्ट के दिन बिता रही है। उन्होंने देखा कि कई वर्ष निरन्तर सत्ता में रहने पर भी कांग्रेस भारत की गरीबी की अनेक समस्याओं को हल करने में सफल नहीं हुई। न ही वह खाद्यान्न की कमी और न ही बेकारी को वह दूर कर सकी है। लोगों के

आवास की उचित व्यवस्था भी वह नहीं कर सकी और न ही बढ़ती कीमतों को वह रोक सकी है। काला बाजार भी वह खत्म नहीं कर सकी है। विरोधी दलों ने कांग्रेस के भाई-भतीजा, और उसके शासन की नौकरशाही की कड़ी आलोचना करनी शुरू कर दी थी। कांग्रेसी नेताओं में भी भ्रष्टाचार का बोलबाला हो गया था। वे लोग सत्ता के मद में आ गए थे और ऐश्वर्य का जीवन व्यतीत करने लगे थे।

भारत में संसदीय शासन प्रणाली है। इसलिए सत्ता का केन्द्र कांग्रेस की बजाय संसद का हो जाना स्वाभाविक ही था। कुछ समय तक प्रधानमंत्री नेहरू कांग्रेस के अध्यक्ष रहे। इससे कांग्रेस अध्यक्ष की स्थिति और भी अस्पष्ट हो गयी। इस व्यवस्था का एक प्रभाव हुआ कि प्रशासन में जो खराबियाँ थीं उनका दोष भी कांग्रेस पर ही आ पड़ा। इसके बाद कांग्रेस के अध्यक्ष पद पर अनेक नेता आए परन्तु वे लोग विरासत में मिली समस्याओं को सुलझाने में असमर्थ रहे थे। इस महान संस्था के विघटन का खतरा पैदा हो गया था। उद्देश्य और कार्यों में कोई एकता कांग्रेस में न बची थी। १९५७ के चुनावों में कांग्रेस ने एक राज्य में अपना बहुमत खो दिया। केरल में कम्युनिस्टों की सरकार बन गयी थी। १९६२ के आगामी चुनावों में यह आशंका थी कि वह कुछ और राज्यों में अपनी सत्ता को खो बैठेगी।

इन्दिरा ने कांग्रेस अध्यक्ष पद पाने का कभी प्रयास नहीं किया था परन्तु यह जिम्मेदारी उस पर डाल दी गयी थी। वह इस पद को स्वीकार करने के लिए कुछ अनिच्छुक थी। बड़ी झिझक से ही उसने इस पद को स्वीकार किया था।

इंदिरा के कांग्रेस अध्यक्ष बनने पर महिलाओं और युवा वर्ग को बड़ी प्रसन्नता हुई। एक वर्ष तक वह कांग्रेस की अध्यक्ष रहीं। इस अवधि में उन्होंने युवा और योग्य कार्यकर्ताओं की पदोन्नतियाँ कीं। दल के वे अधिकारी जो कुशलता से कार्य नहीं कर पाते थे उनको हटा दिया गया। कांग्रेस के कामों में महिलाओं ने अधिक भाग लेना शुरू कर दिया। ऐसे लोगों से भी सहयोग माँगा गया जो दल के सदस्य न थे। उन्होंने रचनात्मक प्रयासों पर बल दिया और उनको प्रोत्साहन दिया। उनके कार्यक्रमों तथा लोगों के साथ सम्पर्क का प्रभाव

साफ दीखने लगा। कांग्रेस में नया जीवन आया प्रतीत होने लगा।

पिता की तरह ही इंदिरा भय और अंधविश्वास को दूर करने पर ज़ोर देती थीं। उन्होंने अनुसंधान और वैज्ञानिक योजनाओं के विकास को प्रोत्साहन दिया। राजनैतिक सिद्धांतों के विवेचन में वह समय जाया नहीं करती थीं। उनकी चिन्ता का मुख्य विषय तो यह था कि देश में से गरीबी, बेकारी और निरक्षरता की समस्याओं को हल करने के लिए कौन-कौन से उपाय बरते जायें, परन्तु वे कम्युनिस्टों द्वारा अपनाए तरीकों से भी सहमत न थीं। इन तरीकों में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का हनन होता है और कई बार जानवरों की तरह लोगों से व्यवहार करना होता है। इंदिरा को पूरा विश्वास था कि भारत के लोगों को विरासत में जो सांस्कृतिक-निधि मिली है उसके आधार पर लोग वैज्ञानिक विधियों को अपनाकर अपने देश कल्याण के लिए योजनाओं को पूरा कर सकेंगे। इंदिरा का मानना था कि भारत की अपनी एक विशिष्टता है। भारत को अपना वह व्यक्तित्व नहीं खोना चाहिए। यहां पर विभिन्न विचारों के प्रति सहनशीलता की जो भावना है उसे हमें बनाए रखना चाहिए। भारत की विविधता में एकता के दर्शन वे करती थीं। वे यह भी कहती थीं कि हमारा काम केवल कम्युनिज्म से लड़ना ही नहीं जीवन के गिरे स्तर को ऊपर उठाकर जनता की आधारभूत आवश्यकताओं की पूर्ति की व्यवस्था करके ही हम लोग उनका मुकाबला कर सकेंगे। वे अन्य लोगों की स्वतन्त्रता को कुचलने वाली स्वतन्त्रता में आस्था नहीं रखती थीं।

कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में उन्होंने महिलाओं से बड़ी ईमानदारी से काम करने को कहा और उनको राजनैतिक तथा समाज कल्याण के कार्यों में अधिक से अधिक रुचि लेने की सलाह दी। उन्होंने महिलाओं को आह्वान किया कि वे युगों से जिन रूढ़ियों में बंधी हुई है और जो अंधविश्वास उनको देर से रोके हुए हैं उनको छोड़ देवें। उन्होंने महिलाओं से युग के अनुरूप अपने को बदलने की सलाह दी। राष्ट्र और विश्व में जो विकास कार्य हो रहे हैं और जो प्रगति हो रही है उसके साथ कदम-से-कदम मिलाकर बढ़ते रहने को उन्होंने कहा।

इन्दिरा ने महिलाओं से सदा यही कहा कि उनका पहला कर्तव्य है, घर

और बच्चों की देखभाल। उनका मत था कि महिलाएँ इन कर्तव्यों को निभ
हुए भी सार्वजनिक जीवन में काफी योगदान दे सकती हैं।

कांग्रेस अध्यक्ष के रूप में अपने पहले पत्रकार सम्मेलन में इन्दिरा ने क
था : "राष्ट्र के पास समय कम है और हम समय खो नहीं सकते। कांग्रेस
मेरी केवल यही शिकायत है कि वह पर्याप्त तेजी से आगे नहीं बढ़ रही।"

नए कांग्रेस अध्यक्ष ने जब पद संभाला था तो उनको काफी अनुभव थ
परन्तु क्योंकि इंदिरा ने केवल एक वर्ष ही इस पद पर कार्य किया इसलि
वह थोड़े से ही काम कर सकी थी। सारा जीवन इंदिरा राजनीतिक क्षेत्र अ
समाज कल्याण के कार्यों में व्यस्त रही थी। कांग्रेस की कार्यशैली को
भली प्रकार समझती थी; क्योंकि वह कांग्रेस कार्यसमिति की सदस्या भी
चुकी थी। यद्यपि इंदिरा में किसी प्रकार की महत्वाकांक्षा तो नहीं थी पर
जिस किसी भी कार्य को करने को उन्हें कहा जाता और जो भी जिम्मेदारी
जाती वह बड़ी ही तेजी और उत्साह से उस को करती थीं। इन्दिरा ने कांग्
के पुराने नेतृत्व को बदलने का प्रयास किया। इस कारण कार्यसमिति
उन्होंने नए युवा सदस्यों को लाने का प्रयास किया। यहाँ तक कि अपनी स्वत
निर्णय शक्ति व्यक्त करने के लिए इन्दिरा ने जवाहरलाल को भी कार्यसमि
में नहीं लिया। वह ३७ वर्ष से निरन्तर कांग्रेस कार्यसमिति के सदस्य रहे थे
नेहरू का नाम छोड़ने के लिए बड़े साहस की जरूरत थी। इसमें शक नहीं
प्रधानमन्त्री के रूप में उन्हें कांग्रेस कार्यसमिति की बैठकों में आमंत्रित त
किया ही जाता था। इन्दिरा बड़ी कार्य कुशलता से अपनी बैठकें चलाती
पिता सहित नेताओं और उनके अनुयाइयों पर बड़ी कुशलता से नियंत्रण करत
वह काफी कार्य करवा लिया करती थी। इन्दिरा जब कांग्रेस की अध्यक्ष बनी
तो केरल को छोड़कर अन्य सभी राज्यों में कांग्रेस के मन्त्रीमण्डल थे। वह
पर अनेक पार्टियों का मुकाबला था। कम्युनिस्टों ने विधान सभा में सबसे
अधिक स्थान लिये थे। उनको स्थान पचास प्रतिशत से कम ही मिले थे।
वामपंथी अन्य स्वतन्त्र सदस्यों की सहायता से ही उन्होंने अपना मन्त्रीमंडल
बनाया हुआ था। अनेक कांग्रेसी वहाँ पर मन्त्रीमंडल बनना अपनी प्रतिष्ठा पर
आघात समझते थे। उनकी पार्टी का सत्ता पर जो एकाधिकार था वह तोड़ा

जा चुका था। उन्हें यह आभास नहीं था कि कम्युनिस्टों के सत्ता में आ जाने का प्रभाव विश्वव्यापी होगा। विश्व में यह पहला अवसर था जब कम्युनिस्टों ने मतदान के आधार पर कहीं सत्ता प्राप्त की हो। कम्युनिस्टों के पक्ष में मतदान से केरल की जनता ने कांग्रेस मन्त्रीमंडल द्वारा अपनी समस्यायें हल करने में असमर्थ रहने के प्रति अपना विरोध व्यक्त किया था। केरल की चर्चा सारे राष्ट्र और यहाँ तक कि सारे विश्व में होने लगी थी। केरल में कम्युनिस्टों के सफल अथवा असफल रहने का कम्युनिस्ट आन्दोलन पर विश्वव्यापी प्रभाव पड़ सकता था। कई लोगों ने कहना शुरू कर दिया था कि अब तो कम्युनिस्ट लोकतंत्र के माध्यम से सत्ता हथियाया करेंगे।

कुछ समय तो कम्युनिस्ट सरकार वहाँ पर स्थायी नज़र आयी। जनता को आशा थी कि नया कम्युनिस्ट मन्त्रीमण्डल कांग्रेसी मन्त्रीमंडलों की नौकरशाही को समाप्त कर देगा और सामाजिक व आर्थिक सुधारों का कार्यान्वयन कर सकेगा। बढ़ती मँहगाई को भी समाप्त कर सकेगा। बेकारी दूर कर बेकारों को रोज़गार दिलवा सकेगा।

कम्युनिस्ट मन्त्रीमंडल का नेतृत्व अत्यन्त कुशल राजनीतिक नंबुतिरिपाद कर रहे थे। वह उच्च वर्गीय ब्राह्मण थे; परन्तु उन्होंने अपनी सब सुविधाओं को तिलांजली देकर कम्युनिस्ट आन्दोलन के लिए अपने को समर्पित कर दिया था। वह अत्यन्त उत्तम वक्ता और लेखक थे। जनता में उनकी बहुत लोक प्रियता थी। अनेक वर्ष तक उन्होंने भूमिगत रहकर कार्य किया था; क्योंकि केरल में कम्युनिस्ट दल पर रोक लगा दी गयी थी। वह अत्यन्त लोकप्रिय व्यक्ति थे। वह बहुत अच्छे संगठनकर्ता और वक्ता थे यद्यपि प्रशासनिक अनुभव उनको भी नहीं था। उनके अधिकांश साथियों को भी सरकार का प्रशासनिक अनुभव नहीं था।

कम्युनिस्टों को सत्ता में आए कुछ ही समय हुआ था कि लोगों को आभास होने लगा कि वे ऐसी परिस्थितियां पैदा करते जा रहे हैं जिनसे वहाँ पर सदैव सत्ता उनके हाथों में बनी रहे। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए वे लोग गैर कम्युनिस्ट लोगों को प्रशासन से हटाने लगे थे। उन्होंने भारत के संविधान और लोगों के मौलिक संवैधानिक अधिकारों को भी चुनौती देनी शुरू कर दी थी।

उन्होंने अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सरकारी मशीनरी का इस्तेमाल शुरू कर दिया था। उन्होंने स्कूलों में इस प्रकार की पाठ्य पुस्तकें पढ़ानी शुरू कर दी थीं जिनसे युवकों और किशोरों के मन में कम्युनिस्ट विचारधारा घर कर जाए। उन्होंने यह कार्य बड़ी तेजी से शुरू किया। [illegible] पीड़ितों के उद्धारक के रूप में चित्रित करने वाली पुस्तकों का प्रकाशन शुरू हो गया; जबकि स्वतन्त्रता संग्राम में भारत का नेतृत्व करने वाले नेताओं का नाम इन पुस्तकों में कहीं देखने को न मिलता। [illegible] वियों की गिरफ्तारियाँ आम बात हो गई। [illegible] अनुभव करने लगे।

कम्युनिस्ट सरकार ने शिक्षा सुधार विधेयक प्रस्तुत किया। [illegible] लिक तथा अन्य कई धर्मावलम्बियों ने इस विधेयक को अपने धर्म में हस्तक्षेप माना और इसका डटकर विरोध किया। [illegible] नायर सर्विस सोसाइटी के अध्यक्ष ने कैथोलिक लोगों से मिलकर शिक्षा और सामाजिक मामलों में सरकार के हस्तक्षेप का कड़ा विरोध किया। कांग्रेस को देर से ही कम्युनिस्टों को सत्ता से उतारना याद आया। वह भी प्रजा समाजवादियों कैथोलिक लोगों और नायर सोसाइटी से मिल गई।

श्रीमती गांधी को यह भली प्रकार मालूम था कि कम्युनिस्ट मंत्रीमण्डल किस प्रकार संविधान का उल्लंघन कर रहा है। उन्होंने अन्य राष्ट्रीय नेताओं का ध्यान भी केरल में हो रही घटनाओं की ओर खींचना शुरू किया: "कम्युनिस्ट जो कुछ भी कर रहे हैं वह गलत है," इन्दिरा का कहना था। उन्होंने बहुत ही स्पष्ट और सुदृढ़ विचार व्यक्त किये। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि विरोधी दल के नाते कांग्रेस को हक है कि वह केरल मन्त्रीमण्डल हटाने के लिए आन्दोलन चलाये। ऐसा समझा जाता था कि इस उद्देश्य से जो भी आन्दोलन चलाये जाएंगे वे शान्तिपूर्ण होंगे। पद्मनाभ पिल्लई का केरल में बहुत सम्मान था। उनके नेतृत्व में सारे राज्य में एक व्यापक आन्दोलन शुरू किया गया। इस आन्दोलन ने धीरे-धीरे बहुत बल पकड़ लिया। स्कूलों और कालेजों के छात्रों ने बहिष्कार शुरू कर दिया। जहाँ पर हड़तालें होने लगीं।

जनता ने प्रदर्शन शुरू किये और बड़ी-बड़ी सभाएँ करके विरोध प्रदर्शित किये। सैकड़ों प्रदर्शनकारियों को गिरफ्तार किया गया। बहुतों की पिटाई भी हुई। अन्त में अनेक सभाओं में गोलियाँ भी चलाई गयीं ताकि आन्दोलन को कुचला जा सके। अनेकों प्रदर्शनकारियों ने अपने जीवन खोये। सरकारी प्रशासन परिवहन और संचार सहित पूरी तरह से ठप हो गया। श्रीमती गांधी का मत था कि मन्त्रीमंडल ने संविधान का जो उल्लंघन व दुरुपयोग किया है उसके बाद उसे सत्ता में बने रहने का कोई अधिकार नहीं। सारे राज्य में एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक निरन्तर प्रदर्शन हो रहे थे इसलिए सारा कामकाज भी बंद हो चुका था। इसलिए उन्होंने यह सिफारिश भी की कि केन्द्रीय सरकार को चाहिए कि वह वहाँ का मन्त्रीमण्डल भंग करके नये चुनाव करवाये जिससे वहाँ के लोग अपने मत व्यक्त कर सकें।

भारत के राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने वहाँ के मन्त्रीमण्डल को भंग कर दिया और नये चुनाव करवाने की दृष्टि से वहाँ पर राष्ट्रपति शासन लागू किया। इस कदम का मुख्य कारण यही बताया गया कि वहाँ पर राज्य सरकार के विरुद्ध जन-आन्दोलन इतना प्रबल रूप धारण कर चुका है कि शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना वहाँ कि सरकार के लिए अब सम्भव नहीं है।

केन्द्रीय सरकार ने यह आदेश दिया कि नये चुनाव छह मास बाद किये जाएं। इन्दिरा कांग्रेस की अध्यक्ष थीं। उन्हें अपने नेताओं को और अन्य साथियों को यह आश्वासन देना था कि वहाँ पर चुनावों में दूसरी बार कम्युनिस्टों को विजय नहीं मिलेगी। केरल में इन्दिरा गांधी ने बड़ा नेतृत्व दिखाया। चुनाव नीति के रूप में उन्होंने बड़े व्यावहारिक ढग से सोचा। उन्होंने कांग्रेस को प्रजा समाजवादी दल से समझौता करने की अनुमति दे दी। सामान्य जनता ने इस समझौते का समर्थन ही किया क्योंकि प्रजा समाजवादी पार्टी की लोकतंत्रीय समाजवाद में आस्था थी। कांग्रेस का भी यही विश्वास था। इसके साथ यह लाभ भी था कि प्रजा समाजवादी पार्टी के नेता श्री पट्टम थानु पिल्लई अत्यन्त सक्रिय और अनुभवी नेता थे। कम्युनिस्ट विरोधी मोर्चे को और मजबूत बनाने के लिए मुस्लिम लीग तक से भी समझौता कर लिया गया। कई लोगों ने इस कदम की सख्त आलोचना की; क्योंकि उन्हें याद था कि १९४७ में भारत का विभाजन करवाने में मुस्लिमलीग ने मुख्य रूप से भाग

यह घातक सिद्ध हुआ। इन्दिरा बहुत ही दुखी हुई। कुछ समय तक उन्हों अपने सब कार्य छोड़कर एकांतवास किया। इन्दिरा की आयु उस सम केवल ४२ वर्ष की थी। अपने एक मित्र को पत्र में उन्होंने लिखा : "मैं अप को खोई-खोई और एकाकी अनुभव करती हूँ; मुझे अपने में बहुत कमज़ो अनुभव होती है।"

फ़िरोज का राजनैतिक व्यक्तित्व निखर रहा था। वह बड़े निष्ठावान औ समर्पित कार्यकर्ता थे। अनेक प्रख्यात लोगों ने उन्हें भावभरी श्रद्धांजलि दी। उनकी मृत्यु पर न केवल नेहरू परिवार में ही वरन् सारे देश में शो मनाया गया। साथी संसद सदस्यों ने, उस समय प्रजासमाजवादी पार्टी अध्यक्ष श्री अशोक मेहता ने अपनी श्रद्धांजली में कहा : "फिरोज की मृत्यु संसद ने अपने एक योग्यतम सदस्य को खो दिया है। वह अत्यन्त व्याप दृष्टि वाले व्यक्ति थे।"

कुछ समय तक इंदिरा शोक से अत्यन्त व्याकुल रहीं। उन्होंने और अधि कार्य करके अपने मन को इससे मुक्त करने का प्रयास किया। वह अधि मेहनत से अपने कार्यों को करने लगीं। पिता की सेवा सुश्रुषा में और व्य रहने लगीं। कुछ समय बाद इन्दिरा को पेरिस में युनेस्को के अधिवेशन भाग लेने के लिए जाने वाले शिष्टमण्डल का सदस्य बनाया गया। उन्हो इस रूप में १९६० से १९६४ तक कार्य किया। बाद में युनेस्को के कार्यका मण्डल में भी उनको निर्वाचित कर लिया गया।

पिता के साथी के रूप में रहते हुए जिस घटना से इन्दिरा को सबसे गह आघात लगा; वह था भारत पर चीन का आक्रमण। इस आक्रमण से नेहरू व इतना धक्का पहुँचा था कि एक साल के भीतर ही नेहरू कम से कम १० व और बूढ़े हो गये थे। पहले जैसी चंचलता उनमें न रही थी।

इंदिरा को इतनी गहरी निराशा और आघात नहीं पहुँचा क्योंकि उस पहले ही आभास पा लिया था कि चीन कुछ ऐसी शरारत करेगा। उसने अप पिता को चेतावनी भी दी थी। इन्दिरा ने १९५४ में चीन का दौरा किय था। वहाँ बड़े पैमाने पर सैनिक तैयारियाँ होती देखी थीं। इस पर अपन जानकारी से जवाहरलाल को अवगत भी करा दिया था परन्तु वह हिंदी-चीन भाई-भाई का जमाना था। नेहरू कुछ भी सुनने की स्थिति में नहीं थे।

नेहरू इस प्रकार के व्यक्ति थे कि वे अपने विरोधियों के कथन पर भी विश्वास कर लेते थे। नेहरू को यह विश्वास था कि चाऊ एन लाई पंचशील के अनुरूप कार्य करेंगे। इसके मुख्य सिद्धांत थे : आपसी सम्मान और एक दूसरे के प्रदेश की अखंडता का सम्मान; एक-दूसरे पर आक्रमण न करना; एक-दूसरे के भीतरी मामलों में हस्तक्षेप न करना; बराबरी और परस्पर एक-दूसरे का लाभ करना; शान्तिपूर्ण सहअस्तित्व। असल में नेहरू अत्यन्त ईमानदार व्यक्ति थे। उनको यह कल्पना भी नहीं थी कि चीन के राष्ट्रीय नेता इस प्रकार विश्वासघात करेंगे।

भारत पर चीनी आक्रमणों की अवधि में इन्दिरा ने दिन-रात अनथक कार्य किया। जवानों के कल्याण के लिए भरसक प्रयास किया। पिता और लाल-बहादुर शास्त्री जैसे परिवार के मित्रों की राय के विरुद्ध इन्दिरा ने मोर्चे की अग्रिम पंक्तियों का दौरा किया। उन्होंने लड़ रहे सैनिकों का मनोबल ऊँचा करने के लिए यथासंभव प्रयास किया। १९६२ में देश को युद्ध के लिए तैयार करने में नागरिकों की सहायता के वास्ते एक नागरिक परिषद का गठन किया गया। इस समिति का अध्यक्ष उनको बनाया गया। इंदिरा ने बड़ी कुशलता से इसका नेतृत्व किया। उन्होंने जनता का और इसके साथ ही सैनिकों का मनोबल बढ़ाने में कमाल का काम किया। वे मोर्चों पर जातीं और वहाँ पर 'रैलियों' में भाषण करतीं। राष्ट्रीय सुरक्षा कोष के लिए धन एकत्र करतीं। नेहरू को उन दिनों कम्युनिस्ट चीन द्वारा धोखा देने पर गहरा आघात पहुँचा था। वे अत्यन्त मानसिक पीड़ा अनुभव कर रहे थे।। उन दिनों इन्दिरा नेहरू के लिए बड़ा सहारा बनीं। उस कठिन परीक्षा की घड़ी में इन्दिरा ने अपने पिता की मदद की ताकि वे पुनः राष्ट्र को उस समय एक करके संघर्ष के लिए तैयार कर सकें।

ग्यारहवां अध्याय

नेहरू और उनके बाद

नेहरू जब जीवित ही थे तो यह सवाल पूछा जाने लगा था कि नेहरू के बाद कौन ? न तो नेहरू और न ही जनता इसका कोई निश्चित उत्तर दे पाती थी। अनेक देशों के राजनैतिक समीक्षकों ने यह चिंता भी व्यक्त की थी कि नेहरू के बाद भारत में अराजकता फैलेगी। वे किसी ऐसे व्यक्ति का नाम नहीं सोच पाते थे जोकि नेहरू का स्थान ले सकें। नेहरू गत चालीस वर्ष से भारत की राजनीतिक बागडोर संभाले हुए थे। पिछले अठारह वर्ष से वे भारत के प्रधानमंत्री थे। विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्री देश के प्रधानमंत्री के नाते उन्होंने अपनी राजनैतिक स्थिति को बड़ा ही मजबूत बना लिया था। वह महान् व्यक्ति होने के साथ ही कुशल प्रशासक भी थे। ऐसा लगता था कि उनका न तो कोई स्थान ले सकता है और न ही उनके बिना काम चल सकता है। कुछ लोगों की शिकायत थी कि नेहरू ने अपने बाद यह बड़ी जिम्मेदारी संभालने के लिए किसी को तैयार नहीं किया। परन्तु सच्चाई तो यह है कि भारत एक विशाल देश है और कांग्रेस एक बड़ी राजनैतिक पार्टी। इसमें सदैव युवकों का राजनैतिक प्रशिक्षण चलता रहता है। अनेक व्यक्ति थे जो प्रधानमंत्री पद का दायित्व संभाल सकते थे। इनमें इंदिरा का नाम भी प्रमुख था। परन्तु इंदिरा कोशिश करने पर पीछे ही रही। उसे तो इतने में ही संतोष था कि वह अपने वृद्ध पिता की सहायता कर पा रही है।

शायद ऐसा आरोप लगाया जाय कि नेहरू ने काफी पहले यह निश्चित नहीं किया कि किसको अपना उत्तराधिकारी चुनेंगे। नेहरू का लोकतंत्र में दृढ़ विश्वास था। वह थे भी अत्यन्त सज्जन व्यक्ति। वे इस प्रकार का कोई कदम नहीं उठा सकते थे। अनेक नेताओं ने यह सुझाव भी दिया कि इन्दिरा ही उनके बाद इस पद को संभालेगी। परन्तु नेहरू ने इन सुझावों को अना-

वश्यक कहकर टाल दिया। नेहरू ने अपने जीवन के अन्तिम दिनों में अपने कार्यों से यह अवश्य व्यक्त कर दिया था कि वे लालबहादुर शास्त्री को ही इस पद के लिए सर्वाधिक उपयुक्त समझते हैं। इसमें किसी प्रकार के पक्षपात की भावना न थी। सारे भारत में लालबहादुर का सम्मान था। वे अत्यन्त बुद्धिमान और कुशल राजनीतिज्ञ थे। वे इस पद को बखूबी संभाल सकते थे। उनकी ईमानदारी की सारे देश में धाक थी। जवाहरलाल से उनका सम्बन्ध गत तीस वर्ष से चला आ रहा था। दरअसल नेहरू पिछले कई वर्ष से निरन्तर लालबहादुर को अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य देकर के अप्रत्यक्ष रूप से इस कार्य के लिए तैयार कर रहे थे। लालबहादुर ने अपने को सौंपी हर जिम्मेदारी को बड़ी खूबी से संभाला था।

नेहरू को जनवरी १९६२ में भुवनेश्वर कांग्रेस इस के अधिवेशन के समय दिल का दौरा पड़ा। उस समय प्रमुख कांग्रेसी नेताओं को यह स्पष्ट मालूम हो गया कि वे अधिक देर तक जीवित नहीं रहेंगे। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि नेहरू के बाद उनकी नीतियों पर ही देश चल सके कुछ प्रयास किए गए। राज्यों के बारह मुख्यमंत्रियों ने नेहरू को एक पत्र लिखकर सुझाव दिया कि वे इन्दिरा को अपने मंत्रिमंडल में सम्मिलित कर लेवें परन्तु यह प्रयास सफल नहीं हो सका; क्योंकि इन्दिरा इसके विरुद्ध थीं।

जनवरी से लेकर मई तक इन्दिरा ने अपने पिता नेहरू की सेवा-सुश्रूषा बड़ी लगन से की। नेहरू से मिलने के लिए निरन्तर ही आगंतुकों का ताता बंधा रहता था। इन्दिरा ने सदैव यत्न किया कि बेकार में ही नेहरू से मिलने आने वाले लोगों की संख्या कम की जाय। वे ही उनकी डाक पढ़तीं और डाक्टर की सलाह के अनुसार चलने को बाध्य करतीं। वह उनको सारी खबरों की जानकारी भी देतीं। नेहरू का स्वास्थ्य सुधरने लगा था। [illegible] मई में अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति का अधिवेशन हुआ। तब तक नेहरू इतने स्वस्थ हो चुके थे कि वे इस अधिवेशन में भाग ले सकें। उन्होंने सरकारी फाइलों को देखकर उन पर फैसले लेने शुरू कर दिए थे। उनका स्वास्थ्य सुधर रहा था। यद्यपि अधिक थकानवाला काम नहीं कर पाते थे। उनको अनेक महत्वपूर्ण निर्णय लेने में भी इंदिरा ने सहायता दी। कई मामलों में इन्दिरा ही नेहरू की ओर से निर्णय कर लेतीं। पिता-पुत्री ने कुछ दिन के लिए देहरा-

दून में छुट्टी मनायीं। काफी ताजा होने के बाद २६ मई को वे लोग दिल्ली लौटे। पालम पर उनका स्वागत करने के लिए गए लोग नेहरू के स्वास्थ्य को देखकर संतुष्ट हुए। उनको विश्वास हो गया कि वे अभी काफी दिनों तक देश की सेवा कर सकेंगे। उस रात नेहरू ने अपनी मेज पर पड़ी सारी फाइलों को निपटा दिया और कहा : "मेरा अनुमान है कि हमने अपना काम कर लिया है।" और ऐसा कहकर वे सोने चले गए।

अगले दिन उनको दिल का दौरा पड़ा। वे चेतना खो बैठे। इसके बाद उनको कभी होश नहीं आया। इंदिरा को गहरी चोट लगी। उसने अपने सब प्रियजनों को एक-एक करके काल का ग्रास बनते देखा था। पहले दादा, फिर माँ और तब पति को उसने मरते देखा था। अब उनके पापू भी विदा हो गए थे। सबसे बहुमूल्य प्रकाश 'जवाहर' जा चुके थे। वह अपने चारों ओर अन्धकार पा रही थी। वह एकाकी अनुभव कर रही थी। वह स्तब्ध रह गयी थीं और सारी रात जागती रहीं। उनकी आँखें अपने पिता के चेहरे पर लगी थीं। वर्षों से उनका असीम प्रेम इन्दिरा को मिला था; परन्तु अब तो अज्ञात की छाया उस पर पड़ी थी। पिता ने उसे बहादुरी से जीने की प्रेरणा दी थी। अब उसने बड़ी बहादुरी से अपने भावों और आँसुओं पर काबू पाया। परन्तु इन्दिरा को कष्ट बहुत था, चौबीस घंटे तक उसने न कुछ खाया और न ही कुछ पिया और न ही वह कुछ खाना चाहती थी।

परन्तु और लोगों का ध्यान रखते हुए उसने घर में सारी रात बैठे अन्य व्यक्तियों के लिए भोजन तैयार करने का आदेश दिया। इसके बाद उसने उन लोगों को कहा कि वे जायें और नहा-धोकर तैयार होकर शवयात्रा में चलें। उसने उन लोगों को याद दिलाया कि पापू कभी यह नहीं चाहते, कि अस्त-व्यस्त हालत में आप लोग उनके अंतिम-यात्रा में सम्मिलित हों।

अपने व्यक्तिगत दुख को भुलाकर उसने गहरी पीड़ा को अपने मन में ही समेटे हुए अंतिम-यात्रा की पूरी तैयारी करने के लिए आवश्यक निर्देश दिए। अगले दिन सारे भारत में लोगों ने अपने प्रिय नेता के बिछुड़ने पर गहरा शोक व्यक्त किया। छह मील लम्बी शवयात्रा जब शुरू हुई तो मार्ग के दोनों ओर लाखों लोगों ने खड़े होकर अपने प्रिय नेता को अश्रुपूर्ण विदाई दी। उन लोगों

ने भारत के जवाहर पर अंतिम नजर डाली। उसने अपना काम पूरा कर लिया था और धरती से विदा ली। और पापू के चले जाने के बाद इन्दिरा प्रियदर्शनी ने अपना मार्गदर्शक और प्रेरणा स्रोत और सब कुछ खो दिया था। उसके मन में एक ऐसा सूनापन और ऐसी रिक्तता आ गयी थी कि जो कभी भरी नहीं जा सकती थी।

यह अंतिम संस्कार किसी धार्मिक विधि-विधान में किया जाय इससे जवाहरलाल को कोई फरक नहीं था। इंदिरा ने स्वयं इस बारे में निर्णय लिया और परम्परा के अनुसार धार्मिक विधि से ही अंतिम संस्कार करने का फैसला किया। यद्यपि प्रतीत यह होता था कि ऐसा करना पिता के विचारों के प्रतिकूल है। उसने अपने इस कार्य का औचित्य भी सोच लिया था।

कहा जाता है कि प्रेम तो हजारों पापों को ढांप लेता है। और मृत पिता के प्रेमवश ही इंदिरा ने ऐसा करने का निर्णय किया था। इंदिरा आस्थावान और धार्मिक दर्शन को अच्छी तरह समझने वाली महिला हैं। अपने धार्मिक अनुभवों और आत्मा के अनश्वर होने के विश्वास के कारण इंदिरा यह नहीं मानती कि शरीर समाप्त होने के साथ ही सब कुछ समाप्त हो जाता है। भारत की धार्मिक और सांस्कृतिक विरासत में जो प्रेरणादायक विचार हैं उनका इन्दिरा पर पूरा प्रभाव था। चाहे जीवित और चाहे मरणोपरान्त हर समय वह चाहती थीं कि उनके प्रिय पापू से संबंधित सभी काम बड़ी ही शान और सुचारू रूप से होना चाहिए। आखिरकार जवाहरलाल कोई नास्तिक नहीं थे; वे तो केवल यही कहते थे कि ईश्वर है या नहीं इससे हमें कोई सरोकार नहीं। यदि किसी व्यक्ति को कर्मों के हिसाब से ही देखा जाना हो तो नेहरू से अधिक धार्मिक व्यक्ति कौन हो सकता है। वह लोगों के सेवक थे; जीवन के उच्चतम सिद्धांतों की रक्षा के लिए संघर्षरत थे। अपने देश के कल्याण के लिए उन्होंने अपना सब कुछ बलिदान कर दिया था। सच में अधिक बड़ा धर्म कौन सा है? न ही स्नेह और करुणा से बड़ा कोई धर्म है। इतने अधिक गुण जवाहरलाल से अधिक और किस व्यक्ति में होंगे?

इन्दिरा के जीवन के प्रेम-भरे संबंधों का वह अंत था। निस्संदेह मरे जीवन

भर पिता की सेवा करते रहने पर इंदिरा को गहरा संतोष था। शायद इतिहास में पिता और पुत्री का यह सम्बन्ध सबसे उपयोगी सम्बन्ध रहा हो। कहाँ ऐसा उदाहरण मिलता है कि पिता और पुत्री ने एक साथ मिलकर पहले स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया और इस संघर्ष में उन लोगों को सब कुछ; यहाँ तक कि अपना जीवन भी बलिदान करना पड़ा। कहाँ दुनिया में यही देखा गया है कि पिता के मरने के बाद पुत्री ने प्रधानमंत्री पद पर निर्वाचित होकर पचास करोड़ लोगों का नेतृत्व सभाला हो ?

ऐसा बताया जाता है कि मृत्यु के समय जवाहरलाल की स्थिति इस प्रकार की थी कि इंदिरा को प्रधानमंत्री बनवाया जा सकता था। स्वयं लालबहादुर शास्त्री नेहरू परिवार के प्रति इतने वफादार थे कि इस दिशा में वे कुछ भी करवा सकते थे। इन्दिरा ने यह स्पष्ट कर दिया था कि वह किसी भी पद की उम्मीदवार नहीं। इंदिरा ने पिछले कुछ साल कठोर श्रम किया था। इस दौरान कुछ सफलताएँ भी उसे मिली थीं। अनेक अप्रिय घटनाओं का भी उसे सामना करना पड़ा था। उसे अपने जीवन के दो महत्वपूर्ण व्यक्तियों; पहले अपने पति और अब अपने पिता का वियोग सहन करना पड़ा था। पुत्र राजीव और संजय बोर्डिंग स्कूल में थे। अब इन्दिरा को नया जीवन खुद अकेले ही व्यतीत करना था। उसे यह निश्चय करना था कि अपना भावी जीवन उसे किसको समर्पित करना है। परन्तु उसे विचार का अधिक अवसर नहीं मिला।

जवाहरलाल नेहरू जब बीमार थे तो वे अपना सारा काम लालबहादुर जी से करवाया करते थे। लालबहादुर ने हर जिम्मेदारी को बड़ी खूबी से निभाया था; उन्होंने किस प्रकार इस उत्तरदायित्व को निभाया यह ऊपरी दृष्टि से साफ समझ नहीं आता। नेहरू के अनुयायी की भीतरी ताकत आत्मशक्ति और समर्पण-भावना का पता उनके इन्हीं कार्यों से लगता है। लालबहादुर में ऐसी इच्छा-शक्ति थी जिसके द्वारा वह किसी भी लक्ष्य को प्राप्त कर सकते थे।

शास्त्रीजी का चुनाव सर्वसम्मति से हुआ। वह भारत के प्रधानमंत्री

बने । शास्त्रीजी नर्म विचारों के व्यक्ति थे । विभिन्न गुटों में [illegible]
की क्षमता उनमें अद्भुत थी । राजनैतिक शत्रु उनके कोई न [illegible]
आमतौर परे इस प्रकार के प्रख्यात राजनीतिज्ञों के शत्रु [illegible]
हैं । कांग्रेस के उच्च आदर्शों में उनका पूरा विश्वास [illegible]
संदेह से परे थी । लोगों को यह भी ज्ञात था कि वह [illegible]
राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझा सकते हैं । [illegible]
जैसीकि उनकी कार्यशैली थी वे उस समय [illegible]
कभी अपना ढिंढोरा नहीं पीटा और न ही [illegible]
किया । उन पर कुछ कहने को दबाव [illegible]
तभी यह पद स्वीकार करेंगे यदि कांग्रेस [illegible]
की तरह जब देश और पार्टी के हितों [illegible]
तोड़ से ऊपर थे । शीघ्र ही यह [illegible]
के कांग्रेस दल में श्री शास्त्री को [illegible]
थी ।

श्री कामराज ने अपने [illegible]
निष्कर्ष पर पहुँचे कि दल के [illegible]
कांग्रेस के संसदीय दल की [illegible]
सम्मति से श्री शास्त्री को [illegible]
को भारत के प्रधानमंत्री [illegible]
था कि अपने पिता के [illegible]
के प्रमुख राजनेताओं [illegible]
वे अच्छी तरह [illegible]
शास्त्री ने उन्हें [illegible]
ने इसे अस्वीकार [illegible]
का प्रस्ताव [illegible]
गांधी को [illegible]
राज्यसभा के लिए [illegible]
तनावों में [illegible]

वह इस बात को अच्छी तरह से समझती थी कि जनता की मुख्य
तो रोटी कपड़ा और मकान ही है परन्तु उनके सांस्कृतिक जीवन क
करने के लिए भी हर संभव प्रयास किया जाना चाहिए। इंदिर
निकेतन में अपनी शिक्षा के दौरान नृत्य संगीत तथा अन्य कलाओं में
थी। श्रीमती गांधी को लोक-नृत्यों और विशेष रूप से मणिपुरी
गहरा प्रेम था। मणिपुरी नृत्य तो वह स्वयं कर भी सकती थीं। अ
निवास के दौरान उन्होंने नाटकों और गीति-नाट्यों में दर्शक के रूप
भाग लिया था।

इन्दिरा भारत में सिनेमा के महत्व को अच्छी प्रकार समझ
पहले भारतीय सिनेमा संघ की अध्यक्ष और बाद में उपाध्यक्ष रहीं
इस बात को अच्छी तरह समझती थीं कि जन साधारण को शि
और उनके मनोरंजन के लिए सिनेमा सर्वोत्तम साधन है। इसलिए वे
के लिए उत्सुक थीं कि सिनेमा का विकास अच्छे ढंग से हो औ
लालफीता शाही के कारण बुरा असर न पड़े। वे अनावश्यक सेंस
सिनेमा को मुक्त करवाना चाहती थीं।

स्वाभाविक ही था कि कलाप्रेमी इन्दिरा सूचना मंत्रालय के
विशेष रुचि से कर पायीं। वे एक वर्ष तक इस पद पर रहीं। इस
उन्होंने अनेक सफलताएँ प्राप्त कीं। अपने पिता की तरह वे रोज
रोज समाप्त कर लेती थीं। वे सरकारी काम बड़ी खूबी और तेजी से

भारत में टेलिविजन के माध्यम से शिक्षा और मनोरंजन की सम
बहुत अधिक हैं यह समझ लेने के कारण इन्दिरा ने टेलिविजन प्रो
करने के लिए बनी योजना को सबसे अधिक महत्व दिया। सामाजि
कर्ता के रूप में समाज कल्याण करने की उनकी इच्छा की पूर्ति भी इ
विजन के माध्यम से पूरी हो गई। उन्होंने टेलिविजन स्टेशन दिल्ली प
की महिलाओं के लिए परिवार नियोजन के लिए अपनाए तरीकों प
प्रसारित करने की अनुमति भी दे दी।

इन्दिरा ने राजनैतिक पूर्वाग्रह अथवा दबाव के कारण निर्णय नहीं लि
न ही राजनैतिक लाभ-हानि के आधार पर अपने निर्णय लिए। पहले त

कारी निर्णय लेने में इसलिए झिझकते थे कि पता नहीं राजनैतिक गुटबंदियं के कारण उन पर क्या बीते ? परन्तु इस नये सूचना मंत्री के नेतृत्व में वह आश्वस्त होकर ये स्वतंत्रतापूर्वक लोगों के हित के लिए वे निर्णय लेते ।

इन्दिरा पहली भारतीय प्रधानमंत्री थीं जिनको ख्रुश्चेव को हटाये जा तथा कोसीगिन को सत्ता में आने के बाद मास्को आमंत्रित किया गया था इन्दिरा ने मास्को की यात्रा की और उसके पश्चात् यह विश्वास हो गया कि चीन और भारत के प्रति रूस का दृष्टिकोण बदलेगा नहीं । उन्होंने रूस सरकार से यह आश्वासन भी प्राप्त किया कि भारत को निरंतर उनसे आर्थिक सहा यता मिलती रहेगी ।

कई सप्ताह बाद न्यूयार्क में नेहरू स्मारक प्रदर्शनी के उद्घाटन के लि उन्हें न्यूयार्क जाना पड़ा । अपने पिता के समान इंदिरा ने अमेरिका और रू दोनों के साथ अच्छे संबंध बनाये रखने के लिए प्रयास किया ।

१९६५ की जनवरी में सरकार ने भारत में अंतर्राष्ट्रीय फिल्म मेले क आयोजन किया । इन्दिरा ने इसमें गहरी रुचि ली । विशेष रूप से वहाँ प दिखाई जाने वाली सभी फिल्मों में और इस मेले की व्यवस्था में भी ।

इंदिरा ने अनेक नए प्रसारण भी शुरू करवाये जिनके द्वारा साधारण जनता को कुछ शिक्षा मिल सकी । वह आकाशवाणी को नया रूप देना चाहती थीं । उनकी धारणा थी कि इसको अलग स्वतंत्र इकाई के रूप में कार्य करना चाहिए और स्वतंत्र प्रचार की एजेंसी होनी चाहिए । रेडियो और टेलिवि जन के लिए १०० करोड़ रुपये की एक मास्टर प्लान भी उन्होंने बनाई थी ।

अपने मंत्रिमंडल सम्बन्धी उत्तरदायित्वों के अलावा इन्दिरा ने राजनैति और सामाजिक गतिविधियों में सक्रिय भाग लिया । उन्होंने 'समाज सेवा' के बारे में लिखा और ऐसे लेखों में सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में हुए अपने अनु भवों का विवरण दिया ।

उनके सूचना मंत्री के रूप में कार्यकाल के दौरान जो सबसे बड़ी घटना घटी वह थी भारत-पाक युद्ध । सदा की तरह इंदिरा ने युद्ध प्रयासों में सहा यता को पूरा योग दिया । वह अग्रिम मोर्चों पर गईं और सैनिकों को प्रोत्सा

हन दिया। पाकिस्तान के सशस्त्र गोरिल्लों ने जब काश्मीर में प्रवेश किया था तो श्रीमती इन्दिरा गांधी वहाँ पहुँचने वाली पहली नेता थीं। इंदिरा गांधी ने राष्ट्रीय सुरक्षा कोष संग्रह में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

इस संघर्ष के परिणामस्वरूप और भारत के इसमें विजय प्राप्त कर लेने पर ताशकंद शान्ति सम्मेलन बुलाया गया। वहाँ जो घटना घटी उसका प्रभाव इन्दिरा के जीवन और उसके भावी कार्य पर बहुत पड़ा।

यह युद्ध २२ दिन चला था। भारत सब मोर्चों पर आगे बढ़ा था। २० दिसम्बर तक पाकिस्तान के बहुत अधिक सैनिक मारे गये थे। लगभग ३,६०० पाकिस्तानी सैनिक मौत के घाट उतार दिए गए थे। इनमें ४२५ के लगभग अधिकारी थे। ३०० पाकिस्तानी टैंक नष्ट कर दिये गए थे, साथ ही ६४ पाकिस्तानी विमान भी धराशायी कर दिये गए थे। भारत के ९७६ सैनिक मारे गए थे। जिनमें ६४ अधिकारी थे। भारत के १०० टैंक और ३२ हवाई जहाज नष्ट हुए।

सुरक्षा परिषद इस संघर्ष को बंद करवाने के लिए निरंतर प्रयास करती रही थी। २० सितम्बर को उसने एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें कहा गया था कि ७२ घंटे के भीतर युद्ध विराम कर दिया जाये। २३ सितम्बर १९६५ की आधी रात से युद्ध विराम लागू हुआ। यद्यपि पाकिस्तान निरंतर इसका उल्लंघन करता रहा। २२ अक्तूबर १९६५ तक पाकिस्तान ने ५३६ बार इस समझौते का उल्लंघन किया था। पाकिस्तान ने आरोप तो यह भी लगाया कि भारत भी युद्ध विराम समझौते का उल्लंघन कर रहा है। परन्तु बड़े पैमाने पर लड़ाई नहीं हुई।

रूस के प्रधानमंत्री श्री कोसीगिन ने ४ से १० जनवरी १९६६ तक ताशकंद में एक सम्मेलन बुलाया, जिसमें भारत पाकिस्तान के सम्बन्धों का शांतिपूर्ण हल निकालने का प्रयास किया गया।

बारहवां अध्याय

प्रधानमंत्री इंदिरा

भारत के इतिहास और इंदिरा के जीवन में १९ जनवरी १९६६ दिन उल्लेखनीय है। संभवतः यही वह दिन था जिसके लिए पिछले इ दिनों से उसे प्रशिक्षण मिलता रहा और अनुशासन तथा अनेक कष्टों को स करना पड़ा था। जनता को इंदिरा से प्रेम था और उनकी आशाओं के अनु इंदिरा को यह उत्तरदायित्व दिया गया।

इंदिरा ने प्रधानमंत्री पद पर आते ही सबसे पहले राजघाट पर गां समाधि पर जाकर नमन किया और फिर निकटवर्ती शांतिवन में जहाँ उन पिता जवाहरलाल नेहरू का अंतिम संस्कार किया गया था। बाद में वह ती मूर्ति भवन में गयीं जहां पर अपने पिता के साथ वे अनेक वर्ष तक रही थ और तब अपने पिता के चित्र के सामने कुछ समय प्रार्थना की मुद्रा में खड़ रहीं तथा देश की प्रगति के लिए पुनः अपना जीवन समर्पित करने का संकल्प लिया।

राष्ट्रपिता गांधी और पिता नेहरू को अपनी श्रद्धांजलि देने के बाद इंदिर संसद भवन में गयीं। वहाँ पर ससद सदस्यों ने जोरों से ताली बजाकर उनका अभिनंदन किया। बड़े सौम्य-भाव और चुस्ती से अपने परिचितों के अभिनंदन को स्वीकार करती हुई इंदिरा अपने विरोधी प्रत्याशी मोरारजी देसाई के पास गयीं और उनसे आशीर्वाद मांगा। प्रधानमंत्री पद का चुनाव हुआ और इंदिरा उसमें विजयी रहीं।

अन्तरदलीय संघर्षों से ऊपर उठकर इन्दिरा ने अपने समर्थकों को धन्यवाद दिया और साथ ही विरोधियों को भी। उनसे यह अनुरोध भी किया कि

आपसी मतभेदों को भुलाकर अब सबको एक साथ ही काम करना चाहिए। क्या इन्दिरा को प्रधानमंत्री पद की लालसा थी ? इसका पता २४ जनवरी को राष्ट्र के नाम दिए उनके संदेश से मिलता है। प्रधानमंत्री पद पर आने के बाद पहला भाषण उन्होंने यही दिया था। इसमें उन्होंने राष्ट्र निर्माताओं के स्वप्नों के अनुसार देश को बनाने का फिर संकल्प लिया। उन्होंने यह कहा कि देश को लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, सुनियोजित आर्थिक विकास तथा सामाजिक प्रगति की ओर ले जाया जायेगा। इन्दिरा ने घोषणा की : "हम शांति चाहते हैं, परंतु गरीबी, बीमारी और अज्ञान के विरुद्ध तो हमें युद्ध करना ही है। हमने लोगों को वचन दिया है कि हम उनके लिए आवास, भोजन तथा नौकरियों की व्यवस्था करेंगे। हम उनके शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के लिए भी जिम्मेदार हैं। हमें अपने समाज के पिछड़े लोगों को बढ़ाने का विशेष ध्यान रखना है। उन सबको कुछ सीमा तक सामाजिक संरक्षण मिलना चाहिए। उनका मुझे सदैव ख्याल रहा है और आगे भी रहेगा।

भारत के युवकों को समझ लेना चाहिए कि वे अपने देश को आज जो कुछ देंगे कल वे वही उससे प्राप्त कर सकेंगे। राष्ट्र चाहता है कि वे अपने कार्यों में अधिकतम कुशलता और योग्यता प्रदर्शित करें। विज्ञान और कला के क्षेत्र और विचार तथा कार्य उनका आह्वान कर रहे हैं। अब उनको नयी सीमाएँ पार करनी होंगी। नए क्षितिजों और नए लक्ष्यों को प्राप्त करना होगा। हमारा धर्म और भाषा अथवा राज्य चाहे कुछ भी क्यों न हो हम सब लोग एक ही राष्ट्र के हैं और एक ही लोग हैं।"

इन्दिरा गांधी जब प्रधानमंत्री निर्वाचित हुई तो सारे विश्व का ध्यान इन घटनाओं की ओर खिचा। विश्व के अनेक समाचारपत्रों ने बड़े-बड़े शीर्षकों में इन खबरों को छापा। सभी महाद्वीपों से नयी दिल्ली में पत्र और बधाई के तार पहुँचने लगे। विश्व के नेताओं से लगभग दस हजार के करीब तार उनको प्राप्त हुए। अपने बधाई तार में अमेरिका के राष्ट्रपति श्री लिंडन जानसन ने कहा : "आप विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र का दायित्व अपने ऊपर ले रही हैं, मैं आपकी सफलता की कामना करता हूँ। हम दोनों देश मानव

गरिमा, मानव कल्याण और लोकतंत्री सिद्धांतों में आस्था रखने वाले हैं तथा शांति के इच्छुक हैं। आपके नेतृत्व में हम दोनों देशों के संबंध खूब घनिष्ठ हों ऐसी मेरी कामना है।" रूस के प्रधानमंत्री ने अपने संदेश में कहा था : "रूस में आपका बहुत सम्मान किया जाता है। आप भारत की प्रमुख राजनेता के रूप में अपने पिता जवाहरलाल की नीतियों पर चलेंगी और उनके आदर्शों को प्राप्त करने का प्रयास करेंगी ऐसी कामना है।"

इंदिरा ने प्रधानमंत्री का कार्यभार समर्पण-भावना से शुरू किया। इसे दुनिया का सबसे कठिन कार्य कहा जा सकता है, परंतु भारत के पुरातन इतिहास को देखते हुए उन्हें कुछ शांति मिलती थी कि वह कुछ न कुछ तो कर ही दिखाएँगी।

इंदिरा के पिता ने काफी देर तक यूरोप में रहने के बाद भारत लौटने पर कहा था : "मैं भारत की तुलना में पश्चिम में अधिक अपनापन पाता हूं।" परंतु इन्दिरा का यद्यपि पश्चिम के अनेकों लोगों से संपर्क था फिर भी वे भारतीय आत्मा को अच्छी तरह से समझती थीं। इंदिरा का कहना है कि भारत की सांस्कृतिक विरासत के प्रति जो गहरा प्रेम मुझमें है उनका मूल कारण मेरी माँ कमला नेहरू थीं। अपनी माता के बारे में वह कहती हैं : "अपनी माँ को मैं अपने पिता से अधिक प्रशंसा की दृष्टि से देखती हूं। वह तो मुझे ऊंचे आकाश में उड़ान भरने को उत्साहित करते हैं परंतु मां की स्मृति मेरे लिए सदा ही एक तरह का लीवर का काम करती है और इस धरती से संबंध बनाए रखती है।"

महात्माजी के बारे में इंदिरा ने कहा था : "वे न केवल शिक्षित लोगों को ही वरन् देश की साधारण जनता को भी प्रभावित करते हैं। देहात के आदमी और साधारण श्रमिक उनसे प्रभावित होते थे। उन्होंने ही हमें निडर बनाया व अपनी इच्छाओं और महात्वाकांक्षाओं को व्यक्त करने का साहस दिया। इसने सारे देश में एक क्रांति-सी ला दी। परंतु अब स्थिति बिल्कुल बदल चुकी है। मेरा विचार है कि मेरे पिता ने आधुनिक विचारों को भारत में फैलाने की दिशा में काफी काम कर लिया है। साधारण जनता में जीवन

के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण भी पैदा हो गया है। मेरा मत है कि यदि उनको स्थानीय नेताओं का समर्थन मिल जाता तो हम लोग अंध-विश्वासों को दूर करने और अपनी योजनाओं को पूरा करने में काफी हद तक सफल हो जाते। मैं अनेक योजनाओं को देखने गयी हूँ। मैंने पाया है कि योजना चलाने वाले अधिकारी के व्यक्तित्व ने कई बार चमत्कार पैदा कर दिए हैं। सरकारी योजनाएँ तो कुछ अनम्य-सी होती हैं, उनमें काफी लचकीलेपन की जरूरत होती है।

इन्दिरा ने अपने मंत्रिमंडल में गुलजारीलाल नंदा, चौधरी, चह्वाण, स्वर्ण-सिंह आदि शास्त्री-मंत्रिमंडल के पुराने सदस्यों को भी शामिल किया। अशोक मेहता आदि नए व्यक्तियों को इन्दिरा ने अपने साथ काम के लिए चुना। अनेक उपमंत्री और संसदीय सचिवों को चुनकर इन्दिरा ने नवयुवकों को अपने मंत्रिमंडल में पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया। इससे पहले मंत्रिमंडल में वयोवृद्ध सदस्यों की ही भरमार थी। इंदिरा का यह विश्वास है कि जीवन के हर क्षेत्र में युवकों को कार्य के अवसर दिए जाने चाहिएँ। उनको यह अनुभूति होनी चाहिए कि वे राष्ट्रीय निर्माण के कार्य में उपयोगी सहयोग दे रहे हैं।

प्रधानमंत्री के रूप में इन्दिरा जी ने अपना कार्य अत्यंत सुचारू रूप से शुरू किया। वे किसी निर्णय को स्थगित नहीं करती थीं। अपने दफ्तर का कार्य तुरंत ही निपटा लिया करती थीं। उन्होंने अपने साथियों में काम भी बड़े ढंग से बाँटा हुआ था। साथियों और सहकर्मियों व सरकारी अधिकारियों के मत को ध्यान से सुनकर ही किसी फैसले पर पहुंचतीं। वे फाइलों को बड़ी तेजी से निपटाया करती थीं। इन्दिरा को पता था कि लालफीताशाही और नौकरशाही ने देश की प्रगति को अवरुद्ध किया है। वे इस चीज को खतम कर देना चाहती थीं।

इन्दिरा अपना काम बड़ी मुस्तैदी से करती हैं। प्रतिदिन वे लगभग सोलह से अठारह घंटे काम करती हैं। शायद ही कभी आधी रात से पहले सोने के लिए जाती हैं। यह कठिन काम वर्षों से वे करती चली आ रही हैं। संसद के अधिवेशन के दिनों में तो अधिकांश समय उनका संसदीय मामलों

करने में ही लगता है। सरकारी भोजों, अतिथियों से मिलने में तथा कारी कामों में इन्दिरा को काफी समय देना होता है।

के विभिन्न स्थानों के दौरे भी इंदिरा को करने होते हैं। ये दौरे काफी नेवाले होते हैं। मिसाल के तौर पर उनका एक दिन का इस प्रकार था: सवेरे वे विमान द्वारा पटना गयीं; तब वहां र एक सार्वजनिक सभा में भाषण के लिए गयीं जहां पर ढाई करीब लोग उपस्थित थे। भोजन के लिए पटना लौटीं; वहां के साद चिकित्सा संस्थान में भाषण के लिए गयीं। नगर के दूसरे सिरे हजार कांग्रेसी कार्यकर्ताओं के समक्ष तब इन्दिरा ने भाषण दिया और क कांग्रेस के कार्यकर्ताओं के समक्ष एक छोटा-सा भाषण दिया। एक क सभा में लगभग पाँच लाख लोगों ने उनका भाषण सुना। बाईस प्रतिनिधिमंडलों से उन्होंने इसके बाद भेंट की। बिहार के राज्य-र मंत्रिमंडल के सदस्यों के साथ रात्रि भोज लेने के बाद उन्होंने ने से पहले दो घंटे तक कुछ जरूरी फाइलों को निपटाया। अगले दिन तीन सार्वजननिक सभाओं में भाषण करने के लिए धूल-मिट्टी में कई ात्रा की। कभी खुली कार में खड़े होकर और तब गांधी विचारधारा रक विनोबा भावे से लम्बी बातचीत की।

देरा ज़ानती हैं भारत में कभी किसी चीज की कमी नहीं। कमी है तो ीति की है। नीतियों के अनुसार काम करने में बहुत ढिलाई आती है नको कुशलता और अच्छी तरह से पूरा नहीं किया जाता। उन्होंने कि राष्ट्रीय नीतियों और उनको लागू करने में काफी अंतर है। इस ो बड़ी हिम्मत से दूर किया जाना चाहिए।

न पैंसठ में पाकिस्तान ने कश्मीर पर जो आक्रमण किया था तो भारत बूरी में उसे रोकने के लिए पाक से युद्ध लड़ना पड़ा था। उसका देश थिक स्थिति पर काफी बुरा असर पड़ा था। इससे भारत में कृषि और कास योजनाओं के लिए धन राशि में कटौती करनी पड़ी थी। विकास की प्रगति धीमी हो गयी थी। अनेक बाहरी देशों ने ऋण बंद करने

की घोषणा की थी। साधनों के न होने पर औद्योगिक उत्पादन पर विपरीत असर पड़ा था। दुर्भाग्य की बात कि वर्षा भी उस वर्ष न हुई इसका परिणाम यह हुआ कि फसलें कम हुईं और खाद्यान्न की कमी के कार बहुत कठिनाई में से देश को गुजरना पड़ा।

इंदिरा द्वारा उत्तरदायित्व सँभालने के तुरंत बाद ही उन्हें केरल औ पश्चिम बंगाल में बिगड़ती खाद्य स्थिति को सँभालना था। इन क्षेत्रों अकाल की स्थिति पैदा होने का खतरा था। इन क्षेत्रों के लिए अनाज इकट्ठ करने और वितरण की भारी समस्या थी। आगामी फसल के लिए बीजों व तैयार करने और उनका वितरण करने की भी भारी समस्या थी।

इन सबका परिणाम हुआ कि चीजों की कीमतें तेजी से बढ़ने लगीं इससे लोगों में असंतोष फैलना स्वाभाविक ही था। अनेक चीजों की जिनक दैनिक जरूरत लोगों को थी, कमी के कारण माँग पूरी नहीं की जा सकत थी इसलिए उन चीजों में काला बाजार होता था। अनेक सरकारी कर्मचारियों ने काम-रोको हड़ताल करने की चेतावनी दी थी; यदि उनके वेतनों में वृद्धि नहीं की जाती। केरल में चावल का राशन किया गया और राशन की मात्रा पूरी देने के लिए भी चावल उपलब्ध नहीं था। इसका परिणाम हुआ वहाँ की जनता में भी गहरा असंतोष।

इंदिरा ने पद ग्रहण करते ही इन दोनों राज्यों में चावल पहुँचाया और लोगों को आश्वस्त किया कि स्थिति को पूरी तरह से सँभाल लिया जाएगा। वे स्वयं स्थिति का अध्ययन करने के लिए केरल गयीं। लोगों को यह आश्वासन भी उन्होंने दिया कि केन्द्र उनकी कठिनाइयों से भली प्रकार परिचित है और इस दिशा में पूरी मुस्तैदी से काम भी कर रहा है।

इंदिरा ने उस राज्य के लोगों को भी उत्साहित किया कि वे इस स्थिति का बड़ी हिम्मत से मुकाबला करें। उन्होंने लोगों को सलाह दी कि चावल की कमी देखते हुए वे अपने भोजन की आदतों में परिवर्तन करें और अन्य खाद्यान्नों का भी इस्तेमाल करना शुरू करें। उन्होंने अपने भोजन में चावल खाना बिल्कुल ही छोड़ दिया।

इंदिरा ने विदेशों से अनाज मंगवाने और बाद में खाद मंगवाने का कार्य-

क्रम तैयार किया। सूखे की स्थिति उड़ीसा में भी थी; इंदिरा ने व
भी दौरा किया। मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र की खाद्य स्थिति स
और उचित कारवाई करने के लिए भी इंदिरा ने इन प्रदेशों का दौरा
उन्होंने राज्य सरकारों को बड़ी सतर्कता और कुशलता से अनाज वित
कार्य करने की प्रेरणा दी। इसमें काफी हद तक सफल भी हुईं। उन्होंने
प्रधान खेती के लिए भी जोर दिया। सारे देश में लगभग सवा लाख
भावों पर अनाज बेचने वाली दूकानें खोली गयीं। देश के अधिकांश लो
अनाज ठीक भावों पर मिलना शुरू भी हो गया और सूखे के क्षत्रों में
सहायता योजनाएं चालू की गयीं और उनमें लाखों लोगों को काम दिए

इंदिरा ने जब प्रधानमंत्री पद ग्रहण किया तो उन दिनों मिजो स
ने उग्र रूप धारण किया हुआ था। पूर्वी भारत में इन लोगों में विद्रोह
हुआ था। उन लोगों ने सड़कें बंद कीं और भारत के सैनिकों की गश्ती
ड़ियों पर हमले बोले। जवाहरलाल ने बड़ी उदारता से इन लोगों को
सन दिया था कि भारतीय संविधान के अन्तर्गत उन्हें अधिक से अधिक
त्तता दी जायगी। परन्तु कुछ विदेशी शक्तियों से शह पाकर वे भारत क
शान करने में लगे हुए थे। वे लोग मिजो निवासियों से कह रहे थे कि
भारत से अलग पूरी तरह से स्वतंत्र कर दिया जाय। १९६६ के आरं
ही वहां पर विद्रोह भड़क उठा। इन्दिरा स्वयं मिजो क्षेत्र में गयीं।
उन लोगों को सैनिक कार्यवाई की धमकी देने के इंदिरा ने निजी अपील
लोगों से की। बाद में नागा समस्या को भी इदिरा ने बड़ी दृढ़ता और न
से हल करने का प्रयास किया।

इस प्रकार वर्षों से भारत के उत्तरं पश्चिमी भाग में सिख लोग अप
एक नए राज्य की मांग कर रहे थे। यह काफी विवाद का विषय बन
था। राजनैतिक स्थिति और वास्तविकता को इन्दिरा तुरंत ही भांप ले
उन्होंने प्रधानमंत्री बनने के कुछ सप्ताह भीतर ही पंजाबी सूबे की स्थाप
घोषणा कर दी। सिख तो इससे बहुत खुश हो गए परंतु हिंदू लोगोंको
बड़ा कष्ट हुआ। उन्होंने इसके विरोध में अनेक प्रदर्शनी भी किए। कुछ
की मौत पुलिस के गोलीकांड से हुई।

संसद में अपना कार्य चलाने के लिए श्रीमती गाँधी को अधिक कठिनाई नहीं थी। संसद के पाँच सौ से कुछ अधिक सदस्यों में से लगभग ३९२ कांग्रेस दल के सदस्य थे। इस कारण वहाँ पर अपनी इच्छानुसार विधेयक पास करवाने में अधिक दिक्कत इंदिरा गाँधी को नहीं होती थी।

इन्दिरा को शीघ्र ही फिर बड़े महत्वपूर्ण निर्णय लेने पड़े। खाद्यान्न की कमी से सरकार की परेशानी बढ़ी। कीमतों में और अधिक वृद्धि होती गयी। इस पर खाद के कारखाने खोले गए। इनको लेकर भी संसद में काफी हंगामा मचा। गोहत्या निरोध आंदोलन पुनः जारी हुआ और इस पर गोलीकांड हुआ। इस घटना को लेकर काफी शोर हुआ। रुपए का भी अवमूल्वन कर दिया गया। इन सब घटनाओं से लोग कहने लगे कि अपने पिता के समान इन्दिरा अपने काम को खूबी से संभाल नहीं सकी। संसद में जवाहरलाल का व्यक्तित्व सब पर हावी रहता था। वे जो कुछ करना चाहते थे वह करवा लेते। यही नहीं हर सभा में उनका ही प्रभुत्व रहता था। वह संसदीय मामलों में अनुभवी थे। बहसों का जवाब बड़े अधिकार और बड़ी कुशलता से दिया करते थे।

इंदिरा को संसदीय कार्य प्रणाली का अधिक अनुभव नहीं था। शुरू में तो वे कुछ अनिश्चित सी लगती थीं। परन्तु उनके कामों से यह पता चल रहा था कि वे अपने विश्वासों के अनुसार बड़ी हिम्मत और साहस से काम कर रही हैं। कुछ समय बीतने पर इंदिरा आत्मविश्वास में भर उठीं। आवश्यक होने पर वे भली प्रकार उत्तर अपने विरोधियों को दे पाती थीं। उसके समर्थक भी आश्वस्त हुए कि इन्दिरा देश की शासन की बागडोर को अपने हाथों में अच्छी तरह से संभाल लेंगी।

इन्दिरा को शायद सबसे बड़ी कठिनाई तो यह थी कि कांग्रेस दल के सदस्यों में आपस में कोई एकता न थी। उनके कुछ साथी कल्पना विहीन थे। उनको यह पता नहीं लग पा रहा था कि देश को इस समय किस चीज़ की जरूरत है। उनके कुछ साथी व्यवहारकुशल भी थे। इससे भी उनकी दिक्कतें बढ़ती थीं। इंदिरा पर यह आरोप लगाया गया कि रुपए का अवमूल्यन करने और खाद संबंधी समझौते के बारे में कांग्रेस दल के साथियों से इन्दिरा ने

सलाह मशवरा नहीं किया। इन्दिरा की ओर से इस तर्क का उत्तर दिया गया कि वह भारत के प्रधानमंत्री पद पर हैं और इस नाते वह जो कुछ ठीक समझती थीं करने को स्वतंत्र थीं। जनता के सामने प्रस्तुत नीतियों के आधार पर कोई भी निर्णय लेने में उन्हें किसी प्रकार की रोक नहीं थी। उनका तर्क था कि जब तक वे इन नीतियों के अनुसार ही कोई निर्णय ले करके कार्य कर रही हैं उनके लिए यह आवश्यक नहीं कि वे किसी प्रकार की सलाह अपने दल के लोगों से लें। कांग्रेस के अध्यक्ष श्री कामकाज को प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी के कुछ निर्णयों से बड़ी निराशा हुई थी। प्रधानमंत्री और कांग्रेस अध्यक्ष के आपसी संबंधों के बारे में जब उनसे कुछ प्रश्न पूछे गए तो अपने सिर को हाथों से पीटते हुए उन्होंने कहा था : "मैं तो छोटा सा आदमी हूँ जिसने बड़ी भारी गलती की।" इस प्रकार इन्दिरा को कांग्रेस दल का नेता बनवाने में जो सहायता उन्होंने की थी उसको बड़े नाटकीय ढंग से वे व्यक्त कर रहे थे।

बम्बई में अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति के अधिवेशन में कड़वी आलोचनाओं का सामना करना पड़ा। खाद के कारखानों के बारे में अमेरिका से किए समझौतों पर लोगों ने घोर विरोध जाहिर किया। अमेरिका के शिक्षा संस्थान खोले जाने पर भी वही आपत्ति सदस्यों ने व्यक्त की। उन्होंने इन्दिरा पर आरोप लगाया कि उसने अमेरिका से ऐसे सहायता स्वीकार की है जिसके साथ राजनीतिक शर्तें लगी हैं। इंदिरा इन आलोचनाओं का करारा उत्तर दिया और कहा कि वे आधारहीन हैं। इन्दिरा ने चौथी योजना में अमेरिका की पूंजी लगाने के लिए प्रोत्साहन देने के निश्चय पर अटल रहीं। अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हुए इन्दिरा ने अपने साथियों को यह साफ कह दिया कि यदि वे लोग उसके कार्यों से सहमत नहीं तो वह त्यागपत्र देने को भी तैयार हैं। संघर्ष में तो सदा ही इंदिरा की तेजस्विता प्रकट होती ही है। उन्होंने कोई चिकनी-चुपड़ी बातें नहीं कीं। अखिल भारतीय कांग्रेस महासमिति के अधिवेशन में इन्दिरा के वक्तव्य से सनसनी फैल गयी।

इन्दिरा के यद्यपि कांग्रेस के नेताओं से काफी मतभेद थे परन्तु जनता का आकर्षण केन्द्र तो वही थीं। किसी अन्य नेता की तुलना में देश की जनता इन्दिरा को सुनने के लिए कहीं अधिक संख्या में उमड़ आती थी। इंदिरा की

निरंतर ही आलोचना की जा रही थी। विरोधी दलों के नेता हड़तालें करवा और वाकआउट करवाकर इन्दिरा के प्रशासन को तंग कर रहे थे परन्तु इसके बावजूद साधारण जनता में नेहरू की बेटी के प्रति मन में प्यार था। इंदिरा ने भी स्वतंत्रता संग्राम में संघर्ष किया था। गांधी नेहरू और शास्त्री की परंपरा में ही वह थी। इंदिरा ने बिना किसी अपने स्वार्थ की भावना से सेवा करने का फैसला किया हुआ था। देश के हित में उसने अनेकों बलिदान किएथे। इन्दिरा जहां कहीं भी जाती उसके प्रति सम्मान व्यक्त करने के लिए हजारों लोग उमड़ पड़ते। वे फूलों की वर्षा कर उसके प्रति अपना सम्मान व्यक्त करते।

इन्दिरा अन्य देशों और भारत में मैत्री स्थापित करने को उत्सुक हैं। अमेरिका के प्रति भी इंदिरा के मन में कोई कटुता नहीं है और अनेक बार वह वहाँ पर गयी भी हैं। यूरोप और एशिया के देशों में भी इन्दिरा ने दौरे किए हैं। अनेक देशों के राजनेताओं से व्यक्तिगत जान-पहचान उनकी है। प्रधान मंत्री बनने के दो मास बाद इन्दिरा ने अमेरिका का दौरा किया। दोनों देशों में मैत्री संबधों को बढ़ाना ही इस दौरे का मुख्य उद्देश्य था। वहाँ पर जाते समय फ्रांस के राष्ट्रपति दीगाल से भी उन्होंने मुलाकात की। लौटती बार वह ब्रिटेन के प्रधानमंत्री श्री हैरल्ड विल्सन से और बाद में रूस के प्रधानमंत्री कोसीगिन से मिलीं। इन्दिरा के कुछ दक्षिणपंथी साथी चाहते थे कि रक्षा और आर्थिक कार्यक्रमों में भारत का झुकाव अमेरिका की ओर अधिक रहे; जबकि वामपंथी साथियों का प्रयास रहता कि भारत का अमेरिका आदि पूँजीपति प्रणाली वाले देश से अधिक सबंध न रखे। वे इस प्रकार के दौरों का भी विरोध करते थे। उनका आरोप था इस प्रकार भारत पर अमेरिका का राजनैतिक प्रभुत्व छा जायगा—परंतु इस प्रकार की कोई भी आलोचना सही नहीं थी। अपने पिता के समान ही इन्दिरा भी तटस्थता की नीति में विश्वास रखती थी। वह मानती थी कि भारत को सदा अन्य देशों के साथ मैत्री-भावना रखनी चाहिए। वह नहीं मानती थी कि सारा विश्व वाम और दक्षिण—इन दो वर्गों में बंटा हुआ है। मेरा मत है, "इन्दिरा का कहना है, इसमें से अधिकांश देश मध्य में हैं। भारत जैसे देश में पक्का आंतरिक मजबूती

की है और सामान्य जन को यह विश्वास दिलाने की है कि आप अर्थात् सरकार उनकी ओर है । इस कारण आपको यह तो कोशिश करनी होगी कि आप मध्य में ही रहें और अपने साथ अधिक से अधिक लोगों को लेकर चलने का प्रयास करें। रक्षा के अतिरिक्त जनता का आधारभूत रोटी, कपड़ा और मकान की आवश्यकताओं को पूरा करना हर हालत में जरूरी है। इन कारणों से भारत को मजबूर होकर अन्य देशों से आर्थिक सहायता लेने की जरूरत पड़ती थी। पूर्व और पश्चिम के अनेक देशों ने भारत को सामयिक और उदारता से ऋण दिया। अमेरिका से भारत ने जो ऋण प्राप्त किया है उतना और किसी देश से नहीं।"

अमेरिका यात्रा

भारत और अमेरिका के संबंधों में समय-समय पर गलतफहमियां पैदा होती रही हैं। अनेक बार कटुता भी पैदा होती रही है। प्रधानमंत्री गांधी के इस दौरे का प्रभाव यह पड़ा कि इन दोनों देशों में संबंध कुछ मधुर हुए। श्रीमती गांधी ने अपने दौरे में विश्व शान्ति के समर्थन में अपने विचार व्यक्त किए। भारत द्वारा निरंतर ऐसा करते रहने का विश्वास भी दिलाया। अमेरिका और भारत के मैत्री संबंधों के और भी घनिष्ठ होने की कामना उन्होंने की। विश्व शांति को उन्होंने इसलिए आवश्यक बताया कि भारत अपने लक्ष्यों की प्राप्ति केवल इस प्रकार के शांतिपूर्ण वातावरण में ही कर सकता है। इसको आदर्श के रूप में नहीं वरन् एक आवश्यकता के रूप में उन्होंने अनुभव किया। उनका कहना है कि हम चाहते हैं कि हमें शांति मिले ताकि हम लोग अपने देश को आत्मनिर्भर बना सकें और वहां की जनता को मुसीबतों से छुटकारा दिलवा सकें। मुख्य उद्देश्य प्रधानमंत्री की यात्रा का था कि वे इन दोनों देशों में मैत्री संबंधों को अधिक सुदृढ़ बनाएं। उनका विश्वास था कि इस तरह से ही इन देशों के जन साधारण और मानवता का भला हो सकता है। एक देश के पास इतना तकनीकी ज्ञान था कि मानव इतिहास में उसकी कोई मिसाल नहीं थी और दूसरे देश के पास इतनी सांस्कृतिक [illegible] आध्यात्मिक संपत्ति थी कि अंततः उसके ज्ञान पर ही [illegible]

होना था। भारत को अमेरिका की और अमेरिका को भारत की जरूरत है। इस दौरे में राष्ट्रपति जानसन ने यह प्रस्ताव रखा, कि भारत में एक फाउंडेशन स्थापित की जाय जो वैज्ञानिक अध्ययन को बढ़ावा देवे। अमेरिका से मिलने के अतिरिक्त श्रीमती इंदिरा गाँधी ने वाशिंगटन के प्रेस क्लब में संवाद दाता सम्मेलन में भाग लिया। टेलीविजन पर उन्होंने समीक्षकों से भेंट की। उसके बाद राष्ट्रपति जानसन के स्वागत में एक समारोह का आयोजन किया गया। उन्होंने वहाँ पर अमेरिका के प्रमुख व्यापारियों तथा राजनीतिज्ञों से भी बातचीत की। वह २८ मार्च से पहली अप्रैल तक वहीं रहीं।

भारत अमेरिका के मैत्री संबंधों के बारे में श्रीमती गाँधी का कहना है कि यह मैत्री कोई नई बात नहीं। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में भारतवासियों को अमेरिका के लोगों द्वारा अपने को उपनिवेशवाद से मुक्त करवाने के लिए संघर्ष से बड़ी प्रेरणा मिलती थी। विशेषकर राष्ट्रपति रूजवैल्ट ने भारत के स्वतंत्रता संघर्ष के दिनों में जो नैतिक सहायता की भारतवासियों को वह सदा याद रहेगी। परन्तु अमेरिका के लोगों को और विशेष रूप से राष्ट्रपति जानसन को कुछ कड़वाहट भी इस बात से हुई कि श्रीमती इन्दिरा गांधी ने वियतनाम में अमेरिकी बमवर्षा के विरोध में विचार व्यक्त किए थे। अनेक पत्रों में यह भी कहा गया कि भारत को चाहिए कि समाजवादी ढाँचे से जो उसने अपना भाग्य जोड़ रखा है उसे वह त्याग देवे और निर्बाध व्यापार की अमेरिका प्रणाली अपनाए। परंतु कुल मिलाकर भारत और अमेरिका के बीच मैत्री संबंधों का सुधार ही श्रीमती इन्दिरा गांधी के इस दौरे के बाद हुआ।

प्रधानमंत्री के अमेरिका से प्रस्थान होने के साथ ही वहाँ के प्रशासनिक क्षेत्रों में इस बात की कटु आलोचना की जाने लगी कि श्रीमती इन्दिरा गांधी निरंतर ही वियतनाम के मामले को लेकर उनकी आलोचना कर रही हैं तथा वहाँ पर बमबारी बंद करने का सुझाव दे रही हैं। राष्ट्रपति जानसन को भी इससे बड़ा खेद हुआ। उनका कहना था कि जिस देश को अमेरिकी प्रशासन इतनी सहायता देता है वही देश हमारी इस प्रकार कटु आलोचना करे यह शोभाजनक नहीं। राष्ट्रपति जानसन को इस बात पर भी चोट पहुँची थी कि वे उन दिनों ही युगोस्लाविया के राष्ट्रपति टीटो और मिश्र के राष्ट्र-

पति नासर के सम्मेलन का आयोजन नयी दिल्ली में कर रही थीं जब कि वे मनीला में वियतनाम युद्ध में अमेरिका के साथ सहायता करने वाले देशों का सम्मेलन आयोजित कर अमेरिका की नीति और लक्ष्य स्पष्ट कर रहे थे। इन्दिरा द्वारा इस सम्मेलन के आयोजन का परिणाम यह हुआ कि दुनिया के बहुत से देशों का ध्यान मनीला सम्मेलन से हट गया। वह बात उतने प्रमुख रूप से दूसरे देशों के लोगों तक नहीं पहुँच सकी। इन बातों का परिणाम यह हुआ कि भारत में सूखा पीड़ित क्षेत्रों की सहायता के लिए जो बीस लाख टन अनाज जहाज से भेजा जा रहा था उसे रोक दिया गया। अधिकृत रूप से तो अमेरिका के विदेश विभाग ने यही कहा कि भारत ने कृषि के क्षेत्र में जो प्रयास किए हैं उनसे अमेरिकी विशेषज्ञों को संतोष नहीं। इस पर भारत के लोगों में काफी रोष पैदा हो गया।

प्रधानमंत्री इन्दिरा ने जब उत्तर वियतनाम पर बमवर्षा बंद करने का अनुरोध किया था तब से अब तक काफी समय बीत चुका है। यह स्पष्ट है कि श्रीमती गाँधी के ही निष्कर्ष ठीक थे। उन पर चलकर ही उत्तर वियतनाम समस्या का बेहतर हल निकाला जा सकता था। यदि उनकी बातों पर ध्यान दिया गया होता तो करोड़ों और अरबों रुपयों की जो राशि अमेरिका ने बमवर्षा

दोष लोगों को मृत्यु का ग्रास बनना पड़ा है
बमवर्षा को स्थगित करके ही अमेरिका वहाँ पर
ल करने के लिए वार्ता को शुरू कर सका।

तेरहवां अध्याय

इन्दिरा : दुबारा प्रधानमन्त्री बनीं

सन १९६७ में देश में चौथे आम चुनाव हुए। इन्दिरा को इन चुनावों में पार्टी को विजय दिलवाने का भार सम्भालना पड़ा; इन चुनावों के दौरान उन्होंने सारे भारत का दौरा किया और जनता को प्रेरित किया कि उसे पुनः सत्ता में ला करके देश के भविष्य निर्माण में सहयोग देवें।

इन्दिरा ने चुनाव आन्दोलन बड़ी कुशलता और उत्साह से पूरा किया। उन्होंने देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक लगातार यात्राएँ कीं। विमान, रेल, कार और सब तरह से दिन में अठारह-अठारह घण्टों तक उन्होंने यात्रा की। साथ ही सरकारी कामकाज को भी देखती रहीं।

उन दिनों कांग्रेस के लगातार शासन से लोगों ने उसके प्रति आस्था खो दी थी इसलिए इंदिरा को अनेक स्थानों पर अप्रिय घटनाओं को देखने का भी मौका मिला। कई जगह उनकी सभाओं में लोगों ने शरारतें कीं और गड़बड़ फैलानी शुरू की। परन्तु इंदिरा इन बाधाओं और विरोधों के प्रदर्शन से किसी तरह कभी हतोत्साहित नहीं हुईं।

मिसाल के तौर पर जयपुर उन दिनों स्वतंत्र पार्टी का गढ़ था। वहां पर सभा में इन्दिरा को काफी विरोधी प्रदर्शनों का सामना करना पड़ा। एक सभा में जब लोगों ने शोर मचाकर बाधा डालनी जारी रखी तो उन्होंने कहा : "मुझे मालूम है कि विरोधी दल क्या-क्या षड़यंत्र रच रहे हैं। आप लोगों के चीखने और चिल्लाने का कोई लाभ नहीं होने वाला। मैं इन सब बातों से घबराने वाली नहीं। मैं अपना भाषण समाप्त कर के ही रहूँगी।"

राजस्थान स्वतंत्र पार्टी का गढ़ था। वहां के ढाई करोड़ लोगों में कांग्रेस दल कमजोर इसलिए था कि नेताओं में आपसी मनमुटाव और झगड़े थे। महारानी गायत्री देवी इस दल की नेता थीं। उसके बाद जनसंघ की ताकत थी। विरोधी दलों का कहना था कि कांग्रेस दल तो स्वार्थी नेताओं से भरा है और उन लोगों को अपने हितों को छोड़कर और किसी चीज की चिंता नहीं। स्थान-स्थान पर जनता भी यही नारे लगाती थी कि ये सब नेता लोग

वोर हैं। लोगों में राजनीतिज्ञों के प्रति और साथ ही लोकतंत्र के प्रति आस्था कम होने लगी थी।

इंदिरा ने राजस्थान में दो दिन बिताए। उन्होंने २६ जिलों में से सात का दौरा किया था। प्रतिदिन लगभग पांच सभाओं में वे भाषण करती थीं। इसके अतिरिक्त मार्ग में भी बिना किसी पूर्व कार्यक्रम के अनेक स्थानों पर उनको रुकना पड़ता।

इन्दिरा बड़े सादे वेश में रहती हैं। आमतौर पर हाथ के सूत की बनी हुई खद्दर की साड़ी वे पहनती हैं। सामान्य भारतीय महिलाओं की भांति अपने सिर को ढांप कर के रखती हैं। इस दौरे के दौरान इन्दिरा गांधी ने बिना किसी प्रकार के नोट्स के ही भाषण किए। आमतौर पर उनकी सभाओं में पचास से साठ हजार के लगभग लोग होते हैं। जनता से वे यही कहती थीं: "हम चुनावों के बारे में चिंतित नहीं, उनमें तो हमें विजय मिलेगी ही।"

अनेक राज्यों में कांग्रेस पार्टी काफी लोकप्रियता खो चुकी थी। इन्दिरा को जनता की मनोभावना को पता लगाते देर नहीं लगी। कई स्थानों पर उनके अपमानित करने का प्रयास किया गया; तो इसे भी उन्होंने बिना किसी घबराहट के सहन किया। अनेक स्थानों पर तो स्थिति यह थी कि कांग्रेस का नाम लेते ही सर्वत्र यह आवाज आती : "ये सब चोर हैं।"

व्यक्तिगत रूप से लोगों को इंदिरा से किसी प्रकार की शिकायत नहीं थी। अनेक स्थानों पर जनता ने हिंसक प्रदर्शन किए। एक सभा में स्थिति इतनी बिगड़ गयी थी कि इंदिरा की नाक की हड्डी पर चोट आ गयी थी। वह उड़ीसा की राजधानी भुवनेश्वर में चुनाव आन्दोलन के सिलसिले में भाषण करने के लिए गयी थीं। इंदिरा जब मंच पर आयीं तो वहां के विरोधी दल के समर्थक छात्रों ने नारे लगाने शुरू कर दिए : "इन्दिरा लौट जाओ, इन्दिरा लौट जाओ।" परन्तु प्रधानमन्त्री इन्दिरा ने इसकी परवाह न करते हुए अपने भाषण को जारी रखा। जब वे बोल चुकीं तो उनकी कांग्रेस पार्टी के एक नेता ने अपना भाषण शुरू किया। इस पर नारे लगाती जनता ने मंच पर पत्थर फेंकने शुरू कर दिए। इन्दिरा उनसे को पर बोलीं : "क्या आप ऐसे ढंगाइयों को वोट देंगे रखते और दूसरे के विचारों को सुनने की क्ष

की वर्षा होती रही इंदिरा की नाक पर चोट लगी। नाक से खून पोंछते हुए इन्दिरा ने कहा : "मुझे कांग्रेस पार्टी की चुनावों में सफलता की चिंता नहीं, मुझे तो आप और इस देश में लोकतंत्र के भविष्य की चिन्ता है।" इन्दिरा ने लगभग दो मिनट तक बोलना जारी रखा और हाथ फैलाकर के अधिकारियों ने पत्थरों की वर्षा से इन्दिरा की रक्षा की। परन्तु जब उनकी नाक से खून बहना बन्द नहीं हुआ तो उन्होंने कुछ बरफ मंगवाने को कहा। परन्तु बरफ तो वहाँ पर मिल नहीं सकती थी। तब इन्दिरा ने अपने हैंडबैग में से रूमाल निकाला और उससे अपनी नाक पर लगा खून साफ किया। जवाहर की बेटी ने अपने पिता के समान ही साहस का प्रदर्शन किया था। पत्थरों की वर्षा में ही प्रधानमन्त्री को सभा स्थल से बाहर ले जाया गया। गवर्नर की कार में बैठकर के वे उनके निवास स्थान पर गयीं। वहाँ पर प्राथमिक चिकित्सा की गयी। उनके नाक की दाहिनी ओर कुछ चोट लगी थी। बांयी ओर के होंठ के ऊपर भी कुछ खरोंच आयी थी। एक दांत भी उनका हिल गया था। इसके तुरन्त बाद इन्दिरा ने अपना कार्यक्रम पुनः चालू करने का इरादा जाहिर किया। परन्तु डाक्टरों ने इस बात पर जोर दिया कि वे कुछ दिन तक अस्पताल में भरती होकर विश्राम करें। तब वे नयी दिल्ली के अस्पताल में भरती होने के लिए लौट आयीं। दिल्ली के विलिंगडन अस्पताल में वे भरती हुई दो दिन वहाँ पर चिकित्सा करवाने के बाद वे स्वस्थ होकर के लौटीं। जब वे अस्पताल से मुक्त हुईं जनता के हजारों लोगों ने वहाँ पर पहुँचकर इन्दिरा जिंदाबाद के नारे लगाए। आगामी कुछ दिन तक उन्होंने फिर आराम किया।

विरोधी दलों के द्वारा इस प्रकार की हिंसक घटनाओं के बावजूद कांग्रेस पार्टी ने इन्दिरा के नेतृत्व में पुनः सफलता प्राप्त कर ली। कांग्रेस का संसद में बहुमत काफी कम हो गया था। इन्दिरा स्वयं रायबरेली से जीतीं। वहाँ पर उन्होंने अपने विरोधी को भारी वोटों से हराया। कुछ सीमा तक पत्थर फेंकने की घटना ने भी लोगों के मन और दिमाग पर उल्टा प्रभाव डाला। कांग्रेस को काफी मत लोगों ने इस घटना से प्रभावित होकर दिए होंगे।

चुनावों में जब इस प्रकार की गुंडागर्दी उभरने लगती है तो विचारशील लोगों के मन परेशान हो जाते हैं। इस देश में लोकतंत्र के सामने आता खतरा वह देखने लगते हैं। लोकतंत्री देश में विरोधी दल मतदान के माध्यम से सदा

ही अपने पक्ष की सरकार लोगों के सामने ला सकते है। केरल में १९५७ के आरम्भ में कम्युनिस्टों ने इस तरीके से सत्ता पर नियंत्रण पा लिया था। परन्तु किसी व्यक्ति पर इस प्रकार से हिंसा करना तो कोई भी उचित नहीं ठहरा सकता।

इन चुनावों में कांग्रेस के कई पुराने स्तम्भ गिर गए। कांग्रेस का तिगुटा था : अतुल्य घोष, कामराज और एस० के० पाटिल। ये लोग अपने-अपने चुनावों में बुरी तरह से पराजित हुए; परन्तु मोरारजी देसाई और श्रीमती गांधी जैसे कुछ नेता पहले से भी अधिक बहुमत से चुन कर आए। इन चुनावों से स्पष्ट हो गया कि नेहरू का वह युग समाप्त हो गया जिसमें उनका नाम-मात्र से ही जनता अपने वोट इन प्रतिनिधियों को दे दिया करती थी।

इन्दिरा को इन चुनावों के बाद दुबारा प्रधानमन्त्री पद पर १२ मार्च १९६७ को चुन लिया गया। उनके नाम का प्रस्ताव रखा गया श्री मोरारजी देसाई के द्वारा और उसका अनुमोदन किया श्री जगजीवनराम ने। मोरारजी देसाई और कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज ने इस अवसर पर अपने भाषणों में कहा कि देश में इस समय सबसे बड़ी आवश्यकता है एकता स्थापित करने की। आरम्भ में तो मोरारजी ने इस बार भी चुनाव लड़ने का संकल्प किया था परन्तु एक समझौता हुआ जिसके अनुसार श्री मोरारजी देसाई को उपप्रधानमन्त्री पद दिया गया। उन्होंने भी अपने नेता के प्रति वफादारी निबाहने का आश्वासन दिया। उन्होंने कहा कि देश के सामने जो आपात् स्थिति है उसे देखते हुए प्रत्येक व्यक्ति को अपना कर्तव्य निबाहना चाहिए और देश हित का सबसे अधिक ध्यान रखना चाहिए। श्रीमती इन्दिरा गांधी ने भी कामराज और मोरारजी देसाई को धन्यवाद दिया और दल में एकता बनाए रखने की अपील की।

मार्च में प्रधानमन्त्री के चुनाव के बाद राष्ट्रपति का चुनाव मुख्य अवसर था; जिसमें फिर सब विरोधी दलों और कांग्रेस को अपनी ताकत का मुकाबला करने का अवसर मिला। विरोधी दलों ने भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश कोका सुब्बाराव को अपना उम्मीदवार बनाया परन्तु डाक्टर जाकिर हुसैन जो इससे पहले उपराष्ट्रपति थे उन्होंने कांग्रेस के प्रत्याशी के रूप में विजय प्राप्त की।

चौदहवां अध्याय

महंतों से टकराव

श्रीमती इंदिरा गांधी जब दुबारा प्रधानमंत्री बनीं तो संसद में कांग्रेस
पहले जैसा विशाल बहुमत नहीं रह गया था। कांग्रेस ने १९५७ के
नावों में ३७१ स्थान संसद में प्राप्त किए थे। परन्तु १९६२ में इन स्थानों
संख्या घट करके ३५८ ही रह गयी थी। १९६७ तक जब इंदिरा के
तृत्व में कांग्रेस ने चुनाव लड़े तो वह केवल २७९ स्थान ही प्राप्त कर
की।

इसका स्पष्ट कारण तो यह था कि कांग्रेस में जनता का विश्वास
टता जा रहा था। स्वतंत्रता प्राप्त किए बीस वर्ष का लम्बा समय गुजर
का था मगर देश के जनसाधारण की आर्थिक स्थिति बिगड़ी ही हुई
। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जिस समृद्धिमय जीवन की कल्पना लोगों को
ी वह उनको प्राप्त नहीं हो रहा था। बेरोजगारी और मंहगाई में निरंतर
ढ़ोतरी होती जा रही थी। इस लम्बी अवधि में कोरे आश्वासन सुनते-सुनते
ोग तंग आ चुके थे।

परन्तु देश का राजनैतिक ढांचा पहले की तरह ही था। स्वतंत्रता
ग्राम में जिन लोगों ने भाग लिया था वे लोग काफी वर्षों से सत्ता में बैठे
ए जनता से अपना संपर्क तोड़ चुके थे। उनकी भावनाओं तथा आकांक्षाओं
ी उपेक्षा वे करने लगे थे। उनको अधिक चिन्ता तो यही थी कि किसी
कार वे अपने पद पर बने रहें। त्याग बलिदान की बातें बीते जमाने की हो
की थीं।

नेहरू जब तक जीवित थे, लोगों को उन पर विश्वास बना हुआ था।
नता यह समझती और विश्वास करती थी कि उनका प्रिय नेता नेहरू

उनके कल्याण के प्रयासों में लगा है। अनेक तरह की कठिनाईयों को सहते हुए भी नेहरू के प्रति उनकी आस्था पूर्ववत बनी हुई थी। परन्तु नेहरू के स्वर्गवासी हो जाने के बाद जनता में व्याकुलता आ गयी थी। वह अब केवल नारों पर ही विश्वास नहीं कर सकती थी। अपनी दुरावस्था के सुधार के लिए क्रान्तिकारी कदम चाहती थी। परन्तु कांग्रेस मे अभी तक पुराने महंतों का प्रभाव था। वे लोग किसी भी नए कदम को उठाने की मनःस्थिति में नहीं थे। कांग्रेस में युवा तुर्कों का एक वर्ग पैदा हो गया था। वह पुराने नेताओं की समाजवादी और आर्थिक नीतियों से सतुष्ट नहीं थे। यह वर्ग चाहता था कि कुछ क्रान्तिकारी कदम इस दिशा में उठाए जायं।

इंदिरा ने जबसे प्रधानमंत्री पद सम्भाला था उन्होंने वर्तमान आर्थिक नीतियों से असंतुष्ट लोगों की बातों पर ध्यान दिया था। वे निरन्तर ही आर्थिक नीतियों में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की दिशा में कार्य करती रहती थीं।

उन्होंने अपने प्रधानमंत्री पद पर आने के बाद पुराने नेताओं की मरजी के विपरीत रुपए का अवमूल्यन जैसे क्रान्तिकारी कदम भी उठाए थे। बैंकों का राष्ट्रीयकरण भी वह सोच रही थीं। इससे एक ओर तो इन पुराने राजनेताओं ने अपने को अपमानित इस दृष्टि से समझा कि उनकी बात पर उचित ध्यान नहीं दिया गया दूसरी ओर वे लोग इस प्रकार के आर्थिक परिवर्तनों के अनुकूल अपने को तुरन्त ढाल नहीं पाए।

इसका अनिवार्य परिणाम था कि कांग्रेस संगठन के भीतर ही भीतर आपस में मतभेद पैदा होने लगे। इसका नतीजा यह भी हुआ कि इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री न रहें इस मत के भी कई लोग हो गए। वे चाहने लगे कि इंदिरा के स्थान पर देश की नौका की पतवार कोई और अपने हाथों में लेवे।

केवल नारों से ही काम नहीं चलने वाला। न केवल प्रस्तावों को पास कर देना ही पर्याप्त है। इस अधिवेशन के बाद एक राजनैतिक उथल पुथल मची जिसके दूरगामी परिणाम हुए।

बंगलौर की कांग्रेस महासमिति की ऐतिहासिक बैठक में कुछ समय के लिए प्रधानमंत्री इन्दिरा गाँधी ने अपना जाना स्थगित कर वहां पर एकत्र दल के बड़े दिग्गजों को एक छोटा सा नोट भेजकर चौंका दिया था। इसमें उन्होंने दलीय नेताओं द्वारा आर्थिक नीतियों के बारे में जो मसौदा प्रस्तुत किया जा रहा था उसका एक विकल्प प्रस्तुत किया था; अन्य सुझावों के अतिरिक्त इस दलीय प्रस्ताव में यह सुझाव था कि गांधी शताब्दि (१९६९) को ध्यान में रखते हुए देश के जिन भागों में पेय जल की अभी तक व्यवस्था नहीं वहां पर इसकी व्यवस्था करवायी जाय।

राष्ट्रपति जाकिर हुसैन की मृत्यु कुछ समय पहले ही हुई थी और नए राष्ट्रपति का चुनाव अभी होना था। कांग्रेस दल में भी अभी यह निश्चय नहीं हो पाया था कि किसे यह पद दिया जाय। कांग्रेस महासमिति में यह सुझाव प्रस्तुत किया गया कि किसी हरिजन को ही यह पद दिया जाय। इस प्रसंग में केंद्रीय खाद्यमंत्री जगजीवनराम व भूतपूर्व कांग्रेसाध्यक्ष तथा आंध्र के श्री डी० संजीवैया का नाम लिया जा रहा था। परंतु इस बारे में कांग्रेसी नेता और विरोधी दल अभी तक कोई फैसला नहीं कर पाए थे।

बगलौर अधिवेशन के शुरू होने से पहले ही भूतपूर्व केन्द्रिय रेलमंत्री और कांग्रेस के पुराने नेता एस० के० पाटिल ने यह घोषणा की थी कि इस बारे में अंतिम निर्णय इस अधिवेशन में ही कर लिया जायगा।

कार्यसमिति की बैठक में इन्दिरा गाँधी ने अपनी आर्थिक नीति के विषय में जो पत्र भेजा था उसका विरोध हुआ। पर विरोध करने वालों में मुख्य थे मोरारजी देसाई और एस० के० पाटिल। यह उल्लेखनीय है कि कुछ समय पहले तक तो ये दोनों आपस में कट्टर विरोधी थे, परंतु सन् ६७ के आम चुनावों के बाद मोरारजी की सहमति के साथ गुजरात के बनासकांठा क्षेत्र से पाटिल चुनकर लोक सभा मे आए थे। मारारजी सन् ६७ के बाद वित्त विभाग लेकर केन्द्रिय मन्त्रिमंडल में उपप्रधानमंत्री के पद पर आसीन हो गए थे।

श्रीमती गांधी ने अपना परिपत्र भेजते हुए लिख भेजा था कि मैंने श्री चंद्रशेखर द्वारा तैयार आर्थिक नीतियों के संबंध में दिया ज्ञापन देखा है। मोरारजी देसाई पर इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। कारण यह कि फरीदाबाद अधिवेशन में आर्थिक नीतियों को लेकर चंद्रशेखर और उनके साथियों में मोरारजी में संघर्ष पैदा हो गया था। उन्होंने इस अधिवेशन में मोरारजी विरोधी अभियान चलाया था। चंद्रशेखर और उनके साथियों का कहना था कि मोरारजी दल की नीतियों को पूरी तरह से लागू नहीं करते और जो प्रस्ताव पारित किए जाते हैं उन पर सख्ती से अमल नहीं करते। राज्य सभा में भी श्री चंद्रशेखर ने मोरारजी पर इस तरह के आरोप लगाए थे। इस पर मोरारजी और उनके समर्थकों ने यह माँग की थी कि चंद्रशेखर के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की जाय। अंत में इस सारे मामले में कार्यसमिति की बैठक में विचार हुआ, यह फैसला किया गया कि दलीय मंच से बाहर अन्य कहीं भी दल के वरिष्ठ नेता की आलोचना न की जाय।

प्रधानमंत्री के इस परिपत्र को लेकर अनेक प्रकार की आशंकाएं पैदा हो गयीं। ऐसा प्रतीत होने लगा कि शायद कांग्रेस में फूट की प्रक्रिया शुरू हो गयी है। परंतु श्री चह्वाण के बीच बचाव करने पर कार्यसमिति में यह फैसला हुआ कि अविकृत प्रस्ताव के साथ प्रधानमंत्री द्वारा प्रेषित खत को भी विचारार्थ नत्थी कर दिया जाय। इस प्रकार दोनों पक्षों में समझौता हो गया महासमिति की बैठक में इस प्रस्ताव को रखने का भार श्री मोरारजी देसाई को सौंपा गया।

श्रीमती इन्दिरा गांधी ने आर्थिक कार्यक्रमों के बारे में जो परिपत्र भेजा था वह इस प्रकार का था कि कार्यकर्ताओं को कुछ लगता था कि वह व्यावहारिक है और उससे आर्थिक स्थिति को संभालने की दिशा में कुछ काम किया जा सकेगा। असल मे उस समय साधारण जनता और कांग्रेस महासमिति के कार्यकर्ताओं की मनःस्थिति इस प्रकार की थी कि वे लोग पालन न की जाने वाली घोषणाओं से ऊबे हुए थे।

उत्तर प्रदेश कांग्रेस महासमिति ने तथा अन्य बारह प्रदेश कांग्रेस महासमितियों ने इन्दिरा गांधी

दिया गया था उनकी सराहना की। इन लोगों ने बैंकों के राष्ट्रीयकरण की मांग का जोरदार समर्थन किया और कहा कि यदि सारे नहीं तो कम से कम दस बड़े बैंकों का तो राष्ट्रीयकरण कर ही लिया जाना चाहिये। कई लोगों ने यह मत भी व्यक्त किया कि श्रीमती इन्दिरा गांधी अलग पड गयी हैं। राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार को मनोनीत करने के प्रसंग में अपनी ताकत का जायजा वे इस परिपत्र पर हुई प्रतिक्रिया द्वारा लेना चाहती हैं।

कांग्रेस महासमिति के पहले दिन अधिवेशन में आर्थिक नीतियों सम्बन्धी बहस बड़े जोरों पर चली और बैंकों को राष्ट्रीयकरण के मामले को लेकर काफी गरमागरमी हुई। बैंक राष्ट्रीयकरण के विरोधी यह कह रहे थे कि समझौता इस बात पर हो जाना चाहिए कि सामाजिक नियन्त्रण को खूब कड़ा कर दिया जाए। तत्काल राष्ट्रीयकरण के विचार को त्याग देने बारे में जोरदार कोशिश की जा रही थी।

इस अधिवेशन में बाहर आर्थिक नीतियों को लेकर जोरों से बहस च रही थी और उधर कार्यसमिति की बैठकों में निरन्तर राष्ट्रपति पद उम्मीदवार के प्रश्न को लेकर संघर्ष जोर पकड़ रहा था।

राष्ट्रपति श्री जाकिर हुसैन की आकस्मिक मृत्यु ३ मई १९६९ हो गयी थी। तत्काल ही इस विषय पर चर्चा शुरू हो गयी थी उन उत्तराधिकारी कौन बने। वैसे यह परम्परा रही थी कि उपराष्ट्रपति को इस पद पर आसीन किया जाता था; इस दृष्टि से यह गौरवमय पद व० वी० गिरि को दिया जाना था। इससे पहले स्वयं जाकिर हुसैन त डाक्टर राधाकृष्णन दोनों उपराष्ट्रपति पद से राष्ट्रपति पद पर प्रतिष्ठि हुए थे।

परन्तु बंगलौर में कांग्रेस के संसदीय बोर्ड ने राष्ट्रपति पद के उम्म वार के रूप में लोकसभा के अध्यक्ष श्री संजीव रेड्डी के नाम का ! जुलाई की बैठक में फैसला किया। इस बैठक में श्री जगजीवनराम श्र संजीव रेड्डी के नामों पर मतदान हुआ था। बोर्ड में मतदान किस प्रक हुआ इसको न बताने की शपथ ली गयी थी परन्तु इसके बावजूद समाचार बाहर निकल आया। समाचार समितियों द्वारा प्रसारित कर दि

गया कि इसमें प्रधानमंत्री को दो और विरोधियों को चार मत मिले थे; इसी पर श्री जगजीवनराम का नाम अस्वीकृत हुआ था। इस प्रकार प्रधानमंत्री जो अभी इस प्रश्न को स्थगित करवाना चाहती थीं नहीं करवा सकीं। दूसरे जिस व्यक्ति के पक्ष में वह थीं उसको नहीं चुना गया। इस मतदान में श्री मोरारजी देसाई और श्री चह्वाण ने संजीव रेड्डी के पक्ष में और श्रीमती इन्दिरा गांधी के विरोध में मत व्यक्त किया था। इंदिरा गांधी इस सारी स्थिति को दरअसल टालना चाहती थीं। कारण वे इन लोगों से मोर्चा सैद्धान्तिक आधार पर लेना चाहती थीं।

श्रीमती गांधी इस सारे कांड पर अत्यन्त उत्तेजित हो उठी थीं। उन्होंने बोर्ड के सदस्यों को तत्काल ही गम्भीर परिणामों की चेतावनी दे डाली। उन्होंने घोषणा भी की कि मुझे व्यक्तिगत रूप से श्री रेड्डी से किसी प्रकार का विरोध नहीं परन्तु जिस प्रकार से यह निर्णय लिया गया है वह प्रधानमंत्री की पद प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं।

वैसे प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने इस मामले को उलझने से बचाने के लिए काफी प्रयास किया था। उन्होंने भूतपूर्व कांग्रेस अध्यक्ष श्री कामराज से इस पर विचार-विमर्श किया था; परन्तु उन्होंने यही कहा कि मैं श्री संजीव रेड्डी को समर्थन देने के लिए वचनबद्ध हूँ। श्रीमती गांधी ने उपप्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई और स्वराष्ट्र मंत्री श्री चह्वाण तथा अतुल्यघोष से भी वार्ता इस विषय पर की थी। परन्तु ये सब लोग अलग ही अपने में कोई फैसला कर चुके थे। वे किसी भी प्रकार से खुले मन से इस समस्या पर विचार करने को तैयार न थे। इस संदर्भ में इन्दिरा गांधी ने पहले श्री गिरि का नाम ही प्रस्तावित किया था परन्तु उनके विरुद्ध यह तर्क दिया गया कि उनकी आयु बहुत है। श्री गिरि ने इस खबर को सुनते ही यह संकल्प कर लिया था कि जो पद उनको मिलना चाहिए या उसके लिए अवश्य ही चुनाव लड़ेंगे। परन्तु तुरन्त ही घोषणा उन्होंने नहीं की थी। बंगलौर से जब श्री निजलिंगप्पा ने संजीव रेड्डी के नाम की घोषणा की उसके बाद ही श्री गिरि ने भी अपने उम्मीदवार बनने का संकल्प समाचार-पत्रों में प्रसारित करवा दिया।

राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी के नाम को लेकर श्रीमती गांधी को सफलता नहीं मिली थी। परन्तु बंगलौर महासमिति के अधिवेशन में जो प्रस्ताव आर्थिक नीतियों को लेकर हुआ था वह निश्चित ही उनके लिखे परिपत्र के अनुसार था।

इन्दिरा गांधी जब दिल्ली लौटीं तो सबके मन में यही था कि अब देखें वह क्या करती हैं। कई लोगों को यह आशंकाएं हो रही थीं कि क्या मंत्रिमंडल में संकट पैदा हो जायगा? विरोधी दलों को प्रतीत हो रहा था कि कांग्रेस में जो यह फूट पैदा हुई है उसका परिणाम होगा उसका विघटन। सत्ता अपने हाथों में आने की सम्भावना उन्हें बढ़ती नजर आ रही थी। परन्तु श्रीमती गांधी इस बारे में मौन ही रहीं। वे उस समय आगे क्या करना है इस बारे में योजनाएं बना रही थीं।

सामान्य राजनैतिक क्षेत्रों में श्री गिरि को प्रधान मंत्री की आर्थिक नीतियों के अनुरूप वामपंथी विचारधारा का और श्री रेड्डी को दक्षिणपंथी विचारधारा का प्रतिनिधि बताया जा रहा था।

प्रधानमंत्री ने इस संदर्भ में यह वक्तव्य दिया था कि क्योंकि प्रधानमंत्री को राष्ट्रपति के साथ मिलकर के काम करना होता है इसलिए सहमति से ही इस पद पर उम्मीदवार चुना जाना चाहिए। कुछ क्षेत्रों में यह प्रचार भी किया जाने लगा कि राष्ट्रपति पद के नाम को लेकर के जो मतभेद पैदा हुए हैं और श्रीमती इन्दिरा गाँधी को जो पराजय का मुख देखना पड़ा है उसके बाद उनको अपने पद को बचाना कठिन हो जायगा। उससे हटाए जाने की यह भूमिका है। यह अफवाह जोरों से फैल रही थी कि अब इन्दिरा कुछ ही दिनों की मेहमान है।

श्री चह्वाण ने श्रीमती इन्दिरा गांधी का जो साथ छोड़ा था उससे उनको काफी चोट भी पहुँची और हैरानी भी हुई। उन्होंने अपने मनोभावों को बंगलौर के अधिवेशन में व्यक्त भी कर दिया था। इससे यह धारणा पैदा हो गई थी कि वे श्री चह्वाण को मंत्रिमंडल से हटा देंगी और सिंडीकेट से समझौता करके श्री पाटिल को अपने मंत्रिमंडल में ले लेंगी।

परन्तु १६ जुलाई को एक अप्रत्याशित घटना घटी जिसकी कल्पना अथवा

पूर्वानुमान भी किसी ने नहीं लगाया था। प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने श्री मोरारजी देसाई को पत्र भेजकर कहा कि क्योंकि मैं समझती हूँ दल द्वारा पारित आर्थिक कार्यक्रमों को आप पूरी निष्ठा के साथ लागू नहीं कर सकेंगे इसलिए मैं वित्त विभाग आपसे ले रही हूँ। इससे सारे राजनैतिक वातावरण में सनसनी फैल गई।

इन्दिरा अपना निश्चय ले चुकी थीं; उन्होंने आर्थिक मोर्चे पर अपने प्रतिद्वंद्वियों का मुकाबला करने का फैसला किया था। उसी के अनुसार ही उन्होंने यह पहला कदम उठाया था।

इसकी बड़ी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा उस समय बंगलौर में थे। वे तुरन्त दिल्ली आये। श्री कामराज भी दिल्ली चले आये। मोरारजी पर इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। उन्होंने वित्त विभाग ले लेने से अपना घोर अपमान समझा और कहा कि मैं इस प्रकार अपमान सहकर मंत्रिमंडल में नहीं बना रहना चाहता। तुरन्त ही उन्होंने त्याग-पत्र भेज दिया। इस प्रकार तेजी से राजनैतिक घटनाक्रम आरम्भ हुआ। राजनैतिक वातावरण बहुत गरमा उठा। मंत्रीगण इस दुविधा में पड़ गए कि अब उनका रहना होता है या नहीं तथा उनकी स्थिति क्या बनेगी। कुछ लोगों में यह आशंका भी फैल गई कि प्रधानमंत्री का स्वयं अपना अस्तित्व खतरे में पड़ गया है; क्योंकि अन्य वरिष्ठ मंत्री श्री चह्वाण ने भी अपना त्याग-पत्र देने की धमकी दे दी है।

१६ जुलाई शनिवार को भारत की राजधानी दिल्ली में काफी गरमागरमी थी। मोरारजी देसाई के निवास स्थान पर कांग्रेस संसदीय बोर्ड के प्रमुख सदस्य विराजमान थे। वहाँ का वातावरण अत्यन्त गंभीर था परन्तु बंगलौर में श्री संजीव रेड्डी के पक्ष में मत देने वाले श्री चह्वाण इस गणना में नहीं आए। श्रीमती इन्दिरा गांधी ने श्री रेड्डी के राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार बनाए जाने की बात का ज़िक्र ही नहीं किया। इस पर श्री निजलिंगप्पा ने कहा कि श्रीमती गाँधी ने अनुशासन को मानते हुए उनके नाम को स्वीकार कर लिया है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि अन्य सब मतभेद भी तुरन्त ही

समाप्त हो जायेंगे और कांग्रेस में जो संकट आ खड़ा हुआ है वह भी समाप्त हो जायेगा।

परन्तु व्यापारिक क्षेत्रों में श्री देसाई को हटा लेने पर हलचल मच गई थी। वे लोग उनको ही इस पद पर चाहते थे। देश और विदेश के समाचार-पत्रों में कहा जाने लगा था कि यदि देसाई को हटाया गया और बैंकों का राष्ट्रीयकरण करके बंगलौर अधिवेशन में पारित अखिल भारतीय महासमिति के प्रस्तावों के अनुसार कार्य किया गया तो देश के अर्थतंत्र पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। उत्पादन में कमी होगी; विकास योजनाएँ खटाई में पड़ जाएँगी; विदेशी पूँजी का आगमन बंद हो जायगा और इसका प्रभाव देश की अर्थ-व्यवस्था पर बहुत बुरा पड़ेगा।

कांग्रेस संसदीय दल की बैठक आगामी शनिवार को होने वाली थी। उसमें ही मोरारजी के त्याग-पत्र के मामले को उठाया जाना था। तरह-तरह की अफवाहें चल रही थीं और यह कहा जा रहा था कि इस बैठक में शक्ति-परीक्षण इन्दिरा गुट और उनके विरोधियों में अवश्य होगा। इन्दिरा गांधी के समर्थक कह रहे थे कि उनको ७५ का बहुमत प्राप्त है और प्रतिपक्षी कह रहे थे कि वे लगभग सौ मतों से जीतेंगे। कुछ संसद सदस्य अभी तक बीच में ही बैठे थे; जिस तरफ पलड़ा भारी होता उसी तरफ उन्होंने जाना था।

कांग्रेस संसदीय दल के उप-नेता श्री विभूति मिश्र के नेतृत्व में कुछ संसद सदस्य प्रधानमंत्री से मिले और उनको चेतावनी दी कि कांग्रेस के उच्च नेतागण जल्दी से जल्दी अपने मतभेदों को भुला देवें और आपसी युद्ध को तथा मनमुटाव को खत्म करें नहीं तो हम लोग अपनी इच्छानुसार कोई कदम उठा लेंगे।

इस बीच इन्दिरा गांधी और कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा में विचार-विमर्श हो रहा था मोरारजी और इन्दिरा गांधी में भी एक घन्टे तक बातचीत चली थी; परन्तु इस पर किसी प्रकार का कोई फैसला न हो सका। इतने में कामराज भी मद्रास से दिल्ली आ पहुँचे थे। यह आशा थी कि प्रधानमन्त्री पर अपने प्रभाव का इस्तेमाल करके वे इस दिशा से कुछ हल निकाल सकेंगे। परन्तु इस पर भी कोई हल न निकला। यह अफवाह निरन्तर ही फैल रही थी

कि यदि श्री देसाई को वित्त नहीं सौंपा गया तो उनके अन्य साथी भी मंत्रि-मण्डल से त्यागपत्र देकर उनका साथ दे जाएंगे। मंत्रिमण्डल पर संकट के बादल छाए हुए थे। यह अफवाह भी फैली हुई थी कि श्री चह्वाण ने यह धमकी दी है कि यदि मोरारजी कोष्ठ विभाग वापस नहीं दिया गया तो वे अपना त्याग-पत्र दे देंगे। यह भी कहा जा रहा था कि मंत्रिमण्डलीय एकता के हित वे अपना स्वराष्ट्र मंत्रालय मोरारजी देसाई को को देने को तैयार हो गए हैं। यह याद रखने वाली बात है कि श्री चह्वाण ने सन् ६७ के चुनावों के बाद इस मंत्रालय को श्री मोरारजी को देने से इन्कार कर दिया था। तभी उनको वित्त मंत्रालय सौंपा गया था। परन्तु श्री चह्वाण ने अपना त्यागपत्र न दिया। वे इसके विपरीत दोनों ही पक्षों में समझौता कराने का प्रयास करने लगे थे। उन्होंने महाराष्ट्र के मुख्यमन्त्री श्री साठे को भी तुरन्त ही बम्बई से दिल्ली आने को कहा।

समझौते के प्रयास १६ जुलाई बुधवार के दिन से ही शुरू कर दिए गए थे जबकि श्री देसाई ने अपना त्यागपत्र दिया था। श्री चह्वाण ने इस त्याग-पत्र पर श्रीमती इन्दिरा गांधी को कहा था कि वे श्री देसाई को अपना त्यागपत्र वापस लेने को कहें। इस बात को स्वीकार श्रीमती गांधी ने उनको यह बात लिखी भी थी कि वे इस त्याग पत्र पर पुनर्विचार करें।

परन्तु मोरारजी इस पत्र से पहले ही सरकारी तौर पर कह चुके थे कि मैं अपना त्यागपत्र लेने के लिए किसी भी हालत में तैयार नहीं हूँ। उनकी शिकायत थी कि प्रधानमन्त्री ने इस महत्वपूर्ण मसले को उठाने से पहले मेरे से सलाह तक नहीं ली और न ही केबिनेट कमेटियों के गठित प्रस्तावों पर अमल करने का मौका ही मुझे दिया है। उन्होंने कहा कि इस कार्य से यह प्रतीत होता है कि प्रधानमन्त्री को मुझ पर अविश्वास है और इस तरह उनके आत्म-सम्मान को चोट लगी है। श्री मोरारजी ने अपनी यह स्वीकार किया कि वित्त विभाग लेने का अधिकार प्रधानमन्त्री को है और इस पर कोई आपत्ति भी उनको नहीं। वह उसे प्रधानमन्त्री का बुनियादी अधिकार मानते हैं कि किसको क्या विभाग दिया जाय। प्रधानमन्त्री के इस विशेष अधिकार को श्री निजलिंगप्पा आदि अन्य नेताओं ने भी स्वीकार किया था पर यह कहा था

कहते थे कि यह तरीका गलत था जिससे इस काम को किया गया है। परन्तु इस भूल सुधार के लिए कांग्रेस दल प्रधानमन्त्री को किसी प्रकार का निर्देश भी नहीं दे सकता था। अपील की जा सकती थी और ऐसा ही श्री निजलिंगप्पा कर भी रहे थे। परन्तु इस बात को मान लेने का यह नतीजा भी होता था कि प्रधानमन्त्री के पद की प्रतिष्ठा कुछ घटती इसलिए वे ऐसा करने को तैयार नहीं थीं। तीन दिन तक गतिरोध चला। यह अफवाह भी फैल रही थी कि श्रीमती इन्दिरा गांधी इस संकट से जनता का ध्यान हटाने के लिए बैंकों का राष्ट्रीयकरण तुरन्त कर देंगी। इसका परिणाम था कि व्यापारिक क्षेत्रों में काफी तनाव था। काफी घबराहट की भावना भी थी। रिजर्व बैंक के गवर्नर श्री एल० के० झा को उन्होंने दिल्ली बुलाया था और वित्त मंत्रालय के सचिव श्री टी० पी० सिंह से भी उन्होंने काफी विचार विमर्श किया था इससे अनुमान लगाया जाने लगा था कि राष्ट्रीयकरण में अब अधिक देर नहीं। व्यापारिक वर्गों का एक प्रतिनिधि मण्डल इस बारे में प्रधानमन्त्री से मिलने भी गया। उसने यह जानकारी मांगी कि इस बारे में सरकार की नीति क्या है। मंत्रालय के अधिकारियों ने इस अफवाह को पूरी तरह से निराधार बताया।

व्यापारी इससे संतुष्ट नहीं हुए। उन्हें आशंका थी कि श्रीमती इन्दिरा गांधी अवश्य ही कोई बड़ा कदम उठाएंगी। शेयरों के भावों में काफी उथल-पुथल मच गयी थी; अखबारों में भी यह प्रचार किया जाने लगा था कि इन्दिरा गांधी को न हटाया जाना देश के लिए बड़ा ही खतरनाक है और इसके दूरगामी परिणाम होंगे। दक्षिणपंथी जनसंघ के नेता इन्दिरा गांधी के इस कदम से असंतुष्ट थे; वे कह रहे थे कि इससे उनकी प्रतिष्ठा गिरी है और उनके कार्यक्रमों के लागू होने से देश में कम्युनिज्म को बल मिलेगा। भूपेश गुप्त, हीरेन मुखर्जी और डांगे आदि वामपंथी नेता इन कदमों को अत्यंत साहस-पूर्ण बतला रहे थे। उन्होंने सभी वामपंथी तत्त्वों को श्रीमती इन्दिरा गांधी के समर्थन में एक हो जाने का आह्वान किया था।

कुछ लोग यह भी कह रहे थे कि असल में यह नीतियों और विचारधाराओं का टकराव नहीं यह तो व्यक्तियों का टकराव है। संसदीय बोर्ड ने इन्दिरा गांधी की सहमति से विरुद्ध श्री संजीव रेड्डी को राष्ट्रपति पद का कांग्रेसी

प्रत्याशी बना दिया उसी के कारण यह स्थिति पैदा हुई है। श्री गिरि ने अपना खड़े होने का जो निश्चय किया उससे सारी स्थिति बहुत गंभीर हो गयी।

इन राजनीतिक घटनाओं ने राष्ट्रपति के चुनाव में इस बार निर्वाचक मंडल में बड़ी दिलचस्पी पैदा कर दी थी। अनेक लोग गिरि के प्रति अधिक उत्साह नहीं रखते थे। संजीव रेड्डी के प्रत्याशी के रूप में आते ही उनके समर्थन में कान करने लगे।

रेड्डी के समर्थकों को भी यह आभास हो गया था कि गिरि के होने से मुकाबला काफी सख्त हो गया है। जब ये घटनाएं हो रही थीं तो राष्ट्रपति के मतदान को लगभग २७ दिन शेष थे। इसलिए सिंडीकेट के मोरारजी के समर्थक यह कह रहे थे कि राष्ट्रपति का चुनाव होने तक उनको केन्द्रीय मंत्रि मंडल में बना रहना चाहिए। परन्तु साथ ही मोरारजी इसे मानने को तैयार नहीं थे। समाचार-पत्रों में श्री देसाई के पक्ष में खूब प्रचार रहा था। वे भी यह कह रहे थे कि राष्ट्रपति के चुनाव के बाद इस बारे में स्थिति कुछ स्पष्ट होगी। उनके अनुसार इन्दिरा गांधी कुछ दिन की ही मेहमान थीं।

यह प्रचार भी बड़े जोरों से किया गया कि इन्दिरा वामपंथियों के साथ मिलकर सरकार बना लेंगी और इस क्रम में श्री मोरारजी को सबसे पहले वित्त विभाग से अलग किया गया है। यह भी कहा जाने लगा कि यदि श्री गिरि राष्ट्रपति बन गए तो सरकार के टूटने की स्थिति में वह श्रीमती इन्दिरा गांधी का साथ देंगे। इसके विपरीत यदि संजीव रेड्डी राष्ट्रपति बन गए तो इन्दिरा गांधी को प्रधानमन्त्री पद पर बना रहना कठिन हो जायेगा। वे इन्दिरा की हर योजना को विफल कर देंगे।

पिछले बंगलौर अधिवेशन के बाद तीन महत्वपूर्ण घटनाएँ जिनसे कि सारे देश का भविष्य बनना था राजनीतिक क्षितिज पर घट चुकी थीं। सबसे आकस्मिक कदम जो इन्दिरा गांधी ने उठाया था वह था बंगलौर अधिवेशन में अपना जाना स्थगित करके अपना आर्थिक नीतियों संबंधी परिपत्र वहाँ पर भिजवाना इससे वहाँ की महासमिति के अधिकांश सदस्य उनके पक्ष में हो गए थे; सिंडीकेट के लोगों में भी आपस में आर्थिक कार्यक्रमों के बारे में जो मतभेद थे उनके कारण वे लोग एक-दूसरे से कुछ अलग हो गए थे। इसके बाद दूसरी

घटना थी कांग्रेस संसदीय बोर्ड में लोगों द्वारा संजीव रेड्डी के नाम को राष्ट्रपति पद के लिए निर्धारित प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी की इच्छा के विपरीत करना। यह इंदिरा गांधी पर गहरी चोट थी। इससे वे लोग यह दिखा सके कि उनकी इच्छा के बिना प्रधानमन्त्री बना रहना कठिन होगा। इसके बाद प्रधानमन्त्री इन्दिरा गांधी ने बिलकुल ही अप्रत्याशित कदम उठाया। उन्होंने श्री मोरारजी से वित्त विभाग ले लिया। यद्यपि लोगों का कहना था कि श्री चह्वाण ने जिस प्रकार से उनसे भिन्न रास्ता कांग्रेसी संसदीय बोर्ड की बैठक में अपनाया है उसके कारण उनको पदमुक्त कर दिया जायगा; परन्तु इंदिरा गांधी का कदम बिलकुल ही नए ढंग का था। उन्होंने श्री चह्वाण को छोड़ कर मोरारजी को ही हटाना उचित समझा। वस्तुतः इस प्रकार से श्रीमती गांधी ने यह दर्शा दिया था कि वह आर्थिक नीतियों को पालने के अनुसार कार्य करने में ईमानदार है। इस प्रकार से उन्होंने जन साधारण का विश्वास··· ीत लिया था। उन्होंने मोरारजी को हटाकर कर अपनी पैनी राजनैतिक झ-बूझ का भी परिचय दिया। उन्होंने अपना हर कदम बड़े ही ठीक मय पर और प्रभावी ढंग से उठाया। इससे उनके विरोधी निरन्तर ही वशता की स्थिति में आते गए। वे लोग बजाय आक्रमण के अपनी बचाव ी स्थिति में हो गए।

२९ जुलाई शनिवार को कार्यवाहक राष्ट्रपति गिरि ने प्रधानमन्त्री की ाफारिश पर श्री मोरारजी देसाई के त्यागपत्र को स्वीकार करने की घोषणा ी, इससे और भी अधिक सनसनी फैली गयी।

उस समय कामराज, अतुल्य घोष, एस० के० पाटिल और दल के अध्यक्ष ी निजलिंगप्पा वहाँ पर बैठ आपस में विचार-विमर्श कर रहे थे। उस दिन ोरारजी ने पत्रकारों से वार्ता करने से इंकार कर दिया।

इस समय अचानक ही यह घोषणा भी राष्ट्रपति द्वारा कर दी गयी कि कों का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है। कामराज, अतुल्य घोष और अध्यक्ष नाते श्री निजलिंगप्पा इस कदम के पक्ष में ही थे और इनमें से कोई भी रोध करने की स्थिति में नहीं था। यह १९ जुलाई को घोषणा हुई। इस क में भाग लेने वालों में केवल एस० के० पाटिल ही ऐसे थे जो इस कदम

के सख्त विरोधी थे। उन्होंने खुले तौर पर कोई विरोध नहीं किया वरन् केवल इतना ही कहा प्रधानमंत्री ने बदले की भावना से यह कदम उठाया है। इसके विरुद्ध हमारी लड़ाई जारी रहेगी। राष्ट्रपति द्वारा जो अध्यादेश जारी किया गया था उसमें तो बड़े बैंकों का ही नहीं वरन् चौदह बैंकों के राष्ट्रीयकरण की बात कही गयी थी।

कार्यसमिति की २१ जुलाई को सोमवार के दिन आपातकालीन बैठक बुलायी गयी थी; इससे पहले रविवार को कांग्रेस संसदीय दल की कार्यकारिणी की और संसदीय दल की बैठकें हो चुकी थीं। इनमें कहा गया था कि यदि मोरारजी को वित्त न लौटाया गया तो कांग्रेस दल में अवश्य ही भयंकर फूट पड़ जाएगी। कार्यकारिणी की बैठक में यह आरोप भी श्रीमती इन्दिरा गांधी पर लगाया गया था कि उन्होंने अशिष्टता बरती है। संसदीय दल की बैठक में स्वयं श्री मोरारजी ने यह कहा था कि मुझे इस प्रकार से हटा दिया गया मानो मैं कोई क्लर्क होऊं। श्री एस० के० पाटिल ने भी यह वक्तव्य दे डाला था कि श्रीमती इंदिरा गांधी [illegible] है और बैंकों का राष्ट्रीयकरण सस्ती लोकप्रियता को प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया है।

१९ जुलाई को यह घोषणा करने के बाद २५ जुलाई [illegible] राष्ट्रीयकरण विधेयक लोकसभा में पेश किया गया। इस समय [illegible] सदन में उपस्थित नहीं थे। कामराज और श्री [illegible] के दो अन्य प्रमुख सदस्य श्रीमती तारकेश्वरी और [illegible] अनुपस्थित रहीं।

इस अवधि में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने [illegible] के बावजूद राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार के [illegible] दिए थे। इससे उनके विरोधियों को [illegible] तो आशंकाएं रहीं। १९ अगस्त को [illegible] आपसी संघर्ष पुनः भड़क उठेगा [illegible]

इस सारी अवधि में [illegible] गयी थी। सबसे पहले [illegible]

कांग्रेसका र्यसमिति को चेतावनी दी कि वह श्री मोरारजी देसाई को वित्त विभाग लौटा दे अन्यथा इसके गम्भीर परिणाम होंगे। परंतु गुजरात की इस चुनौती के बावजूद कार्यसमिति इस बारे में कुछ भी करने की स्थिति में नहीं थी। वे लोग अपना ध्यान मुख्यरूप से राष्ट्रपति पद के चुनाव पर ही केन्द्रित किए हुए थे कि एकबार संजीव रेड्डी उस पद पर किसी तरह चुने जायं।

बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद साधारण जनता में उत्साह की लहर दौड़ गयी थी। आम लोग मानते थे कि वर्षों से परेशान रहते आर्थिक कष्टों की समाप्ति की ओर यह पहला कदम है। उन दिनों प्रधानमंत्री की कोठी पर निरन्तर देश की सामान्य लोगों की भीड़ लगी रहती थी। मजदूर संघों और सामाजिक संस्थानों द्वारा उनको बधाई देने का निरंतर तांता लगा रहता सड़कों को बनाने वाले मजदूर, रिक्शा, टैक्सी चालक और अन्य दबे वर्गों ोगों में अभूतपूर्व उत्साह नजर आने लगा और वे लोग अपनी भावनाओं व्यक्त करने के लिए दल बनाकर निरंतर प्रधानमंत्री के निवास स्थान पर लगे। एक दिन में समर्थकों की यह भीड़ बीस-बीस हजार तक हो जाती। इस उत्साह को देखते हुए श्रीमती इंदिरा गांधी ने यह घोषणा भी कर ी कि मैं धमकियाँ नहीं देती मगर धमकियों और चुनौतियों से किसी मैं डरती नहीं। उन्होंने यह भी कह दिया कि यदि मैं नहीं रही तो मेरे ारों का प्रसार करने के लिए और हजारों लोग एकत्र हो जायेंगे।

बड़े-बड़े बैंकों में इन्दिरा गांधी को तानाशाह बतलाया जा रहा था। यह जा रहा था कि बैंकों का राष्ट्रीयकरण उन्होंने रूस की प्रेरणा से और के इशारे पर ही किया है तथा देश अब पूरी तरह से साम्यवाद की गोद ला जायगा।

उन्होंने यह भी कहा कि अब दिल्ली में मास्को की हकूमत चलेगी। णपंथी कांग्रेसी नेताओं—पाटिल ने अपने भाषण में यह भी कहा कि हमारे में एक विशेष देश का प्रभाव निरंतर बढ़ रहा है। कुछ अखबारों ने भी कि साधारण जनता की भावनाओं को श्रीमती गांधी जिस तरह से भड़का हैं वह उनके पद की शोभा के अनुरूप नहीं। इस पर इन्दिराजी ने अपने

प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी सदस्यों से अपील करनी थी कि वे राष्ट्रपति पद के लिए मनोनीत सदस्य श्री संजीव रेड्डी को वोट देवें। परन्तु अमेरिकी राष्ट्रपति श्री रिचर्ड निक्सन की यात्रा के कारण इसे स्थगित कर देना पड़ा। यह बैठक शनिवार और फिर रविवार को भी नहीं हो सकी। अन्त में सोमवार को ही सम्भव हुई। इसमें प्रधानमन्त्री श्रीमती इंदिरा गांधी के अलावा विशेष प्रतिनिधि के रूप में कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा को आमन्त्रित किया गया।

इस बैठक में भारी हंगामा हुआ। श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा ने एक लेख लिखा था जिसमें कहा गया था कि कांग्रेस के दोनों पक्ष इस समय मौके की त में हैं और प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी श्री मोरारजी देसाई से त विभाग ले लेने के बाद तानाशाह बन बैठी हैं। सामूहिक नेतृत्व की बात ा निरर्थक हो गयी है। उन्होंने इस लेख में यह भी लिखा था कि श्रीमती ी अपने पद पर सिंडीकेट की सहायता से ही पहुँची हैं और वे आज उनको ेमाल कर लेने के बाद अब उसे नष्ट करने पर तुल गयी हैं।

रेड्डी के समर्थन में अपील की बात इस अधिवेशन में गौण हो गयी। य प्रश्न यह हो गया कि श्रीमती सिन्हा के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाही जाय।

श्रीमती सिन्हा ने संसदीय दल की इस बैठक में यहां तक कह दिया कि तो कम्युनिस्टों की सभा जैसी लग रही है। इस पर श्रीमती इंदिरा गांधी उनको बहुत लताड़ा और कहा कि कांग्रेस अध्यक्ष को इस प्रकार दल का मान करने वाले वरिष्ठ सदस्यों के प्रति भी अनुशासन की कार्रवाही करनी हिए। श्री निजलिंगप्पा को मजबूर होकर यह आश्वासन देना पड़ा कि वे ासचिवों द्वारा मामले की रिपोर्ट दिए जाने पर इस बारे में उचित कार्रवाही गे।

इन्हीं दिनों अखबारों में यह भी प्रकाशित हुआ कि श्री निजलिंगप्पा ने ू मसानी, एन० जी रंगा, दांडेकर और अटलविहारी वाजपेयी आदि दक्षिण- ी नेताओं से भेंट कर उनसे अनुरोध किया है कि वे श्री रेड्डी को दूसरी ायता का वोट दें। कांग्रेस संसदीय दल की इस बैठक में सदस्यों ने उन पर

आरोप लगाया कि वे कांग्रेस की प्रगतिशील नीतियों के विरोध में काम करने वाले इन दक्षिणपंथी दलों से साँठगाँठ कर रहे हैं। इस पर सदस्यों ने रोष व्यक्त किया। श्रीमती सिन्हा को इस बैठक में क्रुद्ध सदस्यों ने बोलने भी नहीं दिया। अन्त में श्रीमती इंदिरा गाँधी ने अपने भाषण में कहा राष्ट्रपति के चुनाव के प्रसंग में कई प्रकार की कहानियाँ फैलायी जा रही हैं। लेकिन जहाँ तक मेरा सवाल है संसदीय बोर्ड ने फैसला कर लिया है और यदि श्री निजलिंगप्पा एकता की अपेक्षा रखते हैं तो फिर उनको पूरा विश्वास होना चाहिए।

कांग्रेस संसदीय दल की इस बैठक के अगले दिन शुक्रवार ८ अगस्त को लोकसभा का अधिवेशन हुआ। इसमें एक अनोखी घटना घटी। शासक दल के पचास सदस्यों ने श्री पाटिल के नेतृत्व में सभा से बहिर्गमन किया। कारण यह था कि अध्यक्ष श्री खाडिलकर ने मधुलिमए के इस ध्यानाकर्षण प्रस्ताव को मान लिया था जिसमें यह आपत्ति प्रकट की गयी थी कि कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा ने राष्ट्रपति पद के मतदान के सिलसिले में बिहार के सदस्यों को लालच दिया है। पटना के एक समाचारपत्र में प्रकाशित समाचार के आधार पर उन्होंने यह बात रखी थी। इस पर पाटिल और उनके साथी विरोध में वाकआउट कर गए।

इन्दिरा जी ने उसी दिन सायं अपने निवास स्थान पर बधाई देने के लिए आए लोगों की एक सभा में एक और रहस्योद्घाटन भी किया कि बैंकों के राष्ट्रीयकरण के मामले को लेकर के उनको प्रधानमंत्री पद से हटवा दिए जाने की अनेक धमकियाँ दी जा रही हैं। इस वक्तव्य से काफी सनसनी फैल गयी।

राज्यसभा में बैंकों के राष्ट्रीयकरण का प्रस्ताव शुक्रवार को ही पारित कर दिया गया। तब कार्यवाहक राष्ट्रपति श्री हिदायतुल्ला के पास हस्ताक्षर के लिए यह विधेयक भेजा गया। जनसंघ और स्वतंत्र पार्टी के लगभग पचास संसद सदस्यों ने उनके पास जाकर अनुरोध किया कि वे इसको अनुमति प्रदान न करें। ऐसी आशंकाएँ जाहिर की गयी कि शायद श्री हिदायतुल्ला उनके सुझाव को मान लेवें। परन्तु ये निराधार निकलीं, उच्चतम न्यायालय में इस विधेयक को चुनौती दी जाने के बावजूद उन्होंने इस पर हस्ताक्षर करना उचित समझा। इन्दिरा गाँधी के इस साहसपूर्ण कदम का परिणाम यह हुआ

कि सदस्यों और जन-साधारण में उनकी साख बड़ी तेजी से बढ़ने लगी।

इस अवधि में डलहौजी में विश्राम करते हुए श्री निजलिंगप्पा ने प्रधान मंत्री को वहाँ बातचीत के लिए बुलाया। उनका कहना था कि दल की एकता बनाए रखने के लिए जरूरी है कि देसाई को वित्त विभाग लौटाया जाय। परंतु प्रधानमंत्री ने इस विचार-विमर्श के लिए डलहौजी जाना स्वीकार नहीं किया।

श्रीमती गाँधी के विरोधी उन पर आरोप लगा रहे थे कि बैंकों के राष्ट्रीयकरण के बाद जनता के मन पर काबू पाने के लिये वे व्यक्ति पूजा को बढ़ावा दे रही हैं और सरकार के प्रचार के माध्यम रेडियो इत्यादि भी इस कार्य में उनके इस उद्देश्य पूर्ति का साधन बन गए हैं। और प्रधानमंत्री के निवास-स्थान पर जाने वाले मुट्ठी भर लोगों की खबरों को बड़ी ही प्रमुखता दी जाने लगी है।

राष्ट्रपति के चुनाव का दिन ज्यों-ज्यों निकट आता जा रहा था कांग्रेस पक्ष के दिग्गजों में काफी घबराहट फैल रही थी। उनकी आशंका बढ़ रही थी कि संजीव रेड्डी को श्रीमती गाँधी और उनके समर्थक कहीं हरवा न दें। इन दिनों श्री सादिकअली जो कांग्रेस के महामंत्री थे, घोषणा की कि जैसा वातावरण है उसमें दलीय प्रतिनिधि को सभी संसद सदस्यों और कांग्रेसी विधायकों द्वारा समर्थन दिया जाना चाहिए। परंतु इस संबंध में कोई निर्देश उन लोगों को नहीं दिया जायगा। इससे रेड्डी समर्थकों में बड़ी घबराहट फैली। परन्तु तभी यह समाचार भी अखबारों में प्रकाशित हुआ कि जनसंघ के सदस्य अपना दूसरा वरीयता मत श्री संजीव रेड्डी को देंगे। कांग्रेस के इंदिरा समर्थक प्रगतिशील सदस्यों में इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई। श्री अर्जुन अरोड़ा ने घोषणा कर दी कि वे अपने साथी संसद सदस्यों को कहेंगे कि वे श्री गिरि के पक्ष में मत देवें। गिरि का पलड़ा भारी हो रहा था। भारतीय क्रांति दल में फूट पैदा हो गयी थी। अनेक संसद सदस्यों ने उनके पक्ष में मत देने का निर्णय किया था। इस बीच अर्जुन अरोड़ा के वक्तव्य से भयंकर विस्फोट हुआ। श्री निजलिंगप्पा, कामराज आदि नेताओं ने कहा कि यदि किसी ने इस प्रकार का व्यवहार किया तो वह दल के प्रति गद्दारी होगी। शशि भूषण और अन्य कुछ कथित युवा तुर्कों ने यह घोषणा कर दी कि दल

के कुछ प्रमुख व्यक्तियों ने जिस प्रकार प्रधानमंत्री की आलोचना का बीड़ा उठाया है वह अत्यन्त अनुचित है। उन्होंने निजलिंगप्पा को याद दिलाया कि लोकसभा के अध्यक्ष पद पर जब संजीव रेड्डी थे तो उन्होंने यह मत व्यक्त किया था कि कांग्रेस देश का नेतृत्व कर सकने में असमर्थ है। श्री शशि ने कहा था इस प्रकार के व्यक्ति को मैं वोट नहीं दे सकता और अनुमति चाहता हूँ कि उनके विरोध में मत दूँ। श्री शशि भूषण ने निजलिंगप्पा पर यह भी आरोप लगाया कि उन्होंने दक्षिणपंथी दलों के साथ सांठ गाँठ कर कांग्रेस की नीतियों के विरुद्ध चलकर उसे हानि पहुँचाई है। इस कारण श्री रेड्डी को वोट देने को मैं तैयार नहीं हूँ। उन्होंने कहा कि कांग्रेस दल ने अभी तक इस बारे में कोई निर्देश भी नहीं दिया।

इस पर श्री निजलिंगप्पा बड़े बौखलाए। उन्होंने इस प्रकार के विरोध की आशंका को ध्यान में रखते हुए ही प्रधानमंत्री से अनुरोध किया कि वे ससदीय दल (कांग्रेस) के नेता होने के नाते यह निर्देश जारी करें कि मत कांग्रेसी प्रत्याशी को ही वोट दिया जाय। परन्तु श्रीमती इंदिरा गाँधी ने ऐसा मानने से इन्कार कर दिया। कांग्रेस प्रधान ने उनको एक पत्र में यह भी लिख दिया था कि आपके चुप रहने से और कोई निर्देश न देने से लोगों को यह भ्रम हो रहा है कि आप शायद श्री रेड्डी के पक्ष में नहीं हैं।

श्री कामराज ने भी इन्दिरा गांधी को कम्युनिस्ट समर्थक कहा और कहा कि प्रधानमंत्री को श्री रेड्डी के पक्ष में स्पष्ट निर्देश देना चाहिए।

इसी समय फखरुद्दीन अली अहमद और श्री जगजीवनराम ने श्री निजलिंगप्पा को आधी रात को एक पत्र भेजा। इसमें श्री निजलिंगप्पा से पूछा गया कि आपने जनसंघ और स्वतन्त्र पार्टी के नेताओं के साथ क्यों मुलाकात की आप यदि इसका संतोषजनक उत्तर नहीं देंगे तो राष्ट्रपति पद के चुनाव पर भी इसके गम्भीर परिणाम पड़ सकते हैं। उत्तर भी माँगा था। यह पत्र रात को काफी देर से भेजा गया था। श्री निजलिंगप्पा के पास इतना समय नहीं था कि वे जो उत्तर भेजें वह भी इस पत्र के साथ ही अगले दिन के समाचार पत्रों में पूरी तरह से छप जाय।

इस पत्र में श्री जगजीवनराम और फखरुद्दीन अली अहमद ने यह कहा था कि आपकी इस भेंट से कांग्रेस संसदीय दल के लोग काफी परेशान हैं और

इस निजी वार्ता के परिणामस्वरूप श्री संजीव रेड्डी के पक्ष में जनसंघ ने अपना दूसरा वरीयता मत देने की घोषणा भी कर दी है। शशि भूषण को निजलिंगप्पा का उत्तर था कि दल के अनुशासन की दृष्टि से मत अपनी इच्छानुसार देने की किसी सदस्य को अनुमति नहीं दी जा सकती। दोनों मंत्रियों को जो उत्तर श्री निजलिंगप्पा ने दिया उसमें यह लिखा था कि आप समस्या को उलझा रहे हैं। दरअसल उन दोनों ने अपनी जो शंका मिटानी चाही थी उसका उत्तर नहीं दिया गया था। उन्होंने इन दोनों के इस पत्र को भी अनुशासन भंग ही बताया। श्री निजलिंगप्पा के पत्र के उत्तर से संतुष्ट न होकर जगजीवनराम और फखरूद्दीन अली अहमद ने पुनः निजलिंगप्पा को पत्र लिखा। यह पत्र व्यवहार अभी चल ही रहा था कि एक अत्यन्त सनसनीखेज समाचार प्रकाशित हुआ। यह घोषणा की गयी कि श्रीमती इन्दिरा गांधी भी स्वतंत्र मतदान के पक्ष में हैं। उन्होंने यह बात श्री निजलिंगप्पा को उनके डलहौजी से लिखे पत्र के उत्तर में कही थी। इससे सारे वातावरण में श्री गिरि के जीत जाने की सम्भावनाएँ नजर आने लगी थीं। अपने दूसरे पत्र में फखरूद्दीन अली और जगजीवनराम ने यह पूछा था कि आप स्पष्ट रूप से यह बताएँ कि आप स्वतन्त्र पार्टी व जनसघ के नेताओं से क्यों मिले जबकि वे लोग श्री चिन्तामणि देशमुख को अपना उम्मीदवार घोषित कर चुके हैं। उन लोगों ने प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी को उनके पद से हटाने की माँग भी खुले रूप से की थी। उन पर यह आरोप लगाया था कि वे साम्यवाद की ओर झुकी हुई हैं।

प्रधानमंत्री द्वारा इस प्रकार स्वतन्त्र मतदान की हिमायत कर देने से स्पष्ट हो गया था कि अब दोनों पक्षों में आपस में मिलने का कोई आधार ही नहीं रह गया। इससे संजीव रेड्डी के समर्थकों में बड़ी घबराहट फल गयी थी।

यह घटना तो बुधवार की है। इससे पहले मंगलवार के दिन चह्वाण और कामराज प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी से मिलकर समझौते का प्रयास करवा रहे थे।

श्रीमती इंदिरा गाँधी ने जो जवाब निजलिंगप्पा को लिखा था उसमें उन्होंने कहा था कि आपको जनसंघ और स्वतन्त्र पार्टी के नेताओं से जो

चुनाव गठबंधन हुआ है उससे दल के सदस्यों में काफी असंतोष है। एक तो संवैधानिक कठिनाइयों के कारण और दूसरा अब जैसी परिस्थितियों ने रूप धारण कर लिए हैं। मैं सदस्यों को किसी प्रकार का निर्देश इस बारे में नहीं दे सकती। और भी एक बात स्पष्ट है कि चुनाव सिद्धान्तों की रक्षा के लिए लड़ा जाता है न कि सिद्धान्त चुनाव पर बलिदान कर दिए जाते हैं।"

निजलिंगप्पा द्वारा इसका जवाब यही दिया गया : आप जानबूझकर राष्ट्रपति चुनाव में भ्रम का वातावरण पैदा करती जा रही हैं अतः मैं आपसे पुनः अनुरोध करता हूं कि आप संसद सदस्यों के नाम रेड्डी के समर्थन में एक अपील जारी करें।

अगले दिन श्री मोरारजी की एक चेतावनी समाचारपत्रों में प्रकाशित हुई। इसमें कहा गया था कि यदि कोई भी व्यक्ति दल के अनुशासन को भंग करता है वह चाहे कितना भी बड़ा क्यों न हो उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाई की जायगी।

परन्तु उत्तर प्रदेश के उपमुख्य मंत्री श्री कमलापति त्रिपाठी ने तार भेजकर श्री निजलिंगप्पा से मतदान में छूट लेने की माँग की। गुलजारीलाल नंदा ने भी एक पत्र भेजकर इन दोनों मंत्रियों द्वारा उठाए मुद्दों को बिल्कुल सही बताया और कहा कि श्री निजलिंगप्पा उनके द्वारा उठायी आपत्तियों का उचित उत्तर देने में बिल्कुल ही असफल रहे हैं। चंडीगढ़ से पंजाब विधानसभा के कांग्रेस के महासचिव श्री हंसराज शर्मा ने घोषणा कर दी कि वहाँ ३३ में से २५ विधायक अपनी आत्मा की आवाज पर वोट देंगे। दल के प्रतिनिधि को उनका वोट देना अनिवार्य नहीं। जम्मू कश्मीर के विधायकों ने भी अपना समर्थन श्री गिरि को देने का निर्णय किया था। इसकी सूचना समाचारपत्रों में प्रकाशित करवा दी थी। मैसूर के कुछ संसद सदस्यों ने जिनमें श्री कृष्णप्पा प्रमुख थे ऐसा ही मत जाहिर किया था। राजस्थान और बंगाल में भी इस आशय के समाचार आने शुरू हो गए कि वहाँ पर अनेकों विधायक श्री रेड्डी का विरोध करेंगे।

श्रीमती गांधी ने अपना पत्र निजलिंगप्पा को मंत्रिमंडल के साथियों से परामर्श के बाद ही लिखा था। सर्वश्री चह्वाण, रामसुभगसिंह और पुनाचा ने उनके इस कदम का विरोध किया था। परन्तु इस समय तक अनेक

ज्ञापनों के सहारे यह स्पष्ट हो चुका था कि श्रीमती गाँधी के साथ संसद ४३३ सदस्यों में से २३३ उनके साथ हैं और स्पष्ट ही बहुमत उनके साथ है

१६ अगस्त को राष्ट्रपति पद के चुनाव से पहले स्थिति बड़ी ही विस्फो टक थी। दोनों पक्ष पूरी तरह से तैयारी कर रहे थे। श्री निजलिंगप्पा ने अजु अरोड़ा को एक आदेश देकर दल की सदस्यता से मुअत्तल कर दिया था साथ ही उनके विरोधियों ने उनको हटाने की मांग भी कर दी थी। तारकेश्व न्हा ने उससे पहले प्रधानमंत्री से अपील भी की थी कि वह दल में इ पंकर फूट को न पड़ने देवें। परन्तु श्रीमती गाँधी ने स्पष्ट कर दिया था व समय बहुत आगे निकल गया और इसमें कुछ करना संभव नहीं।

राज्यों की स्थिति यह थी कि बिहार में कांग्रेस संस्था संगठन न लोगों का अधिकार था उन लोगों ने प्रस्ताव रखा कि दल का अनुशास ंग करने पर और सदस्यों का स्पष्ट निर्देश रेड्डी के पक्ष में न डालने नकी भर्त्सना की जाय। परन्तु मांग करने पर ही वहाँ पर बैठक में हाथ ाई की नौबत आ गयी। उड़ीसा में भी आचार्य ने घोषणा कर दी कि राष्ट ति के चुनाव के बारे में कोई निर्देश दल की ओर से नहीं दिया जायगा गाल में कांग्रेस विधायक दल के नेता श्री सिद्धार्थ शंकर रे ने दल के अध्य ी चुन्दर के प्रति विद्रोह कर दिया। अनेक कांग्रेसियों ने यह कहना इ किया था कि श्री रेड्डी तो दरअसल जनसंघ और स्वतन्त्र पार्टी के उम्मीदव ं। जनता में भी यह धारणा बलवती हो रही थी कि देशमुख को इन दो लों ने केवल दिखावे मात्र के लिए खड़ा किया है। संजीव रेड्डी के प्रदे ांध्र में भी उनका विरोध उग्र रूप से होने लगा था। श्री ब्रह्मानन्द रेड्ड ने केवल यही सदस्यों से कहा कि उनकी इच्छा है कि श्री संजीव रेड्डी समर्थन किया जाय। राजस्थान में भी तीन मंत्रियों और चार अन्य सदस ने स्वतन्त्र मतदान देने की घोषणा कर दी थी। मैसूर के एक कांग्रेसी सं सदस्य तथा कुछ विधायकों ने श्री गिरि को समर्थन देने की खुली घोषणा क ी थी।

चुनाव से पहले कांग्रेस संसदीय दल की कार्यकारिणी की बैठक हुई थी इसमें रेड्डी समर्थकों ने यह पास करवाना चाहा कि श्रीमती इन्दिरा गाँ उनके पक्ष में मतदान की अपील जारी कर देवें। इस पर विधिमंत्री श्री गोवि

मेनन ने कहा कि प्रधानमन्त्री कानून के मुताबिक निर्देश नहीं दे सकतीं और न ही अपील जारी कर सकती हैं।

निजलिंगप्पा और उनके साथी एक प्रस्ताव लिख लाए थे जिसमें कहा गया था कि श्री रेड्डी के पक्ष में मत दिया जाय। परन्तु कौन्सी इन्दिरा गांधी ने इसके साथ अपना नाम जोड़ देने की अनुमति नहीं दी। इस पर बैठक स्थगित होने के बाद निजलिंगप्पा दल के द्वारा यह कहा गया कि प्रस्ताव संसदीय दल की कार्यकारिणी में बहुमत से स्वीकार कर ली गयी है। श्री सिद्धवीं राव देव मुख ने जो संसदीय दल के सदस्यों में यह कहा परन्तु मोरारजी चव्हाण और सैयद आगा के अलावा कार्यकारिणी के अन्य सदस्यों ने इसका खंडन किया। उन्होंने कहा कि इस पर सहमति नहीं हुई। इसलिए यह कहने का कोई अर्थ नहीं कि बहुत से यह अपील जारी कर दी गई है। कार्यकारिणी की इस बैठक में एक यही फैसला हुआ कि प्रधानमन्त्री कोई निर्देश जारी नहीं करेंगी; क्योंकि संवैधानिक दृष्टि से ऐसा करना अनुचित है। कौन्सी गांधी ने यह सुझाव भी अस्वीकार कर दिया कि वे श्री जगजीवन, मोरारजी देसाई, चव्हाण और निजलिंगप्पा आदि के साथ टेलीफोन पर सम्पर्क स्थापित कर आपस के मतभेद दूर कर लेवें।

कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा ने अन्त में कहकर यह अपील जारी की: कांग्रेसजनों को यदि अपने दल की सामयिकता का ज्ञान भी शेष है तो उनको चाहिये कि वे श्री रेड्डी को ही अपना उम्मीदवार बनावें। उन्होंने इस संघर्ष को लोकतंत्र और साम्यवाद के बीच संघर्ष बताया। उन्होंने स्पष्ट किया कि जो कांग्रेस के उम्मीदवार को वोट नहीं देगा उसके विरुद्ध अनुशासन की कार्यवाही भी की जा सकेगी। यदि प्रधानमन्त्री ने हस्तक्षेप किया तो उनके विरुद्ध भी कार्यवाही होगी।

जनसंघ ने यह घोषणा कर दी कि उसके सदस्य वोट श्री रेड्डी को देंगे। प्रजासमाजवादी दल ने कहा था कि वह वोट श्री रेड्डी को न दें चाहे और किसी भी प्रत्याशी को दें। द्रमुक ने भी रेड्डी को न देने को कहा। सी०पी०आई० तक ने यह आशा की थी कि यदि कौन्सी गांधी ने श्री रेड्डी के पक्ष में निर्देश जारी न किया तो कांग्रेस के कुछ सदस्य

का पूरा खतरा है। परन्तु अब इस प्रकार की बातें महत्वहीन हो चुकी थीं।

श्री निजलिंगप्पा यह घोषणा कर कर रहे थे कि यदि श्री रेड्डी इस चुनाव में हारे तो कांग्रेस की प्रतिष्ठता खाक में मिल जायगी। इसलिए सब कांग्रेसी सदस्यों को चाहिए कि वे श्री रेड्डी के पक्ष में मतदान करें। दक्षिणपंथी नेताओं ने श्रीमती गाँधी पर आरोप भी आरोप भी लगाना शुरू कर दिया कि बैंक राष्ट्रीयकरण की जो बात कही जा रही है वह गौण है; असल में सब कुछ किया तो जा रहा है सत्ता अपने हाथ में रखने के लिए। इसमें पार्टी की एकता का भी ध्यान नहीं रखा जा रहा। वे लोग यह भी कहने लगे कि इन्दिरा को भ्रम है कि उनका प्रधानमन्त्री पद से विरोध किया जा रहा है। उन्होंने कहा जब तक तो वे सत्ता में रहेंगी ही। प्रतिपक्ष का इन्दिरा जी पर हर बार खाली जा रहा था। उनमें बौखलाहट बढ़ रही थी। जनसाधारण में इन्दिरा जी की लोकप्रियता बढ़ रही थी और राजनैतिक दल भी इससे चिंतित थे। वामपंथी इसलिए कि इन्दिरा गांधी जो क्रांतिकारी कदम उठा रही हैं उनसे उन दल को जनता का समर्थन पाने के लिए शेष कुछ बचेगा नहीं। दक्षिणपंथी दल उनकी इन नीतियों के विरुद्ध थे ही वे जनता में बढ़ती उनकी लोकप्रियता से अपने अस्तित्व को खतरा समझ रहे थे।

हवा का रूख देखते हुए सिंडीकेट के समर्थकों ने प्रगतिवादी बाना पहनने की घोषणा की। संसद के अधिवेशन में श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा ने विदेश व्यापार, विदेशी पूंजी और आम बीमे के राष्ट्रीयकरण के बारे में आवाज उठाई। इस प्रकार वे लोग आर्थिक कार्यक्रमों की दृष्टि से अपने को श्रीमती गांधी से अधिक प्रगतिवादी घोषित करना चाहते थे। परन्तु अब यह सब कुछ बेमौके की बातें लगती थीं।

१५ अगस्त को हालत यह थी कि निजलिंगप्पा और रेड्डी अपने-अपने मत पर तथा श्रीमती गांधी निर्देश न देने के फैसले पर दृढ़ थीं। इस प्रकार जो लोग अपनी अत्मा की आवाज के अनुरूप मत देने को तत्पर थे उनकी स्थिति में किसी प्रकार का अंतर नहीं आया था। गिरि उस समय प्रगतिवाद के प्रतीक बन चुके थे। उनकी हार विचारधारा की हार होती। इसके विपरीत श्री संजीव रेड्डी की हार दक्षिणपंथ की हार होनी थी।

१५ अगस्त की आधी रात को कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा ने सारे

देश में फैललगभग चार हजार मतदाताओं को अलग-अलग तार भेज दिया था। उनको स्मरण दिलवाया था कि आपको कांग्रेसी उम्मीदवार को ही वोट देना है। परन्तु निजलिंगप्पाजी के विरोध में भी तारों के आने का सिलसिला शुरू हो गया। बिहार के ६८ में से ४० सदस्यों ने तार भेजकर उनके प्रति अपना अविश्वास जाहिर किया। उन्होंने कहा कि वे त्यागपत्र दे देवें ताकि दल का विघटन होने से बच जाय। उत्तरप्रदेश के २२ सदस्यों ने भी इस प्रकार की घोषणा कर दी और उनके प्रति अपने अविश्वास की सूचना दे दी। एक अभियान शुरू हो गया था कि श्री निजलिंगप्पा को अध्यक्ष पद से हटा दिया जाय। इसके लिए महासमिति का अधिवेशन बुलाया गया। बंगाल के अनेक कांग्रेसियों ने भी तार द्वारा कांग्रेस अध्यक्ष के प्रति अपना अविश्वास जाहिर किया था। इस आशय का प्रस्ताव पारित करवाने के लिए हस्ताक्षर अभियान शुरू हो गया था।

स्वराष्ट्र उपमन्त्री श्री विद्याचरण शुक्ल के घर पर कांग्रेस संसद दल के २२२ सदस्यों की बैठक हुई। इन लोगों ने अपना यह संकल्प जाहिर किया कि वे किसी भी हालत में श्री रेड्डी के पक्ष में मतदान को तैयार नहीं। उन लोगों का कहना था कि श्री रेड्डी ने जनसंघ और स्वतन्त्र पार्टी से दोस्ती कर के दल की नीतियों के विरुद्ध कार्य किया है। कलकत्ता में विधान सभा के सदस्यों ने भारी बहुमत से स्वतन्त्र मतदान का फैसला किया। उत्तरप्रदेश में श्री कमलापति त्रिपाठी ने भी श्री गिरि के समर्थन की खुली घोषणा कर दी। उड़ीसा और पंजाब में पहले दल के सदस्यों को यह निर्देश दिया गया था कि वे दलीय प्रतिनिधि को अपना मत देवें परन्तु बदलती हालत में उन्होंने इसको वापस ले लिया।

महाराष्ट्र और गुजरात के संसद सदस्यों में से अधिकांश अपने नेता श्री चव्हाण और श्री मोरारजी देसाई के साथ रेड्डी के पक्ष में थे; फिर भी उन में से कुछ श्री गिरि को ही अपना मत देने की मनःस्थिति में थे। इन्दिरा समर्थक स्वतंत्र मतदान के पक्ष थे; वे स्वतन्त्र मतदान के हामी भी थे। उन की संख्या ३२२ बतायी जा रही थी परन्तु प्रतिपक्ष मानता था कि उनकी संख्या सौ से अधिक नहीं हैं। रेड्डी का जीतना उनकी गणना के अनुसार असंदिग्ध था।

प्रधानमन्त्री ने श्री निजलिंगप्पा को यह लिख भेजा कि आपने सन् ७२ तक प्रधानमन्त्री बनाए रखने की बात की है मुझे इस पर आपत्ति है मैं किसी प्रकार का आश्वासन इस पद पर बने रहने के लिए नहीं माँगती। मुख्य बात तो यह है कि कांग्रेस दल में स्पष्ट बहुमत था कि राष्ट्रपति पद पर उसका मनोनीत प्रत्याशी चुना जाय। इस पर भी आपने किन कारणों से प्रेरित होकर स्वतन्त्र पार्टी और जनसंघ से चुनाव समझौता किया? ये दोनों संस्थाएं कांग्रेस के आदर्शों का विरोध करती हैं। आपसे इस सम्बन्ध में उचित उत्तर न मिल पाने के कारण संसद सदस्यों में काफी रोष है। ऐसी परिस्थिति में सदस्यों को स्वतन्त्र मतदान की अनुमति नहीं दी गयी तो कांग्रेस के टूट जाने की आशंका है। एक पत्र जगजीवनराम और फखरुद्दीन अली अहमद का भी जिसमें पुनः श्री निजलिंगप्पा के व्यवहार पर आक्रोश व्यक्त किया गया था। इस सारे मामले में स्वराष्ट्रमन्त्री श्री चह्वाण की स्थिति बड़ी नाजुक थी। उन्होंने सब संसद सदस्यों को जो महाराष्ट्र के थे—अपने निवास पर बुला लिया था और उन लोगों को कहा था कि जहाँ तक प्रगतिवादी नीतियों का सवाल है हम प्रधानमन्त्री के साथ हैं परन्तु जहाँ तक राष्ट्रपति पद के लिए वोट देने का सवाल है हम कांग्रेस संसदीय बोर्ड द्वारा मनोनीत व्यक्ति को ही वोट देंगे। उनकी स्थिति बड़ी नाजुक थी। वह निरन्तर प्रयास कर रहे थे कि किसी प्रकार दोनों पक्षों में समझौता हो जाय परन्तु अब इसका समय गुजर चुका था।

इन्दिराजी को उनके पत्र के उत्तर में कांग्रेस अध्यक्ष का एक पत्र मिला जिसमें उन्होंने आरोप लगाया था कि आप कम्युनिस्टों से सहयोग ले रही हैं। इससे पहले वे यह भी कह चुके थे कि आपने बैंकों का राष्ट्रीयकरण रूस के संकेत पर किया है। वैसे यह गलत था क्योंकि कांग्रेस ने पहले ही कई बार घोषणा की थी कि बैंकों का राष्ट्रीयकरण किया जाना चाहिए।

शनिवार को राष्ट्रपति पद के लिए मतदान हुआ। इसमें कांग्रेस के विधायकों और संसद सदस्यों ने भारी संख्या में वोट श्री रेड्डी के विरुद्ध और श्री गिरि के पक्ष में डाले।

इस मतदान के बाद श्री पाटिल ने जो कि कांग्रेस के सिंडीकेट में प्रमुख

सदस्य थे कहा श्रीमती गांधी ने अत्यन्त ही गलत कदम उठाए हैं। उस पर हमें खेद है परन्तु अनुशासन की कार्रवाही उनके विरुद्ध भी की जायगी। श्री पाटिल ने कहा कि प्रधानमन्त्री ने दल की पीठ में छुरा घोंपा है। यदि उन्हें संसदीय बोर्ड का बंगलौर में लिया फैसला पसन्द नहीं था तो उनको विशेष विरोध करना चाहिए था। इस पर दुबारा विचार कर लिया जा सकता था।

श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा ने कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा को पत्र लिखकर श्रीमती गांधी को प्रधानमन्त्री पद से हटा दिए जाने की मांग की थी। श्री देसाई ने यह आशा प्रकट की थी कि विजय श्री रेड्डी की होगी परन्तु इसके गणना के दूसरे दौर तक विचार करना होगा। और बीस तारीख को जब मतगणना हुई तो पहले दौर पर श्री गिरि अवश्य जीत गए। परन्तु राष्ट्रपति निर्वाचित घोषित किए जाने के लिए जितने मतों की जरूरत थी उतने उनको प्राप्त नहीं हुए। इस पर दूसरी बार मतगणना की जानी थी। श्री गिरि के समर्थकों के लिए सबसे दुविधाजनक क्षण यही थे उनको यह आशंका पैदा हो गयी कि कहीं पासा पलट ही न जाय।

इतने में श्री निजलिंगप्पा ने श्रीमती इन्दिरा गांधी के साथ सर्वश्री जगजीवनराम और श्री फखरुद्दीन अली अहमद और कमलापति त्रिपाठी पंजाब कांग्रेस के अध्यक्ष श्री जेलसिंह और बिहार कांग्रेस के अध्यक्ष श्री ए० पी० शर्मा को भी नोटिस भेज दिया था कि उनके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्रवाही की जायगी।

इस पर निजलिंगप्पा जी के विरुद्ध हस्ताक्षर अभियान शुरू हो गया। अनेक सदस्यों ने मांग की कि कांग्रेस महासमिति का अधिवेशन बुलाकर श्री निजलिंगप्पा अपने प्रति विश्वास का वोट लेवें। श्री निजलिंगप्पा यह अधिवेशन अहमदाबाद में बुलाना चाहते थे; जहाँ गुजरात कांग्रेस ने पहले ही उनका समर्थन किया हुआ था। दूसरे पक्ष के लोग इस विशेष अधिवेशन को दिल्ली में बुलाए जाने की मांग कर रहे थे।

२० अगस्त की रात को श्री गिरि की विजय की घोषणा कर दी गयी थी। इसका अभूतपूर्व स्वागत हुआ था। दिल्ली में और इस तरह से देश के अन्य

स्थानों पर भी सामान्य जनता में प्रसन्नता की लहर दौड़ गयी थी। "इंदि गांधी जिंदाबाद" और "सिंडीकेट हाय हाय" के नारों से नगर गूंज उठे थे

सिंडीकेट के नेताओं ने इस पराज्य से तिलमिला कर बुधवार सायं कार्यसमिति की विशेष बैठक बुलायी। इस बैठक में यह फैसला किया जा था कि प्रधानमन्त्री तथा उनके साथियों ने राष्ट्रपति चुनाव में अनुशासन जो भंग किया है इस पर उनके विरुद्ध क्या कार्यवाही की जानी चाहिए। बैठक में सर्वश्री मोरारजी देसाई एस० के० पाटिल और कामराज थे परन्तु चह्वाण शामिल नहीं हुए। उन्होंने मुख्यमन्त्री श्री वी० पी० नाइक के साथ निजलिंगप्पा से भेंट की और उनको सलाह दी। परन्तु उन चोट खाए दिग्ग को सलाह मानने में हिचकिचाहट हो रही थी। वे इसे किसी भी हालत मानने को तैयार नहीं थे। उन्होंने फैसला किया कि कार्यसमिति की बैठक यह प्रस्ताव रखा जाय कि प्रधानमन्त्री ने जो कुछ किया है उसे दल के हितों विरुद्ध मानते हुए उनकी भर्त्सना जाती है। सोच विचार के बाद सिंडीकेट नेताओं ने फैसला शुक्रवार को किया था।

२२ और २३ अगस्त को सिंडीकेट के नेताओं की बैठक चली। इस बं में सर्वश्री कामराज, पाटिल और निजलिंगप्पा तथा चह्वाण और अतुल्य घ आदि नेताओं में विचार-विमर्श निरन्तर चलता रहा। प्रधानमन्त्री से लोगों का संपर्क टूट चुका था। जगजीवनराम तथा फखरूद्दीन अली अहम ने भी 'कारण बताओ' नोटिस का कोई उत्तर नहीं दिया था।

कार्यसमिति की बैठक सोमवार को होनी थी। उसके लिए राज्यों से मु मंत्रियों का भी आना शुरू हो गया था। उत्तरप्रदेश से श्री सी० बी० गु और आंध्र से श्री ब्रह्मानंद रेड्डी शुक्रवार और शनिवार को दिल्ली आ गए कुछ लोगों ने यह सलाह दी थी कि भावी टकराव को देखते हुए कार्यसमि की बैठक स्थगित कर दी जाए। परन्तु श्री निजलिंगप्पा इस बात को मा को तैयार नहीं थे। न ही वे इन सारी बातों को किसी तरह भूल पाने को तैयार थे।

शुक्रवार की रात को स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री के निवास स्थान श्री निजलिंगप्पा समर्थक संसद सदस्यों की बैठक हुई। इसमें उपस्थिति लो

ने फैसला किया कि प्रधानमन्त्री ने दलीय अनुशासन को जिस तरह से भंग किया है वह अनुचित है और उनके विरुद्ध अवश्य ही कोई कार्यवाही की जानी चाहिए। इस बैठक में स्वर्गीय डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद के सुपुत्र श्री मृत्युंजय प्रसाद भी थे उत्तरप्रदेश के श्री मोहनलाल गौतम भी। यह भी प्रचारित किया गया कि इस बैठक में १३० सदस्यों ने भाग लिया परन्तु वास्तव में भाग लेने वालों की संख्या सत्तर से अधिक न थी। इस बैठक का उद्देश्य था जनता और संसद सदस्यों पर यह प्रभाव डालना कि सभी श्रीमती गांधी के साथ नहीं हैं और उनका अभी कड़ा विरोध दल के अन्दर है।

जनता में इस बैठक में भाग लेने वाले सदस्यों के प्रति गहरा आक्रोश पैदा हुआ। श्री हरिकृष्ण शास्त्री इलाहाबाद से निर्वाचित होकर आए थे। वहां के वकीलों की प्रतिनिधि संस्था ने उनको तार भेजकर उनके द्वारा अपनाए गए पर अपना विरोध प्रकट किया और कहा कि वे त्यागपत्र देकर के दिल्ली लौट आएं।

इस अवधि में श्री संजीवैया के निवास स्थान पर बिहार के प्रतिनिधि श्री ए० पी० शर्मा की अध्यक्षता में संसद सदस्यों की बैठक हुई। इसमें २४८ संसद सदस्यों ने भाग लिया। उन्होंने श्रीमती इन्दिरा गांधी के नेतृत्व में अपनी आस्था प्रकट की। श्री रामसुभगसिंह ने भी घोषणा कर दी थी कि यदि प्रधान मन्त्री के विरुद्ध किसी प्रकार की अनुशासनात्मक कार्यवाही की गयी तो वह सिंडीकेट का विरोध करेंगे।

उत्तर प्रदेश के श्री चंदभानु गुप्त कुछ दुविधा में थे। उनको आशंका थी कि यदि उन्होंने प्रधानमन्त्री के प्रति अपना विरोध सार्वजनिक रूप में व्यक्त किया तो लखनऊ में विधायकों द्वारा उनका काफी विरोध किया जायगा और हो सकता है कि उनके मन्त्रिमंडल के प्रति अविश्वास का प्रस्ताव ही पारित हो जाय।

शनिवार को श्री संजीवैया के निवास-स्थान पर एकत्र संसद सदस्यों ने यह मांग की थी कि श्रीमती इन्दिरा गांधी पर अनुशासन की कार्रवाई के मामले पर विचार भी नहीं किया जाना चाहिए। परन्तु श्री निजलिंगप्पा निरन्तर अपने फैसले पर अडिग रहे। उन्होंने कहा दल के हित के लि

भी कार्य किया उसको माफ नहीं किया जा सकता और उसके विरुद्ध अनुशासन की कार्रवाही तो होगी ही।

श्रीमती इन्दिरा गांधी ने यह घोषणा कर दी थी कि वे प्रतिगामी लोगों से किसी भी कीमत पर समझौता नहीं कर सकतीं। उनके स्थान पर उनको हार जाना मंजूर है। उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि श्री मोरारजी को किसी भी हालत में वित्त विभाग पुनः नहीं दिया जा सकता; क्योंकि उनकी आस्था ही इन कार्यक्रमों में नहीं है।

श्री निजलिंगप्पा ने यह भी घोषणा कर दी थी कि कार्यसमिति की बैठक में वे स्थायी आमंत्रित सदस्यों सर्वश्री स्वर्णसिंह, संजीवैया, सादिक अली, चालिहा और कमलापति त्रिपाठी को नहीं बुलाएंगे। कारण यह कि ये लोग इन्दिरा समर्थक समझे जाते थे। यह भी धारणा व्यक्त की जा रही थी कि श्रीमती गांधी कार्यसमिति की बैठक में शायद भाग ही न लेवें।

कांग्रेस के दोनों गुटों में अब मतभेद चरम सीमा तक पहुँच चुके थे; प्रतीत होने लगा था कि कांग्रेस अब टूट ही जायगी। सारे वातावरण में तनाव था यह भी आशंका पैदा हो गयी कि श्रीमती गांधी कहीं लोकसभा का विघटन ही न कर देवें। कार्यसमिति के इन्दिरा विरोधी फैसले की आशंका से जनसाधारण में भारी प्रतिक्रिया थी। कांग्रेस के सदस्यों में दल टूटने की सम्भावना पर गहरी चिन्ता व्याप्त थी। साफ पता चल रहा था कि यदि श्री निजलिंगप्पा और उनके साथियों ने प्रधानमन्त्री के विरुद्ध कोई कदम कार्यसमिति में उठाया तो उसका परिणाम होगा दल का विघटन। दिल्ली के कांग्रेसियों में लगभग ५० व्यक्ति एकत्र हुए और उसके बाद मिलकर के श्री निजलिंगप्पा और तब प्रधानमन्त्री की कोठी पर गए। पैदल ही सख्त धूप में ये लोग नेताओं के पास पहुँचे और उनसे अनुरोध किया कि वे आपस में एकता कर लेवें। उधर स्वराष्ट्रमन्त्री श्री चह्वाण भी निरन्तर समझौता प्रयास चला रहे थे। परन्तु इन सबको संदेह के रूप में देखा जा रहा था। कार्यसमिति की बैठक अनिवार्य है और उसमें कुछ निर्णयात्मक कदम उठाए जाएंगे यह स्पष्ट हो गया था। देश के विभिन्न स्थानों से निरन्तर सूचनाएँ आ रही थीं कि लोगों ने कार्यसमिति से अनुरोध किया है कि वह कोई ऐसा फैसला न उठाए जिससे

संघर्ष और बढ़ जाय तथा संस्था के टूटने की नौबत आ जाय। संसद सदस्यों में भी इन्दिरा जी के समर्थकों की संख्या में वृद्धि हो रही थी। कार्यसमिति में समझा जाता था कि श्री निजलिंगप्पा का बहुमत है और इसी को बनाए रखने के लिए उन्होंने स्थायी प्रतिनिधियों को इस बैठक में आमंत्रित नहीं किया था।

जनता में गहरा असंतोष इस बात का फैल रहा था। श्रीमती गाँधी के विरुद्ध यदि अनुशासन के नाम पर कोई निर्णय लेने के विरोध में, कार्यसमिति की बैठक के स्थान जंतर-मंतर रोड पर बड़े प्रदर्शन का भी आयोजन हुआ। कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा के निवास-स्थान पर और कांग्रेस समिति के मुख्य कार्यालय जंतर-मंतर रोड पर भारी संख्या में पुलिस तैनात थी ताकि वहाँ जमीं भीड़ कोई उपद्रव न खड़ा कर देवे। लोगों ने लिखित आपन देकर भी यह माँग की कि प्रधानमंत्री के विरुद्ध किसी प्रकार की अनुशासन कार्रवाई न की जाय।

पास के भवन चार जंतर-मंतर रोड पर आकर अनेक संसद सदस्य भी एकत्र हो गए थे। कांग्रेस के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना घटने वाली थी और निर्णय लिया जाने वाला था।

श्री चह्वाण को उनके मध्यस्थता प्रयासों में सहायता देने के लिए प्रमुख कांग्रेसी नेता श्री सुब्रह्मण्यम भी शामिल हो गए थे। कांग्रेस कार्यसमिति की बैठक सोमवार को साढ़े छः से नौ बजे तक चली। इस तनावपूर्ण वातावरण में अंत में एकता प्रस्ताव कार्यसमिति ने स्वीकार कर लिया।

२५ अगस्त को यह एकता प्रस्ताव कार्यसमिति ने पारित कर लिया। परन्तु यह ऊपरी एकता ज्यादा दिनों तक चली नहीं। सन ६९ के नवम्बर के मध्य तक स्थिति आ चुकी थी कि कांग्रेस कार्यसमिति के २१ में से ११ सदस्यों ने यह फैसला लिया कि श्रीमती गाँधी को उनके दल विरोधी कार्यों के कारण कांग्रेस से निष्कासित कर दिया जाय। शेष सदस्यों की फखरुद्दीन अली अहमद और श्री सुब्रह्मण्यम को कार्यसमिति से ठीक मौके पर बाहर निकाले जाने पर अलग से शेष सदस्यों की बैठक प्रधानमंत्री के निवासस्थान पर हुई। इस बैठक में अधिकांश मुख्यमंत्रियों ने भाग लिया। इसमें स्पष्ट हो गया कि दल और सरकार दोनों ही में श्रीमती इन्दिरा गांधी का बहुमत है और उनके नेतृत्व को किसी प्रकार से चुनौती नहीं दी जा सकती। एकता प्रस्ताव पारित

कर लिए जाने के बावजूद कांग्रेस के स्वीकृत कार्यक्रमों पर और प्रधानमंत्री की खुले आम आलोचना श्रीमती तारकेश्वरी सिन्हा ने और एस० के० पाटिल ने की थी। इसके बाद श्रीमती इन्दिरा गांधी बम्बई गयीं। वहां पर श्री पाटिल ने उनके कार्यक्रमों में किसी प्रकार का भाग नहीं लिया, परन्तु जनता ने भारी संख्या में अपना समर्थन इन्दिरा को दिया। इसी प्रकार तमिलनाडु के दौरे में कामराज के विरोधस्वरूप जनता का भारी समर्थन इन्दिरा को मिला।

कांग्रेस अध्यक्ष श्री निजलिंगप्पा ने श्रीमती गांधी को कांग्रेस की प्राथमिक सदस्यता से वंचित कर दिया तो इसका भारी विरोध किया गया। देश के सभी स्थानों से कांग्रेसजनों ने इसके विरोध में श्री निजलिंगप्पा को तार और पत्र भेज कर अपने विचारों की जानकारी दी। परन्तु उनको कांग्रेस की प्राथमिक सदस्यता से वंचित किए जाने के बावजूद कांग्रेस के संसद सदस्यों ने उनमें अपना विश्वास भारी बहुमत से व्यक्त किया।

इसके बाद संसद में रवात कांड को लेकर कामराज पाटिल और देसाई की तिगड्डी ने केंद्रीय सरकार को उलटने का प्रयास किया परन्तु इसमें भी उनको मुंह की खानी पड़ी। संसद में इन विरोधी सदस्यों ने अपना गुट बना लिया और वे जनसंघ और स्वतंत्र तथा संसोपा की तरह उनके साथ मिल कर कार्य करने लगे।

पन्द्रहवां अध्याय

विश्व राजनेता

इस प्रकार आर्थिक नीतियों के आधार पर जनमत जागृत करने के बाद इन्दिरा ने बड़ा साहसपूर्ण कदम उठाया। संसद में कांग्रेस के केवल २२० सदस्य ही रह गए थे। यह अल्प बहुमत था। इसलिए अपने कदमों के सही या गलत होने का फैसला जनता के न्यायालय में करवाने के लिए श्रीमती इन्दिरा गांधी ने संसद के सामान्य काल के समाप्त होने से पूर्व मार्च १९७१ में चुनाव करवाए।

इन चुनावों में भारी बहुमत से चुनी जाकर प्रधानमंत्री बनीं। उनका
था देश में आर्थिक सुधारों को लागू करें जिस कारण जनता अब तक
लाभ से वंचित है उसको प्राप्त कर सके। परंतु भविष्य के गर्भ में क्या
है यह किसी को मालूम नहीं था। इन्दिरा को अभी एक और अग्नि पर
में से गुजरना था और विश्व में भारत के माथे को ऊंचा करने के बाद
देश की भीतरी समस्याओं से उलझना था।

भारत पाक युद्ध

भारत में हुए आम चुनावों के कुछ दिन बाद पाकिस्तान में स्थिति अ
विस्फोटक हो उठी थी। पश्चिम पाकिस्तान के राजनेताओं ने पूर्व पाकिस
के निर्वाचित नेताओं को उनकी आकांक्षाओं के अनुसार अधिकार नहीं दि
इस पर पूर्व बंगाल के लोगों ने पश्चिम पाकिस्तानी सत्ताधारियों के वि
असहयोग आंदोलन शुरू कर दिया। पाक अधिकारियों ने भीषण दमन
आरंभ किया।

इसका परिणाम यह हुआ कि पूर्वी बंगाल के लोग भारी संख्या में भ
में आने लगे। लगभग एक करोड़ लोग भारत में पाक सैनिकों के अत्या
से बचने के लिए आ गए। इनके आगमन से भारत के आर्थिक, सामा
और राजनैतिक ढांचे पर बुरा असर पड़ने लगा।

श्रीमती इन्दिरा गांधी ने चुनावों में अपना मुख्य नारा लगाया
"गरीबी हटाओ" परंतु इस प्रकार आकस्मिक रूप से यह समस्या आ
हुई कि सारी शक्ति उनको इसको सुलझाने में ही लगा देनी पड़ी।
समस्या को हल करने में भारत ने श्रीमती इन्दिरा गांधी के नेतृत्व में
सफलता पायी वह अद्भुत है। संसार की राजनीति में उसका महत्त्वपूर्ण स्
है और अब वह सच्चे अर्थों में अपना भाग्य विधाता बन गया है।

पाकिस्तान के क्रूर शासकों ने बंगला देश में जो अत्याचार किए उ
उत्पन्न शरणार्थी समस्या का जो भारत पर प्रभाव पड़ रहा था उससे श्रीम
गांधी ने विश्व के राजनेताओं को पूरी तरह से परिचित करवाया। उन्ह
उन देशों की यात्रा की जो पाकिस्तान को फौजी सहायता देकर अप्रत्
रूप से इस कार्य को बढ़ावा दे रहे थे। उन्होंने इन देशों के राष्ट्राध्यक्षों

बताया कि इस प्रकार नरसंहार कर रहे लोगों को किसी प्रकार की भी सहायता देना अनैतिक कार्य है। उन्होंने स्वयं ही ब्रिटेन, फ्रांस, पश्चिम जर्मनी और अमेरिका आदि बड़े देशों की यात्रा करके उन लोगों को यह जतला दिया कि शरणार्थी समस्या के कारण भारत पर एकाएक कितना भार पड़ गया है।

भारत ने अपने धैर्य और अपनी उदारता से बंगला देश की समस्या को अपने लिए मुसीबत बना लिया था। श्रीमती गांधी ने अपनी इस यात्रा में यह स्पष्ट कर दिया था कि वे किसी प्रकार की सहायता मांगने नहीं आयीं। उन्होंने तो कहा था कि मैं केवल वस्तुस्थिति को बताने आयी हूं। यह मूलतः भारत और पाकिस्तान का मामला नहीं वरन् यह तो पाकिस्तान का भीतरी मामला है। ऐसा उन्होंने कहा। परंतु यह भी स्पष्ट कर दिया कि हर हालत में भारत में आए एक करोड़ शरणार्थियों को अपने घरों को लौटना ही होगा।

उधर पाकिस्तान अपनी शरारतों से बाज नहीं आ रहा था। उसने भारत के साथ लगती सीमाओं पर अपनी सेनाएं तैनात कर दी थीं। बंगला देश के लोगों को भारत में खदेड़कर उसने एक प्रकार से अप्रत्यक्ष आक्रमण भी भारत पर बोल दिया था।

तभी २५ दिसंबर को पाकिस्तान के राष्ट्रपति याह्या खां ने घोषणा कि की दस दिन के भीतर ही हम भारत से निपट लेंगे। इस घोषणा के अनुसार दस दिन खत्म होने से पहले ही याह्या खां ने बिना किसी कारण ३ दिसंबर १६७१ को उत्तरी भारत के अनेक प्रमुख नगरों पर आक्रमण बोल दिए। दिल्ली में इन दिनों ब्लैक आउट अभ्यास जारी थे। ४ दिसंबर को भी ऐसा ही एक अभ्यास किया जाना था। परंतु जब ३ दिसंबर को अचानक ही सायरन की आवाज हुई तो लोगों को यह बताया गया कि यह अभ्यास नहीं वरन् वास्तविक युद्ध ब्लैकआउट है।

उस समय इन्दिरा दिल्ली में नहीं वरन् कलकत्ता में थीं। उनको सूचना दी गयी कि पाक विमानों ने अमृतसर, पठानकोट, श्रीनगर, अवन्तिपुर, आगरा तथा अंबाला पर हमले बोले हैं।

श्रीमती इन्दिरा तुरंत ही दिल्ली लौट आयीं। जिस समय वे पालम [illegible]

धानी अंधेरे में डूबी हुई थी । रात को लगभग बारह बजे श्रीमती इन्दि
गांधी ने राष्ट्र के लोगों के नाम रेडियो के द्वारा संदेश प्रसारित किया । उन्ह
अपने प्रसारण में जनता को बताया कि पकिस्तान के आक्रमण के बाद
भारत के पास इसके सिवाय कोई चारा नहीं कि वह इस ज्यादती भरे आक्र
का पूरी हिम्मत से फैसला करे । उन्होंने कहा कि भारत एक शांतिप्रिय
है परंतु इसका यह अर्थ नहीं कि हम अपनी आजादी की रक्षा के लिए
संघर्ष न करें ।

इस संदेश के प्रसारण के समय श्रीमती गांधी के स्वर में गहरा आ
विश्वास था । इसका कारण यह था कि स्थिति की नजाकत को देखते
उन्होंने इससे निपटने के लिए पूरी तैयारी कर रखी थी । मध्यावधि चुन
से केन्द्र में मजबूत सरकार आ जाने के बाद से राष्ट्र में एक अद्‌भुत आ
विश्वास पैदा हो चुका था । पिछले आठ मास की अवधि में उन्होंने जन
मन इस प्रकार से तैयार किया था कि वह किसी भी स्थिति का साम
ना किसी घबराहट के कर सकती थीं ।

उन्होंने अदभुत दूरदर्शिता दिखाकर इस घटना से तीन मास पहले र
साथ संधि कर भारत की स्थिति को बहुत मजबूत कर दिया था । उन्हें
ने इस कदम से विश्व के राजनेताओं को चकित कर दिया था ।

अंत में यह सर्वविदित है कि इन्दिरा को इस युद्ध में विजय मिली । यह
रे देश के गौरव का क्षण था । भारत के इतिहास में यह अनोखी घड़ी थी
रत ने बंगला देश को मुक्त करवाने में सफलता पायी थी इसका श्रेय
ारी राजनेता श्रीमती गांधी को ही था ।

और अब भारत-रत्न इन्दिरा जन-जन में दुर्गा, चंडी और महिषास्
दनी के रूप में पैठी हैं । अब सारा राष्ट्र अपनी इस नेत्री के पीछे हिम्म
समृद्धि के मार्ग पर चल रहा है ।